103180

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंतिम वार्ताएँ

R
021
136

जे० कृष्णमूर्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

K
0८१
१३६

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

103180

K
0८१
१३६

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

विषय संख्या ____ आगत नं० 103180

लेखक कृष्णमूर्ति, जे.

शीर्षक अंतिम वार्ताएं.

दिनांक	सदस्य संख्या	दिनांक	सदस्य संख्या

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
कृपया पुस्तक के ऊपर कोई निशान आदि
न लगायें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

K
०८९
१३६

पुस्तकालय

गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

वर्ग संख्या............ आगत संख्या 103180

पुस्तक-विवरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सहित ३०वें दिन तक यह पुस्तक पुस्तकालय में वापिस आ जानी चाहिए अन्यथा ५० पैसे प्रति दिन के हिसाब से विलम्ब-दण्ड लगेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

K
0८१
१३६

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

103180

K
0८१
१३६

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

विषय संख्या ______ आगत नं० 103180

लेखक कृष्णमूर्ति, जे.

शीर्षक अंतिम वार्ताएं.

दिनांक	सदस्य संख्या	दिनांक	सदस्य संख्या

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
कृपया पुस्तक के ऊपर कोई निशान आदि न लगायें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंतिम वार्ताएं

103180

जे० कृष्णमूर्ति

अनुवाद : हरीश

पुस्तकालय
पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, राजघाट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

प्रकाशक :
कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, राजघाट फोर्ट
राजघाट, वाराणसी - २२१००१

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रथम संस्करण : मार्च, १९९६

मूल्य : ७० रु०

K
0२९
13-8

मुद्रक :
शिव प्रेस,
प्रह्लाद घाट, वाराणसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय सूची

प्रस्तावना : १

वाराणसी :

बौद्धों के साथ परिचर्चा, ७ नवम्बर, १९८५ १३

बौद्धों के साथ परिचर्चा ९ नवम्बर, १९८५ २१

बौद्धों के साथ परिचर्चा ११ नवम्बर, १९८५ ३०

वार्ता १ १८ नवम्बर, १९८५ ३९

वार्ता २ १९ नवम्बर, १९८५ ४८

वार्ता ३ २२ नवम्बर, १९८५ ५६

शिविरार्थियों के साथ परिचर्चा २१ नवम्बर, १९८५ ६५

ऋषि वैली :

शिक्षकों के साथ परिचर्चा ७ दिसम्बर, १९८५ ८०

शिक्षकों के साथ परिचर्चा १७ दिसम्बर, १९८५ ९०

मद्रास :

वार्ता १ जनवरी १९८६ १०१

वार्ता ४ जनवरी, १९८६ १०६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रस्तावना

कृष्णमूर्ति की यह अन्तिम भारत यात्रा थी। सानन, स्विट्ज़रलैंड में उन्होंने पहले ही कहा था कि वहाँ अब उनकी कोई वार्ता नहीं होगी; और वहीं से उन्होंने एक मित्र को लिखा था:-

चार दिनों से मौसम अत्यन्त अद्‌भुत रहा है, प्रत्येक दिन धूप खिली रही और यह घाटी हमें अलविदा कह रही है।

सानन की अन्तिम वार्ता के दिन उन्होंने नचिकेता की कहानी पुनः सुनाई, वह बालक जिसे बहुत सारे प्रश्न पूछनें के कारण यमराज के घर भेज दिया गया था। यह एक प्राचीन कथा है, कठोपनिषद में वर्णित। पर कृष्णमूर्ति का वर्णन भिन्न था—अधिक भावप्रवण तथा एक ऐसे आदर्श-युग से जुड़ा हुआ जब आदमी अपने वचन का पालन करता था और जो कुछ वह संग्रह करता था, समय-समय पर उसका त्याग कर देता था। यह विवरण मूल कहानी में नहीं है, और न ही उसमें कल्पनाशीलता और भावप्रवणता का स्वर है।

कृष्णमूर्ति का नचिकेता असंभव प्रश्नों से भरपूर है; वह निष्कपट है, पर काफी बुद्धिमत्ता है उसमें। यमराज उसे अनेक प्रलोभन देते हैं परन्तु यह कहते हुए नचिकेता उन्हें अस्वीकृत कर देता है कि ये सारी चीजें एक न एक दिन समाप्त हो जायेगी और अंत में सिर्फ आप शेष रह जायेंगे।

सिवाय इसके कि वे लगभग इक्यानबे वर्ष के थे, कृष्णमूर्ति अपने द्वारा वर्णित नचिकेता से बहुत भिन्न नहीं थे। उनमें नचिकेता जैसी ही प्रतिभा थी जिसके फलस्वरूप वे हर अवसर को एक प्रश्न में ही नहीं बल्कि एक वरदान में बदल देते थे। नचिकेता की ही तरह उनकी मृत्यु के साथ सहज मित्रता थी और उनमें नचिकेता की निष्कपट उदारता भी थी।

थियोसॉफिकल सोसाइटी में कृष्णमूर्ति के प्रवेश के तुरन्त बाद कृष्णमूर्ति के पिता ने अपने संस्मरण में अपने पुत्र की एक ऐसी निश्छल उदारता का वर्णन किया जो कृष्णमूर्ति ने जीवनपर्यन्त नहीं खोयी : सुबह जब भिखारी घर पर आते, हमारे रिवाज के अनुसार उनके लिए एक कटोरा चावल बाहर लाया जाता, और हम उनके फैले हुए हाथ पर थोड़ा-थोड़ा रखते हुए उसे बाँट देते, और कटोरा खाली हो जाता। मेरी पत्नी कृष्ण को भिक्षा देने के लिए बाहर भेजती, और वह नन्हा बालक और अधिक चावल लेने अन्दर चला आता, कहता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि उसने एक ही आदमी की झोली में पूरा चावल उँड़ेल दिया। तब उसकी माँ उसके साथ बाहर जाती और उसे सिखाती कि प्रत्येक को ऐसे दिया जाता है।

आगे चलकर कृष्णमूर्ति के भीतर निष्कपट आदमी और ऋषि साथ-साथ रहे। सानन और ब्रॉकवुड पार्क, इंग्लैंड में वार्ताएँ देने के बाद वे अक्टूबर १९८५ में भारत आए ताकि वे अलविदा कह सकें अपने चिर-परिचित लोगों को तथा उन जगहों को जिन्हें उन्होंने बड़े यत्न से विकसित किया था। वे मानों अपने इस घर को व्यवस्थित करने भी आये थे।

उन्नीस सौ बीस के दशक में श्रीमती एनी बेसेंट ने उनके उपयोग के लिए जो जमीन खरीदी थी उसपर ऋषिवैली और राजघाट में विस्तृत शिक्षा संस्थाएँ विकसित हो चुकी थीं। इनके अतिरिक्त बैंग्लोर, मद्रास और बम्बई में भी स्कूल थे जो शैक्षणिक संदर्भ में कृष्णमूर्ति की शिक्षाओं के अनुसंधान में लगे हुए थे। ये सभी शिक्षा-संस्थाएँ 'कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया' के अंग हैं जो एक पंजीकृत संस्था है और जिसके वे अध्यक्ष थे। मद्रास में अड्यार स्थित वसन्त विहार नामक भवन फाउंडेशन का मुख्यालय है और इसी पते का प्रयोग वे अपने पासपोर्ट में घर का पता लिखने की जगह किया करते थे। इंग्लैंड और अमेरिका में भी कृष्णमूर्ति फाउंडेशन हैं एवं सुविकसित शिक्षण संस्थाएँ भी कार्य कर रही हैं।

कृष्णमूर्ति वही व्यक्ति थे जिन्होंने १९९२ में 'आर्डर ऑफ द स्टार' को भंग कर दिया था। वह एक प्रचुर सम्पत्ति वाला संगठन था जो १९०९ में थियासॉफिस्ट द्वारा उनकी खोज किये जाने के समय से उनके आसपास विकसित हो गया था। तब उन्होंने इस संगठन से जुड़ी जमीन-जायदाद का इस उद्घोषणा के साथ परित्याग कर दिया था कि "सत्य को संगठित नहीं किया जा सकता।"

वह व्यक्ति जो आध्यात्मिक संगठनों को अस्वीकार कर देता है और वह व्यक्ति जो अपने जीवन के अन्त में पाता है कि वह स्वयं अनेक संगठनों का प्रधान है, इन दोनों के बीच जो विरोधाभास है उसका समाधान बहुत पहले १९२९ में ही हो गया था जब उन्होंने 'आर्डर ऑफ द स्टार' को भंग करते हुए अपने ऐतिहासिक भाषण के अंत में कहा था :-

"परन्तु वे लोग जो समझने की कामना रखते हैं, जो उस चीज़ को पाने का प्रयास कर रहे हैं जो शाश्वत है, जिसका न आदि है न अन्त, वे एक साथ मिलकर और अधिक तीव्रता से आगे बढ़ेंगे तथा वे ऐसी चीज़ों के लिए एक ख़तरा बन जायेंगे जो अनावश्यक और अवास्तविक हैं, जो महज़ परछाइयाँ हैं। और वे लोग ध्यान केन्द्रित करेंगे, वे लोग आग की लपट बनेंगे क्योंकि उनके पास समझ होगी। ऐसे लोगों का समूह हमें निर्मित करना चाहिए, और वही मेरा प्रयोजन है। उस सच्ची दोस्ती के कारण उन लोगों के बीच परस्पर वास्तविक सहयोग होगा, न कि किसी एक का किसी दूसरे पर प्रभुत्व के कारण।"

कृष्णमूर्ति का उत्कट सरोकार—विशेषकर जब वे वृद्धावस्था की ओर बढ़ने लगे और स्वयं उनके द्वारा स्थापित संगठनों की हालत उन्हें चिन्तित करने लगी - मित्रों का एक ऐसा ही समूह निर्मित करने का था। परन्तु मित्रता के लिए उनके मानदंड कठिन बने रहे। उनका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहना था कि जहाँ ईर्ष्या और तुलना है तथा एक-दूसरे पर मिलकियत का भाव है वहाँ मित्रता का फलना-फूलना संभव नहीं है। उनका विश्वास था कि अच्छाई और नेकी ही लोगों को एक साथ बाँधे रख सकती है। और इस अच्छाई एवं नेकी के परिणाम चमत्कारिक होते हैं।

ऋषिवैली में १९८४ की सर्दियों में एक सुबह नाश्ते के समय साधारण बातचीत के बीच में उन्होंने हमलोगों से प्रश्न किया, "यदि कोई फरिश्ता आकर आपसे कहे कि इस स्थान के लिए आप जो भी चाहें माँग लें, बताइए आप क्या माँगेंगे?"

हमलोगों ने आधे मन से अनेक चीज़ों के नाम लिए—पानी, एक नूतन संस्कृति, एक नूतन मन, यह बखूबी जानते हुए कि उस पल के लिए जल्दबाज़ी में तैयार किए गए हमारे उत्तर ख़ारिज कर दिये जाएंगे और यही उन्होंने किया भी और कहा, "जब हम यहाँ १९२६ में आए तो हमारा उद्देश्य मनुष्य की संबोधि के लिए इस स्थान का विकास करना था। क्या वह यहाँ हो रहा है?"

पुनः यह एक कठिन प्रश्न था; हमने स्वीकार किया कि ऐसा नहीं हो रहा है।

"तब क्या ऋषिवैली ठीक बाहरी संसार जैसा ही है?" हमलोगों ने कहा कि छोटे रूप में वही संसार यहाँ भी है—छोटे पैमाने पर हमारे सामने भी वही समस्याएँ हैं।

"सावधानी से उत्तर दीजिए," उन्होंने कहा। बाहरी संसार का अर्थ है युद्ध, गहरा विद्वेष, कलह एवं ईर्ष्या। क्या वही सब यहाँ है? आपमें है?

हमने उत्तर दिया कि तथापि वे चीजें हममें सक्रिय नहीं है, लेकिन उनके बीज मौजूद हैं, और मौका पड़ने पर शायद हम भी वही करें।

उन्होंने हमसे पूछा कि हम उन्हें बिल्कुल समाप्त कर सकते हैं या नहीं।

हमने कहा, "यदि हम उन्हें बिल्कुल समाप्त कर लें तो क्या हम जो चाहते हैं, फ़रिश्ता हमें देगा?" उन्होंने सरलता से कहा, 'हाँ'।

कृष्णमूर्ति लंदन से २५ अक्टूबर को दिल्ली पहुँचे और उसके कुछ समय बाद ही वाराणसी के लिए रवाना हो गये। केरल के विख्यात फिल्म निर्देशक श्री जी० अरविन्दन, कृष्णमूर्ति के जीवन पर आधारित फिल्म 'द सीअर हू वॉक्स अलोन', पूरी कर रहे थे। नवम्बर के प्रारम्भ में, जब सर्दियाँ अभी शुरू ही हो रही थीं, राजघाट ने उनकी फिल्म के लिए रूपरेखा प्रस्तुत की : ऐसे दृश्यों के साथ जिनमें एक मछुआ एकांत में खड़ा गंगा के शांत जल पर अपना जाल फेंक रहा है; एक पक्षी आकाश और नदी की पृष्ठभूमि में एक वृहत वृत्ताकार पथ पर उड़ान भर रहा है तथा पीछे की ओर डूबता हुआ सूरज उस ऋषि के लिए एक प्रभामंडल निर्मित कर रहा है जिसने कहा, "मनुष्य स्वयं अपने माप की सीमा नहीं है।"

तीर्थयात्रियों के प्राचीन पथ पर कृष्णमूर्ति अरविन्दन के साथ भ्रमण करने गए। वरुणा नदी के किनारे तक पहुँचनेवाला यह पथ अब पक्की सड़क का रूप ले चुका है और इसपर निरंतर गाड़ियों का आना-जाना लगा रहता है। बाँस के बने अस्थायी पुल पर चलते हुए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृष्णमूर्ति नदी के दूसरे किनारे पर पहुँचे जहाँ की जमीन ऊबड़-खाबड़ और धूल भरी थी तथा जहाँ एक ओर गेहूँ के लहलहाते खेत थे तो दूसरी ओर था गंगा के झिलमिलाते जल का दृश्य। यहाँ से प्रारंभ हानेवाला तीर्थयात्रा पथ सारनाथ तक चला जाता है जहाँ २५०० वर्ष पहले बुद्ध ने अपना पहला प्रवचन किया था। वापस लौटते समय जब कृष्णमूर्ति ने गाँव के एक नाविक के साथ चलते हुए पुल पार किया तो वह दृश्य अरविन्दन के कैमरे में कैद हो गया। वर्षा-ऋतु में बाढ़ के दौरान यह पुल समाप्त हो जाता है तो स्थानीय गाँव के ये नाविक ही अपनी नावों के द्वारा लोगों तथा उनके सामान को नदी के पार पहुँचाते हैं।

एक दूसरे पथ पर भी वे प्रतिदिन टहलते थे। उनके पैर असमर्थ होने लगे थे, फिर भी वे स्कूल कैम्पस के घुमावदार रास्तों पर चलते हुए ऐम्फीथियेटर से गुजरते जहाँ वसन्त कॉलेज की छात्राओं ने हाल ही में बुद्ध के जीवन पर आधारित एक नाटक का मंचन किया था। जहाँ वह रास्ता समाप्त होता है वहाँ से सीधे नीचे की ओर सीढ़ियाँ जाती हैं। नीचे एक वृत्ताकार खेल का मैदान है जिसके एक ओर तार के घेरे के उस पार एक मज़ार है जहाँ उसकी देखभाल करनेवाला रहता है। सीढ़ियों के नीचे से शुरू होनेवाला तथा ढलान पर बना संकीर्ण रास्ता ब्रिटिश सेना के अफ़सरों के कब्रिस्तान की ओर जाता है। इस कब्रिस्तान का लंबे समय से उपयोग नहीं हो रहा है। यहाँ पर ऐसे लोगों के रहने के लिए कॉटेज बनाने की योजना है जो कृष्णमूर्ति की शिक्षाओं का गंभीरता से अध्ययन करने के लिए आना चाहते हैं।

मित्रों के साथ कृष्णमूर्ति खेल के मैदान के अनेक चक्कर लगाते थे, साथ ही अनेक विषयों पर बातें भी होती रहती थीं, मुख्य रूप से उन प्रश्नों पर जो उस समय उनके लिए सर्वाधिक महत्व के थे जैसे :- उन सभी संस्थाओं का क्या होगा जिनकी उन्होंने स्थापना की थी, क्या उन्हें कोई एक साथ रख पाएगा या वे बिखर जाएंगी? विभिन्न देशों में स्थित कृष्णमूर्ति फाउंडेशन का भविष्य क्या है? और हर बार मैदान का एक चक्कर पूरा करने के बाद वे मज़ार की देखभाल करनेवाले सज्जन का अभिवादन करते, वे नहीं चाहते थे कि वे स्वयं को उपेक्षित एवं अलग-थलग महसूस करें।

खड़ी चढ़ाई वाली सीढ़ियों से होकर वापसी यात्रा कृष्णमूर्ति के मित्रों के लिए चिंता का कारण थी, उन्हें भरोसा नहीं होता कि कृष्णमूर्ति बिना गिरे ऊपर चढ़ पाएंगे। एकबार एक व्यक्ति, एक महिला, ने उन्हें सहारा देने के लिए हाथ बढ़ाया और उन्होंने अपने सहारे के लिए चिर-परिचित बाँके अंदाज में उसका हाथ थाम भी लिया, इस उक्ति के साथ कि वे उसका हाथ अपने हाथ में लेना चाहते हैं परंतु उन्होंने आगे कहा :- 'मैं किसी पर भी आश्रित होना नहीं चाहता'। यह अन्तिम बात एक ऐसे बल और एक ऐसी दृष्टि के साथ कही गई जिसने उस महिला को उस अज्ञात मौन का आभास कराया जो उसके लिए आगे चलकर आनेवाला था।

एक दिन कृष्णमूर्ति ने एक बात कही, अपने सांध्यकालीन भ्रमण के दौरान नहीं बल्कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मकान की ऊपरी मंजिल पर स्थित अपने कमरे में। उन्होंने कहा कि जो पवित्र स्थान होते हैं वे वस्तुतः सीखने के स्थान हैं और इसलिए अपनी परिभाषा के अनुसार वे धार्मिक-कर्मकाण्डों, गिरजाघरों, मंदिरों और मस्जिदों की सीमाओं परे हैं। उन्होंने कहा कि वह स्थान पवित्र माना जाएगा जहाँ तीन विशेषताएँ मौजूद हैं - वहाँ रहनेवाले लोगों में सच्ची धार्मिकता हो, बाहर से लोग वहाँ सत्य की खोज में आते हों, और उस स्थान में जीवन धारण करने का सामर्थ्य हो।

राजघाट की इस बार की शीतकालीन यात्रा के दौरान कृष्णमूर्ति के मन पर श्रीमती एनी बेसेंट की यादें हावी रहीं। ६ नवम्बर को थियोसॉफिकल लॉज, कमच्छा द्वारा उन्हें आमंत्रित किया गया। यह आमंत्रण उन्होंने स्वीकार कर लिया। वे श्रीमती बेसेंट के पुराने घर 'शांतिकुंज' गये। अपराह्न काल में जब धूप बाहर और भीतर फैली हुई थी, वे उस पुराने घर में घूमते रहे। वे उस प्रतिष्ठित चौकी पर भी बैटे जहाँ बैठकर श्रीमती बेसेंट कार्य करती थीं और दिन के समय आराम करती थीं। श्रीमती बेसेंट और कृष्णमूर्ति को जो लोग उन प्रारम्भिक दिनों में जानते थे उनके लिए यह एक भावुक-क्षण था। ऐसे व्यक्ति जो उस समय जीवित थे उनके लिए आज का दिन परम आशीष का दिन था : ४५ वर्षो के अंतराल के वाद आज पुत्र अपनी माँ के घर आया था - शायद अलविदा कहने के लिये। पर जब किसी ने कृष्णमूर्ति से पूछा कि यह जगह उन्हें याद है या नहीं उनका सरल उत्तर था, "बहुत दिन हो चुके हैं परन्तु ऐसा लगता है कि यहाँ निश्चय ही रहा हूँ।"

दीपावली का त्यौहार १६ नवम्बर को आया। कृष्णमूर्ति ने वह शाम अपने मित्रों के साथ बिताई और उनके घर के सामने जो आतिशबाज़ी हो रही थी उसे वे देखते रहे। आतिशबाज़ी का वह प्रदर्शन अहाते के दक्षिणी छोर पर स्थित उस हिस्से पर हो रहा था जहाँ से गंगा नदी की ओर ढलान शुरू होती है। फुलझड़ी और अनार अमावस के अंधेरे आसमान में रंग-बिरंगे सितारे बिखेर रहे थे और कुछ दूरी पर वाराणसी शहर रोशनी से जगमगा रहा था। कुछ देर बाद कृष्णमूर्ति सीढ़ियों के ऊपर अपने घर की बालकनी में आकर बुझे हुए दीयों को फिर से जलाने लगे और वहाँ से दिखाई पड़नेवाले दृश्य की प्रशंसा करने लगे। वह एक भव्यता से भरी संध्या थी जब राजघाट ने मानो एक दिव्यता का आवरण ओढ़ रखा था।

और भी मनोरंजन कार्यक्रम थे - मंदिरों से जुड़े स्कूलों के स्थानीय ब्राह्मणों द्वारा और वाराणसी महाराजा के पंडितों द्वारा वैदिक-मंत्रों के गान; शहनाई और संतूर पर संगीत, आदिति मंगलदास द्वारा घंटे भर तक कत्थक नृत्य की प्रस्तुति।

७ नवम्बर को कृष्णमूर्ति ने बौद्ध-विद्वान-मण्डली, संस्कृत तथा तिब्बती विद्वानों के साथ विवेचना का क्रम प्रारम्भ किया जो सत्तर के दशक के प्रारम्भ से ही उनके इर्द-गिर्द एकत्र होने लगे थे। ये लाग उन विद्वानों की लम्बी परम्परा के अंग थे जिन्होंने विद्वतापूर्ण गतिविधियों द्वारा, अनवरत दार्शनिक बहस और आन्तरिक खोज द्वारा, हजारों वर्षों से एक धार्मिक परम्परा को अक्षुण्ण रखा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंडित जगन्नाथ उपाध्याय उन्हीं में थे। हम उन्हें पंडित जी कहते थे। वे काल चक्रतन्त्र के आलोचनात्मक संस्करण तैयार करने में व्यस्त थे। यह महायान मूलग्रन्थ है जिसमें बोधिसत्व मैत्रेय के उपदेशों का वर्णन है। नौवीं और ग्यारहवीं शताब्दी के बीच किसी काल में रचित यह ग्रंथ प्रज्ञा की बहुत ही पुरानी परम्परा की विवेचना करता है, जिसे पंडित जी ने मनुष्य की पूर्वज-परम्परा कहा था। पंडित जी के वर्णन ने कृष्णमूर्ति में एक अनुवचन प्रतिध्वनित किया और उन्होंने उस मुहावरे को संशोधित कर कहा 'अन्तरदृष्टि की पूर्वज-परम्परा'

सारनाथ स्थित तिब्बती संस्थान के रिन्पोचे सन्दोंग तथा प्रोफेसर कृष्णनाथ एवं प्रोफेसर रामशंकर त्रिपाठी, जो स्थानीय शिक्षण संस्थानों से जुड़े हैं, भी उस अवसर पर उपस्थित थे।

विद्वानों की इस सभा के समक्ष कृष्णमूर्ति ने दो प्रश्न उठाए : "क्या भारत में, संसार के इस भाग में कुछ परम पवित्र है, कुछ ऐसा जो लम्बी अवधि तक टिकाऊ रहे?" और, 'यदि यहाँ वह है तो संसार का यह भाग इतना भ्रष्ट क्यों है?'

कृष्णजी ने दोनों प्रश्न रखे और उनका उत्तर दिया। उन्होंने पहले प्रश्न का उत्तर विवेचना के अन्त में दिया, जबकि अनेक मसले जो उठाए गए थे अलग किए जा चुके थे और सभा शांत बैठी थी। तब पंडितजी ने हिन्दी में प्रश्न किया, "आपने यह विवेचना इस प्रश्न के साथ शुरू की थी, 'वह क्या चीज़ है और क्या वह इस देश में है?" क्या यही वह चीज़ है?" इसके बाद वहाँ एक लम्बा मौन रहा जिस अवधि में कृष्णमूर्ति कुछ भी नहीं बोले और एक दुभाषिये को पंडितजी से कहते सुना गया 'हाँ।' तब कृष्णमूर्ति ने कहा, "देखिए, यह कठिन नहीं है। यह सरल है।"

सामान्य निरीक्षण के आधार पर कृष्णमूर्ति ने दूसरे प्रश्न का उत्तर दिया : 'स्वार्थ एक ऐसा दरवाजा है जो दूसरे को बाहर कर बन्द हो जाता है।' कृष्णमूर्ति के लिए स्वार्थ की धारणा बहुत ही विस्तृत एवं लचीली थी; इसके जाल में वे सभी मनःस्थितियाँ थीं जो संगठित धर्म के पीछे होती हैं।

नवम्बर ११ को कृष्णमूर्ति ने एक तीसरा प्रश्न उठाया : 'कहाँ पर स्वार्थ समाप्त होता है और दूसरे की शुरुआत होती है?' और यद्यपि वे कम से कम दोबारा विवेचना के क्रम में इस प्रश्न पर लौट कर आए, उन्होंने इसका उत्तर नहीं दिया। एक अनन्त शाश्वत प्रश्न की तरह उन्होंने इसे छोड़ दिया, एक आशंका रख दी उन्होंने जो गंभीर धार्मिक खोज का केन्द्र बिन्दु है।

कृष्णमूर्ति ने श्रोताओं से ९ नवम्बर को पूछा, "क्या पहले से ही यहाँ कुछ ऐसा है, जो यदि वास्तव में है, तो उसे जानने के लिये हमें अपना सम्पूर्ण मन और हृदय लगाना है?" वे उस व्यक्ति की भाँति बोल रहे थे जिसने ठीक वही किया हो। मन और हृदय लगा दिया हो, और उस पावन को अक्षुण्ण रखने में अपना सम्पूर्ण जीवन लगा दिया हो। निश्चय ही हमें यह याद रखना चाहिए कि कृष्णमूर्ति के लम्बे जीवन की शाम नजदीक आ रही थी, और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह कि वे ऐसे व्यक्तियों को सम्बोधित कर रहे थे जिन्होंने अपना जीवन प्राचीन धार्मिक परम्परा को सुरक्षित रखने में लगा दिया था, यद्यपि उनका तरीका बिल्कुल भिन्न था। कृष्णमूर्ति के लिए सुरक्षित रखने का वह भाव पर्याप्त नहीं था। उन्होंने तो समस्त संगठित धर्मों की वाह्य गतिविधियों से अपना मुँह फेर लिया था - उनके रुढ़मतों, गिरजाघरों, संतों, पूजा प्रणालियों, पवित्र ग्रन्थों और गुरूओं से वे विमुख थे - १९२९ से ही, जब उन्होंने लिखा था :

"जब कृष्णमूर्ति की मृत्यु होगी, जो अवश्यम्भावी है, तब आप नियम बनाना शुरु कर देंगे, क्योंकि वह व्यक्ति, कृष्णमूर्ति, आपके लिए सत्य के प्रतिनिधि थे इसलिए आप एक मंदिर बना लेंगे, तब आप धार्मिक आयोजन करना आरम्भ कर देंगे, आप आरम्भ कर देंगे सूत्र बनाना, रूढ़मत बनाना, धारणाएँ, सम्प्रदाय और दर्शन पद्धतियाँ निर्मित करना। यदि आप मेरे नाम बड़े फाउंडेशन बनाएंगे, व्यक्ति के नाम पर, तो आप उस घर में, उस मंदिर में बंध जाएंगे, तब आपको एक दूसरा शिक्षक बुलाने की आवश्यकता होगी जो आपको उस मंदिर से मुक्त कराएगा। पर मानव मन ऐसा है कि आप उसके इर्द-गिर्द भी एक दूसरा मंदिर बनवा देंगे, और इसलिए यही प्रक्रिया सदैव चलती रहेगी।"

प्रथम दो सार्वजनिक वार्ताएँ १८ तथा १९ नवम्बर को राजघाट में हुईं। "आप यहाँ क्यों आए हैं," कृष्णमूर्ति ने अपने श्रोताओं से पूछा; तब उन्होंने कहा कि "आपके समक्ष काल्पनिक, सैद्धान्तिक प्रश्न रखने का हमारा कोई इरादा नहीं अथवा गुरू बनकर आपकी सहायता नहीं कर रहे हैं। आप लोग हमें अपना मित्र मानें, जिसके साथ आप दैनिक जीवन की समस्याओं पर बातें कर रहे हैं।"

सार्वजनिक प्रश्न-उत्तर सत्र में किसी ने पूछा कि आपके शिक्षण को बिना किसी तोड़-मरोड़ (डिस्टॉरशन) के किस प्रकार जीवन्त (सस्टेन्ड) रखा जा सकता है। कृष्णमूर्ति ने प्रश्न को जज़्ब कर लिया और कहा, उनकी शिक्षाओं को विकृत बना दिया जाएगा अथवा नहीं, आप पर निर्भर करता है, किसी और दूसरे पर नहीं। यदि इन बातों का अर्थ शब्दों के सिवाय कुछ भी नहीं, तो ये भी उसी रास्ते जाएंगी जैसे और। यदि आपके लिए इसका अर्थ कुछ अत्यन्त गहरा है, निजी तौर पर आपके लिए, तो वह विकृत होगी ही नहीं।" अनवरत और बिना किसी समझौते के कृष्णमूर्ति अन्त तक लोगों में विश्वास करते रहे, उनकी इस क्षमता में कि वे अपने बोधमय हृदय और मन में उनके शिक्षण को जीवन्त बनाये रखेंगे।

जनवरी २२ को, अन्तिम वार्ता के समापन के समय उन्होंने अपने श्रोताओं से कहा कि वे उनके पाँव न छुएँ पर वे आकर उनके हाथ पकड़ सकते हैं। और बड़ी देर तक वे मौन बैठे रहे। हमलोगों के लिए वह एक पूर्व सूचना (मौन भविष्यवाणी) थी; एक संकेत था कि वे पुनः यहाँ नहीं आयेंगे।

जब कृष्णमूर्ति नवम्बर में ऋषिवैली आये हमें पता लग गया कि उनके स्वास्थ्य में गिरावट आ रही है। हमने आशा की कि ऋषिवैली में उनका स्वास्थ्य बेहतर हो जायेगा, जैसा पूर्व में प्रायः हुआ है। पर यह हो नहीं पाया। पहले दिन हमलोगों ने प्राचीन देवी गंगाम्मा के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मंदिर की ओर टहलने का निश्चय किया। इसी रास्ते में हमलोगों के बगीचे हैं—सब्जी के, और रास्ते में ही एक बरसाती नदी का सूखा-तल (बेड़) पड़ता है। लेकिन उस सूखी नदी के पार इमली के बगीचे तक वे नहीं जा सके। उस इमली के बगीचे के पार्श्व में वृत्ताकार पहाड़ियों तक सभी दिशाओं में फैली घाटियाँ हैं, शाम के धुँधले प्रकाश में उनकी दीप्ति बैंगनी हो जाती है। यह ऐसा दृश्य था जिसको निहार कर वे प्रायः विस्मित हो जाते।

उसके पश्चात् हमलोग मुख्य सड़क द्वारा आसान रास्ते से टहलते हुए घाटी के पास तक गए। इन टहलान की वापसी पर एक बार वे बड़े ही प्रफुल्लित थे और उन्होंने इस जगह की पवित्रता का वर्णन किया।

जैसे-जैसे समय बीतता गया उनके टहलने में कमी आती गई और चिन्तित कर देने वाली गति से उनका वजन घटने लगा। पुराने गेस्टहाउस में ऊपर अपने कमरे में वे प्रसन्न रहते। गोपालू और परमेश्वरन वहाँ मुस्तैद रहा करते थे, वर्षों तक ये लोग उनके रसोइये थे। वे दोपहर के भोजन (लंच) पर लोगों को आमंत्रित करते और (हूपी) हुदहुदी चिड़िया से गपशप करते। उन्होंने उससे दोस्ती कर ली थी। अपने कमरे के दरवाजे के बाहर खड़े होकर उन्हें किसी से कहते हमने सुना, "आप और आपके बच्चे यहाँ आएं, निश्चय ही स्वागत है। लेकिन मैं आपको यकीन दिलाता हूँ कि आप इसे पसन्द नहीं करेंगे। कुछेक दिनों में ही मैं जा चुका रहूँगा, कमरे में ताला लगा दिया जाएगा, खिड़कियाँ बन्द कर दी जाएंगी, और आप बाहर नहीं जा पाएंगे।"

कमरे में प्रवेश करने पर आप चिड़िया को देख सकते थे। चिन्तित, खिड़की के समीप, शांतमन स्पाथोडिया वृक्ष की टहनी पर बैठी अपनी कलगी फैलाए वह कृष्णमूर्ति की बातें सुन रही थी। वे अपने बिस्तर में लेटे नपे-तुले स्वर में चिड़िया से बातें कर रहे थे। कृष्णजी ने स्पष्ट किया कि चिड़िया उनकी आवाज की अभ्यस्त हो गयी है और ग़ौर से सुनना पसन्द करती है। प्रायः जब उनके कमरे में कारपेट पर हम छोटे समूह में बैठते, तो चिड़िया झपट कर नीचे चली आती, खिड़की के शीशे पर चोंच मारती और प्रायः हल्ला मचाती थी और कृष्णमूर्ति उसे पुचकारते, "आ गया मेरा दोस्त, अथवा मेरे दोस्त, अभी नहीं।"

दूसरे अवसर पर, जैसे ही हम उनके कमरे में जा रहे थे, हमने उन्हें कहते हुए सुना, "अच्छा तुम्हारी पुत्री का नाम सुजाता है। क्या सुजाता बुद्ध की पत्नी नहीं थी?" मैंने सोचा कि वे हूपी से गपशप कर रहे हैं, पर वे तो बातें कर रहे थे गोपालू से, जो उन्हें बता रहा था कि उसके घर कन्या का जन्म हुआ है और उस नन्हीं कन्या का नाम सुजाता है।

गिरते हुए स्वास्थ्य के बावजूद कृष्णमूर्ति स्कूल के बच्चों और शिक्षकों से बातें करते रहे। बच्चों से उन्होंने भय के संबंध में बातें की और यह कि भय से मुक्त होना कितना महत्वपूर्ण है। शिक्षकों से उन्होंने अच्छाई और सम्पूर्ण पावनता के साथ अच्छाई के संबंध पर बातें की। जब अच्छाई अखण्डता के साथ जुड़ी होती है तो वह अतीत का, किसी से लिए गये अभिमत का अंग नहीं रह जाती। वह निष्कर्ष नहीं अपितु एक खोज होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनकी यात्रा के अवसर पर ही, भारत और विदेशों में स्थित विभिन्न कृष्णमूर्ति स्कूलों के शिक्षकों का अन्तरराष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित किया गया था। ब्रॉकवुड पार्क, इंग्लैण्ड और ओक ग्रोव स्कूल, ओहाई, कैलिफोर्निया से शिक्षक आये थे। अपने तरह का यह पहला सम्मेलन था, और प्रारम्भ में कृष्णमूर्ति इसमें भाग लेने से उदासीन प्रतीत हो रहे थे। पर जब हमने सम्मेलन की शुरूआत कर ही दी तो कृष्णमूर्ति अप्रत्याशित रूप से प्रायः आए। उन्होंने आशंकायें प्रकट कीं, हमें उकसाते रहे, प्रेरित करते रहे, मुदित करते रहे, गंभीर बनाते रहे।

ऋषिवैली में उनकी जो अन्तिम वार्ता हुई (उन्होंने उसे अन्तिम 'शो' कहा) वह पूर्वनिर्धारित नहीं थी। वहाँ के अध्यापकों में से एक के प्रश्नों ने वार्ता की आवश्यकता का भाव जगाया। जो प्रश्न वे सदैव पूछते रहे, अपने जीवन की संध्या में भी उन्होंने उन प्रश्नों का पूछना जारी रखा : अच्छाई क्या है? अच्छाई में पुष्पित होना क्या है? उन्होंने यह भी पूछा : जीवन का मूल क्या है? सर्जन क्या है?

दिसम्बर २२ को कृष्णमूर्ति ऋषिवैली से मद्रास के लिए विदा हुए। वहाँ कुछेक दिन उनका विश्राम हुआ, और तब शनिवार २८ दिसम्बर को पहली सार्वजनिक वार्ता हुई। स्पष्टतः वह एक दिव्य परीक्षा थी; वे पूर्णतया आश्वस्त नहीं थे कि क्या पूरी वार्ता वे कर भी पाएंगे। अभिव्यक्ति में उनकी सामान्य स्पष्टता की कमी थी, पर उसके बाद वे प्रफुल्लित थे। स्वयम् में पुनर्नवीन ऊर्जा प्रवाह का एहसास करते हुए वे उत्सुक लगे कि पूर्वनिर्धारित प्रश्न-उत्तर का सत्र शुरू किया जाए। पर उस सत्र को रद्द (कैन्सिल) कर दिया गया ताकि उनकी ताकत बची रहे, और घोषित किया गया कि आगामी बुधवार को एक अतिरिक्त सार्वजनिक वार्ता होगी।

उनका शारीरिक तापक्रम ऊँचा हो गया। चिकित्सक बुलाये गए। चूँकि बुखार का कोई तात्कालिक कारण नहीं पाया गया इसलिए निदानकारी जाँचों की अनुशंसा की गयी। कृष्णमूर्ति ने निश्चय किया कि कैलिफोर्निया में उनके एक सुपरिचित और विश्वस्त डाक्टर की निगरानी में ये जाँच करायी जाए। बम्बई में उनकी वार्ताओं का आयोजन रद्द कर दिया गया तथा ओहाई में उनकी वापसी तिथि को और पहले कर दिया गया। उनकी घटती ऊर्जा मद्रास की वार्ताओं की ओर ही लगी थी और कृष्णमूर्ति अधिक समय अपने कमरे में ही गुजारते। वहाँ इसबार उन्होंने हुदहुद (हूपी) चिड़िया की एक नयी जोड़ी से दोस्ती करने का प्रयास किया, पर वे असफल रहे। एकान्त नीरवता में वे प्रायः गीत गुनगुनाते। उनके कमरे के बाहर बरामदे से हम ध्यान से सुना करते, और उनकी आवाज की लयबद्धता हमें खींच लेती। गायन की संस्कृत ध्वनिविधि का उपयोग वे करते थे, भाव को अलग करते हुए एवं ध्यान की पूरी एकाग्रता लयस्वर पर होती। लेकिन शब्द थे—'टेनीसन' की अन्तिम कविता 'क्रॉसिंग द बार' के। बहुत बाद में जब हमने उन पंक्तियों के अर्थ पर मनन किया तो पाया कि वे शब्द कुछ गहरा अर्थ बताते थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अस्ताचल और साँझ का तारा
और मेरे लिए वह स्पष्ट बुलावा
औ कगार का कोई रूदन स्वर नहीं हो
जब मैं चलूँ सागर की ओर
पर सागर का वह शक्तिमान
गतिमान ज्वार, शायद सोया है,
आवाज और फेन की जगह नहीं उसमें
वह जो बाहर से खिंच कर
असीम गहराइयों में से घर आता है पुनः।

रविवार ४ जनवरी को सार्वजनिक वार्ता पूरी कर कृष्णमूर्ति ने अपना ध्यान फाउंडेशन के भविष्य चिन्तन पर लगाया। फाउंडेशन उनके नाम से स्थापित किये गए थे। वे उस प्रक्रिया को बहुत ही अच्छी तरह समझते थे — धार्मिक नेताओं के मरने पर धर्मों की क्या गति होती है; शिक्षक में देवत्वरोपण; उनकी शिक्षाओं का संशोधन, उत्तराधिकार की उधार मर्यादा हेतु कोलाहल। ये सारी बातें उनके लिए उद्वेलन का विषय थीं। संगठित धर्म का खण्डन और परित्याग करने के बहुत बाद, अब उनके सामने अन्तिमकाल में उन्हीं के नाम से जुड़ा हुआ संगठन था। क्या किया जाना चाहिए? क्या फाउंडेशन को विघटित कर दिया जाए? शिक्षण के प्राधिकारी के रूप में और शिक्षक के रूप में कोई व्यक्ति स्वयम् को ही स्थापित न कर पाए, क्या इसे रोकने का कोई उपाय है? फाउंडेशन के जो सदस्य वहाँ एकत्र थे उनके सामने उन्होंने इन प्रश्नों को रखा।

उपस्थित सदस्यों में से कुछ लोग फाउंडेशन को विघटित कर देने के पक्ष में थे। दूसरों ने बताया कि ऐसा करने में कानूनी पेचीदगी है। कृष्णमूर्ति सारा जीवन आदमी को मुक्त कराने के कार्य में लगे रहे। अब बारी हमारी थी कि हम उन्हें मुक्त कर दें। बहुत वर्षों के दौर में पहली बार उनके प्रश्न उन्हीं से पूछे गये। अगले दिन, कृष्णमूर्ति की इच्छा को स्वीकारते हुए कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया की नियमावली (रूल्स एण्ड रेगुलेशन्स) में निम्नलिखित शर्त (क्लॉज) अनुच्छेद में जोड़ी गयी :

"फाउंडेशन अथवा इसकी संस्थाओं में से कोई भी संस्था अपने तत्वाधान में, अथवा इसके सदस्यों में से कोई सदस्य स्वयम् को कृष्णमूर्ति की शिक्षाओं के प्राधिकारी के रूप में स्थापित नहीं करेगा। यह कृष्णमूर्ति की घोषणा के अनुसार है कि कहीं भी कोई स्वयम् को उन पर तथा उनकी शिक्षा पर प्राधिकार प्राप्त व्यक्ति के रूप में स्थापित नहीं करेगा।"

बैठक समाप्त होने के पहले अन्तिम बार कृष्णमूर्ति ने फाउंडेशन को औपचारिक रूप से संबोधित किया। यह संबोधन हुआ पंडित जगन्नाथ उपाध्याय के साथ बातचीत (डायलॉग) के रूप में।

उनके पास निजी सामान बहुत थोड़े थे। वे उन्हें बाँटने लगे — कुछ कपड़े, दो आलमारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(कबर्ड) जो उनके लिए तथा भाई नित्या के लिए श्रीमती एनी बेसेन्ट की भेंट थी ; कुछ छिटपुट चीजें, अच्छी तरह प्रयोग किया गया एक शब्दकोष।

प्रशान्त सागर पार करने की वापसी हवाईयात्रा बड़ी ही कष्टसाध्य थी, उसकी तैयारी में अन्तिम दिन आराम के लिए सुरक्षित रखा गया। कृष्णमूर्ति अपने कमरे में वापस चले गए, पंडित उपाध्याय ने बुद्ध के अंतिम क्षणों की कथा उन्हें दुबारा सुनाई, और हमलोग सुनते रहे : कुशीनारा के बाहरी भाग में दो साल वृक्षों के मध्य में अपने शिष्यों और नगर के लोगों से घिरे बुद्ध लेटे थे। जब अन्त निकट लगा तो शिष्यों ने लोगों से पीछे हट जाने का अनुरोध किया ताकि बुद्ध एक बार पुनः खुले आकाश को निहार सकें। उस क्षण जब आकाश की रिक्तता निर्वाण की रिक्तता में विलीन हुई बुद्ध जा चुके थे।

पाली और संस्कृत की प्राचीन मौखिक परम्परा में तल्लीन, अत्यन्त सुकोमल स्वर में पंडित जी ने कृष्णमूर्ति के संबंध में एक लम्बी कविता का पाठ किया और इसी के साथ उनकी बात समाप्त हुई। कविता के सस्वर पाठ की समाप्ति पर पंडितजी ने सदस्यों में से एक को थोड़ा अलग ले जाकर निर्देश दिया : "उन्हें कहिए कि मृत्यु को आंमत्रित न करें। इन शब्दों को उन्हें तीन बार सुनाइए : संसार में अभी भी अकथ पीड़ा है। ऐसे लोग हैं जिन्हें आपकी सहायता की आवश्यकता है। आपका कार्य पूरा नहीं हुआ है।"

वे ऊपर कृष्णमूर्ति के कमरे में गयीं पर वे शब्द उनके गले में ही रुक गए, वे नहीं बोल सकीं। कृष्णमूर्ति ने उनकी परेशानी देखी, और फिर अपनी दवा मंगायी कि कष्ट के ये क्षण गुजर जाएं। वे बोतल से दवा नहीं ढाल पाए क्योंकि उनके हाथों का कम्पन तेज हो गया था। इन सदस्या का हाथ भी उस समय असन्तुलित था। किसी आधुनिक सुजाता की भाँति, उन सदस्या का एक अस्थिर विश्वास था कि यदि बिना थोड़ा भी छलके दवा कृष्णमूर्ति को मिल जाए तो उनकी शक्ति पुनः लौट आयेगी, लेकिन अगर दवा का एक कतरा भी छलक गया तो उसके भयंकर दुष्परिणाम होंगे। यह दुश्चिन्ता का एक और क्षण था, पर यह भी आराम से गुज़र गया।

जब कुछ शक्ति आई ठीक निर्देशानुसार उन्होंने पंडितजी का संदेश पहुँचा दिया। कृष्णमूर्ति ने कहा कि वे मृत्यु को आमंत्रित करना नहीं चाहते, पर कह नहीं सकते कि यह शरीर कब तक चल सकेगा — ६ किलोग्राम वजन तो वे पहले ही खो चुके हैं। कुछ और कमी आई तो आप जानते हैं क्या होगा ? उन्होंने स्पष्ट किया "मैं चल नहीं पाऊँगा।" यदि ऐसा हुआ और मैं कोई वार्ता नहीं कर पाया तब शरीर समाप्त हो जाएगा। इसके अस्तित्व का प्रयोजन तो केवल वही था।

उस दिन कृष्णमूर्ति को देखने बहुत से लोग आए, क्योंकि बात फैल चुकी थी कि वे बीमार हैं और शायद वापस नहीं आ पाएं। सबों को व्यक्तिगत रूप में एक-एक कर देख पाना उनके लिए बेहद थका देने वाली बात थी, पर उन्हें सम्मान देने बहुत से लोग दूर-दूर से आए थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शाम को अड्यार सागर तट (बीच) पर उनका अन्तिम भ्रमण हुआ। बहुत पहले इसी स्थान पर उनकी खोज हुई थी। भ्रमण की समाप्ति पर कृष्णमूर्ति ने चारों दिशाओं को अलविदा कहा, देर तक चारों दिशाओं में पूरी तरह घूमकर अभिवादन पूरब को, दक्षिण को, पश्चिम को, उत्तर को - वही पावन विदाई जिसे प्राचीनकाल में हस्ति-परिक्रमा कहा गया है।

— राधिका हर्ज़बरगर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बौद्धों के साथ परिचर्चा

७ नवम्बर, १९८५

परिचर्चा में भाग लेनेवाले एक वक्ता (व०) : जहाँ तक मैंने समझा है, आप कहते हैं कि जीवन का कोई प्रयोजन अथवा लक्ष्य नहीं है और इसलिए कहीं पहुँचने के लिए कोई मार्ग नहीं है। अतः हर व्यक्ति का सामना स्वयं प्रत्येक क्षण से हो रहा है। यदि उस क्षण को समझना है तो वस्तुतः वही क्षण कर्म, ज्ञान और आकांक्षा का क्षण है। क्या ऐसा समझना सही है?

कृष्णमूर्ति (कृ०) : मैं कहना चाहूँगा कि हम इसकी चर्चा नहीं कर रहे हैं कि क्या सही है या क्या सही नहीं है। महानुभाव, यह एक ऐसा विषय है जिसके लिए बहुत अधिक जाँच-पड़ताल की आवश्यकता है।

व० : अगर आप कहते हैं कि यह प्रश्न सही या गलत का नहीं है, तब तो आप उन लोगों के लिए एक समस्या पैदा कर रहे हैं जो इस विषय को समझना चाहते हैं।

कृ० : नहीं, इसके विपरीत मैं तो यह कह रहा हूँ कि पण्डित जी, मैं एवं हम सभी लोग जाँच करने जा रहे हैं। मैं नहीं कहता—वह सही है, यह ग़लत है। बल्कि हम साथ-साथ इस विषय की छानबीन करने जा रहे हैं।

व० : भला ऐसा कोई आदमी भी हो सकता है जो कि यह फैसला न करे कि क्या सही है और क्या गलत है, क्या अच्छा है अथवा क्या अच्छा नहीं है?

कृ० : हम इस विषय पर आएँगे। मैं ऐसा नहीं कहता कि अच्छाई जैसी कोई चीज़ नहीं होती। अच्छाई स्वयं वस्तुतः आप की अच्छाई और मेरी अच्छाई से पूरी तरह भिन्न हो सकती है। इसलिए आइए हम लोग यह पता लगा लगाएँ कि क्या सचमुच अच्छा है—न आपका अथवा मेरा, बल्कि वह जो कि वस्तुतः अच्छा है...।

व० : अपने आप में।

कृ० : हाँ।

व० : आप किसी व्यक्ति के वस्तुओं को देखने के तरीक़े अथवा उसके दार्शनिक दृष्टिकोण में एक अस्थिरता पैदा कर रहे हैं।

कृ० : हाँ, परंतु अगर आप स्थिरता से शुरू करें तो आप का अंत अस्थिरता पर ही होगा।

व० : आपका यह कथन बहुत विरोधाभासी लगता है कि यदि मैं स्थिरता से आरंभ करूँ तो मेरा अंत अस्थिरता पर होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृ० : सचमुच। यही दैनिक जीवन है। अतः महानुभाव, आपने ऐसा सवाल उठाया जिसके भीतर समय, विचार और कर्म निहित है, तो क्या हम पहले इस सवाल पर आएँ कि समय क्या है? बौद्धों के अनुसार नहीं, न ही किसी शास्त्र के अनुसार, बल्कि समय अपने आपमें क्या है? वे इसको एक तरह से समझाएँगे, वैज्ञानिक कहेंगे कि यह छोटे-छोटे कार्यों और विचारों की एक श्रृंखला है। संभवतः आप कहें कि समय जीना है अथवा विचार ही समय है। ठीक? इसलिए बुद्ध एवं अन्य लोगों ने, या मैंने जो कहा है या नहीं कहा है उसे अलग रखें, उसे धो-पोंछ डालें और कहें, "समय क्या है?"

क्या हमारे जीवन में हमारी यही एकमात्र समस्या है, समय? न केवल घटनाओं का सिलसिला, बल्कि पैदा होना, बड़ा होना, मरना, अतीत, भविष्य और वर्तमान के रूप में समय? हम समय में जीते हैं, वह पल जब कि हम आशा करते हैं, वह समय है—मैं होने की आशा करता हूँ, मैं कुछ बनने की आशा करता हूँ। मैं संबुद्ध होने की आशा करता हूँ—इन सब में समय निहित है। ज्ञान प्राप्त करने में समय लगता है, और सारा जीवन, जन्म से लेकर मृत्यु तक, समय की समस्या है। ठीक? सर, क्या मैं अपने आपको स्पष्ट कर पा रहा हूँ? इसलिए वह क्या है जिसे हम समय कहते हैं?

व० : इस बारे में आप अनेक बार कह चुके हैं परंतु मैं कहना चाहता हूँ कि वह क्षण जो कि ज्ञान, कर्म एवं साथ ही इच्छा भी है—वह ऐसा क्षण है जिसमें समय नहीं है।

कृ० : रुकिए, रुकिए, क्या आप इस क्षण को शेष समय से अलग कर सकते हैं?

व० : अवधान ('अटेंशन') या अवलोकन ('आब्जर्वेशन') के उस क्षण में समय नहीं है।

कृ० : अवलोकन और अवधान से आपका क्या मतलब है? इस विश्लेषण-प्रक्रिया के लिए माफ़ करें। यदि हम एक दूसरे को समझना चाहते हैं तो हम इन दोनों शब्दों के अर्थ के बारे में स्पष्ट हों : अवधान और अवलोकन। आप जब अवलोकन करते हैं तो वस्तुतः क्या होता है? — सिद्धान्त रूप में नहीं। आप जब उस पेड़, उस पक्षी, उस स्त्री या उस आदमी को देखते हैं तो क्या होता है?

व० : अवलोकन के उस पल में, बशर्ते कि वह वास्तविक अवलोकन हो तो...

कृ० : क्या ऐसा होता है? वे जब अवलोकन शब्द इस्तेमाल करते हैं तो उससे उनका कुछ दूसरा मतलब हो सकता है। कोई महिला कुछ और ही मतलब लगा सकती हैं।

व० : लेकिन पंडितजी से आप पूछ रहे हैं कि अवलोकन से इनका क्या तात्पर्य है?

कृ० : और अवधान से उनका क्या तात्पर्य है? महानुभाव, क्या मैं एक प्रश्न पूछूँ? क्या हम चर्चा और संवाद का आरम्भ करें, एक ऐसे शब्द पर बातचीत करें जो कि बहुत ही अच्छा है : डिलिबरेशन यानी विचार-विमर्श? आप इस अंग्रेजी शब्द का अर्थ समझते हैं? यह शब्द यूनानी भाषा के शब्द 'लिबरा' से आया है जिसका अर्थ है तौलना, मापना। आपके राशिचक्र में 'तुला' यही वस्तु है। इसी 'लिबरा' से 'लिबरेट' शब्द आया है। साथ ही इसका संबंध है डिलिवरेयर शब्द से जिसका इतालवी भाषा में अर्थ होता है 'बैठना', 'बात करना',

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'परस्पर परामर्श करना' 'साथ-साथ मापना।' यह ऐसा नहीं है कि आप एक राय दे रहे हैं और मैं दूसरी राय दे रहा हूँ, बल्कि हम दोनों साथ-साथ परामर्श कर रहे हैं, हम दोनों माप रहे हैं क्योंकि हम उसकी सचाई का पता लगाना चाहते हैं। न कि मैं उसका पता लगाऊँगा और तब मैं आपको बताऊँगा—ऐसा भाव उस शब्द में नहीं है। रोम में सिस्टीन चैपेल (वैटिकन) में जब पोप का चयन होता है तो वे विचार-विमर्श करते हैं। दरवाज़े बन्द रहते हैं, कोई बाहर नहीं जा सकता, उनके लिए शौचालय की, जलपान और भोजन सब की व्यवस्था होती है, एक पखवारे या कुछ दिनों के लिए। उन निर्धारित दिनों के भीतर ही उन्हें अवश्य किसी निर्णय पर पहुँचना है। इसे कहते हैं 'डिलिबरेशन' अर्थात् विचार-विमर्श। तो क्या हम दोनों शुरू करें, इस तरह जैसे कि हम कुछ नहीं जानते।

व० : पंडित जी के लिए यह कठिन है।

कृ० : यह कठिन नहीं है। मैं कुछ नहीं जानता, हमारा ज्ञान सिर्फ स्मृति है। इसमें क्या ख़ास बात है? मैं कह रहा हूँ, ज्ञान संसार में सबसे बड़ा ख़तरा हो सकता है, यह सबसे बड़ी बाधा बन सकता है। ज्ञान को बढ़ाने के लिए हम उसमें जोड़ते रहते हैं, वैज्ञानिक जोड़ रहे हैं और जिसमें भी जोड़ा जाता है वह हमेशा सीमित है।

व० : सचमुच। यदि वह पूर्ण हो तो उसमें आप कुछ जोड़ नहीं सकते।

कृ० : हाँ। इसीलिए आपका ज्ञान हमेशा सीमित है और आप उसी बंधी सीमा से चर्चा करते हैं तो आप सीमा में ही समाप्त हो जाएँगे।

व० : और तथाकथित स्थिरता वह सीमा है।

कृ० : हाँ, सीमा है।

व० : हमने आपसे बहुत कुछ सुना है और कुछ चीज़ें समझी हैं, परन्तु यदि वह समझ अधिक गहरे स्तर पर होनी हो तो आप जैसे व्यक्ति की ज़िम्मेदारी है कि वह हमें जानकारी करा दे क्योंकि हम लोग अलग-अलग स्तरों पर हैं।

कृ० : ठीक है, ठीक है, लेकिन यह आदमी अर्थात् कृ० कहता है कि आपलोग अपने लगर को किनारों से हटा लें और आइए हम साथ-साथ बहें।

व० : हम साथ-साथ परामर्श कैसे कर सकते हैं जब कि हम दोनों भिन्न-भिन्न स्तरों पर हैं।

कृ० : मैं इसे नहीं मानता। मैं यह नहीं मानता कि हम दो स्तरों पर हैं।

व० : आपके ख़िलाफ हमारी यह शिकायत है कि...

कृ० : कि मैं एक घटिया सर्जन हूँ।

व० : डॉक्टर, हाँ। क्योंकि, बाहर नाना प्रकार की कठिनाइयाँ और संघर्ष हैं। मेरी तरह के लोग जिन्हें आपके पास आने का सौभाग्य प्राप्त है, वे कुछ प्रकाश तो पाते हैं पर डॉक्टर यह नहीं बताता कि जो वस्तुएँ बाहर हैं उनका किस प्रकार सामना किया जाए और वहीं पर उन कठिनाइयों का कैसे समाधान कर लिया जाए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृ० : तो, आप यहाँ पहले बाहर की कठिनाइयों को हल करना चाहते हैं, उसके बाद भीतर की ओर पहुँचना चाहते हैं। क्या ऐसा है?

व० : नहीं मैं उन दोनों को एक साथ हल करना चाहता हूँ।

कृ० : मैं इस विभाजन को नहीं मानता।

व० : हाँ, मैं इसे मानता हूँ।

कृ० : संसार 'मैं' है, 'मैं' संसार हूँ। अब वहाँ से हम किस प्रकार समस्या का समाधान कर सकते हैं?

व० : हमको कह लेने दीजिए कि मैं बाहरी और भीतरी वस्तुओं में अन्तर नहीं करता।

कृ० : आप पहले इस बारे में निश्चित हो जाएँ। क्या आप सचमुच वैसा देखते हैं या सिद्धान्त रूप में?

व० : मेरे लिए यह सैद्धान्तिक है।

कृ० : सर, सबसे पहले, मेरे लिए सिद्धान्त की कोई कीमत नहीं है। मुझे क्षमा करें। संसार में जो हो रहा है उसे मैं देख रहा हूँ — युद्ध, राष्ट्रवाद की भावनाएँ, हत्या, वे सभी भयंकर घटनाएँ जो हो रही हैं — सचमुच हो रही हैं। मैं कल्पना नहीं कर रहा हूँ, मैं देखता हूँ कि ऐसा सामने हो रहा है। अब इनको किसने उत्पन्न किया?

व० : मनुष्यों ने।

कृ० : क्या आप सहमत हैं कि हम सबने ही इन्हें उत्पन्न किया है।

व० : हाँ, सचमुच।

कृ० : बिल्कुल ठीक, अतः यदि हम सबने इसे उत्पन्न किया है तो हम उसे बदल सकते हैं। तो आप किस तरह परिवर्तन लाएँगे? सर, हाल ही में मैं न्यूयार्क में एक वैज्ञानिक, एक डॉक्टर से मिला जो कि दार्शनिक हो गये हैं। उन्होंने कहा — यह सब सिर्फ़ कहने की बातें हैं, असली सवाल है : क्या मस्तिष्क की कोशिकाएँ अपने में परिवर्तन ला सकती हैं—मादक औषधियों के द्वारा नहीं, विभिन्न आनुवंशिक प्रक्रियाओं के द्वारा नहीं—क्या मस्तिष्क की कोशिकाएँ खुद कहती हैं कि यह ग़लत है—इसे बदलो। सर, क्या आप समझ रहे हैं? क्या मस्तिष्क-कोशिकाएँ बिना किसी दबाव, बिना किसी मादक औषधि के, जो कुछ उन्होंने उत्पन्न किया उसे देखकर कह सकती हैं : यह ग़लत है—इसे बदल डालो।

व० : परन्तु आप मस्तिष्क और मन में भेद कर रहे हैं।

कृ० : हाँ, यह मूर्खतापूर्ण हो सकता है पर मैंने इनमें अन्तर कर रखा है क्योंकि मस्तिष्क हमारे संवेदनों का प्रमुख केन्द्र है।

व० : सर, परसों भी मेरा यही प्रश्न था कि क्या हम उस गुणात्मक परिवर्तन की प्रतीक्षा करें?

कृ० : आप नहीं कर सकते। वह जारी रहेगा।

व० : क्या वह अपने आप आएगा?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृ० : नहीं।

व० : तो फिर हमें उसके लिए प्रयास करना चाहिए।

कृ० : सर, आप क्या करेंगे? आप देखते हैं कि एक गुणात्मक परिवर्तन ज़रूरी है। ठीक?

व० : हाँ, हर एक इससे सहमत है।

कृ० : अव कौन सी चीज़ उसका परिवर्तन करेगी? कोशिकाओं का परिवर्तन, सिर्फ विचारों का परिवर्तन नहीं। मस्तिष्क की कोशिकाओं में ही अतीत की सारी स्मृतियाँ रहा करती हैं। क्या वे कोशिकाएँ विना दवाव, विना प्रभाव, विना रसायन के कह सकती हैं : उसका यह अन्त है, मैं वदलूँगी?

व० : नहीं, यदि वहाँ कोई प्रभाव, कोई दवाव नहीं है तो इसका मतलव है कि यह अपने आप हो रहा है।

कृ० : नहीं, इसे ध्यान से सुनें। मस्तिष्क-कोशिकाएँ सभी स्मृतियों, सभी दवावों, सभी शिक्षा, सभी अनुभव, सव कुछ को अपने भीतर रखा करती हैं—यही ज्ञान-केन्द्र है। ठीक?

व० : हाँ, परंतु यह बोझिल है।

कृ० : पचीस लाख वर्षों के ज्ञान से बोझिल है। हमने सव प्रकार के प्रयास किए—रसायन, आत्म-उत्पीड़न, खोपड़ी के भीतर परिवर्तन लाने के लिए हर प्रकार का अनुभव, पर हम सफल नहीं हुए। मनुष्य के पास आनुवंशिक इंजीनियरी है, इस भीतर को वदलने के लिए हर प्रकार का प्रयोग-परीक्षण किया जा रहा है परंतु उसे सफलता नहीं मिली है। अव तक तो नहीं, हज़ार साल में शायद मिल जाए। इसलिए मैं खुद से कहता हूँ, यह मस्तिष्क इन सव पर क्यों निर्भर है—रसायन, दूसरों द्वारा प्रभावित होना, सुख इत्यादि? क्या यह मुक्त होने की प्रतीक्षा में है? मैं खेद के साथ कहता हूँ कि यह इन सबके माध्यम से मुक्त नहीं हो सकता। यह दूसरे प्रकार का पलायन ही है।

व० : संभव है कि किसी और चीज़ की यह प्रतीक्षा कर रहा हो।

कृ० : हाँ। अतः क्या मस्तिष्क-कोशिकाएँ अपने अतीत की समस्त स्मृतियों के साथ उनका अभी अन्त कर सकती है? यह है मेरा प्रश्न। सर, आपका क्या कहना है?

व० : मेरा दूसरा प्रश्न है। मुझे अपने छात्रों को पढ़ाना है और यह कार्य मैं तर्क की प्रक्रिया से करता हूँ—तर्क द्वारा अनेक वस्तुएँ स्पष्ट की जाती हैं। साथ ही साथ मैं उसकी सीमा का अनुभव करता हूँ—विशेष रूप से आपके संपर्क में आने पर—कि यह सब बनावटी, सैद्धान्तिक और अत्यधिक सीमित है। इसके बाद जब हम आपके पास आते हैं तो हम सुनते हैं कि अच्छा क्या है और एक सूक्ष्म बिन्दु से दूसरे पर जाते हैं, लेकिन हम इन सबके अन्त में यही पाते हैं कि अभी तक हम कहीं भी सत्य के निकट नहीं हैं। अतः इसका यही मतलब है कि तर्क के उस चक्र में घूमने के बजाय हम इसके चारों ओर घूम रहे हैं पर इससे कोई अन्तर नहीं आता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृ० : हाँ, सर, ये केवल व्याख्या भर है और हम इस तर्क से उस तर्क पर आते-जाते रहे हैं। इस तरह क्या हम देख सकते हैं कि तर्क की अपनी एक सीमा है ? अब क्या मैं उस तर्क को, बिना दूसरे तर्क पर गये छोड़ सकता हूँ, क्योंकि मैं बिल्कुल आरम्भ में ही देख लेता हूँ कि तर्क की अपनी सीमाएँ हैं—चाहे वह अत्यन्त उच्च स्तर का तर्क हो अथवा सीधी-सी सामान्य बुद्धि ?

व० : नहीं, इन दोनों की तुलना नहीं की जा सकती क्योंकि दूसरा पूरी तरह से 'लॉजिक' पर आधारित है, जिसे हम समझते हैं कि वह सीमित है, पर यहाँ यह सिर्फ 'लॉजिक' नहीं है क्योंकि हमें कुछ अन्तर्दृष्टि, कुछ प्रकाश प्राप्त होता है, पर हम इन छोटे अंशों के साथ ही चक्कर लगाते रहते हैं, कोई सम्यक् समझ नहीं प्राप्त कर पाते।

कृ० : ठीक है। यदि वह ऐसा है — यद्यपि मैं उस पर शंका करता हूँ — तो क्या आप पूरी अन्तर्दृष्टि चाहते हैं ? आपके प्रश्न में तो ऐसा ही निहित है।

व० : जो कुछ हम पा रहे हैं उसी से हमें संतुष्ट होना चाहिए, पर हमको वह आनन्द चाहिए जो विचार को आकार देता है। हम बहुत थोड़ी अन्तर्दृष्टि पाते हैं, पूर्ण अंतर्दृष्टि नहीं।

कृ० : मैं आनन्द की बात नहीं कर रहा हूँ, मैं अन्तर्दृष्टि की बात कर रहा हूँ। क्या आप इसे ध्यानपूर्वक सुनेंगे ? मैं पूर्ण को प्रस्तुत करूँगा। मैं आपको तार्किक रूप में पूर्ण को दिखाऊँगा। क्या आप सुनेंगे और यह न कहेंगे कि हाँ, यह ठीक है, यह ग़लत है ? असल में हर लेखक, चित्रकार, वैज्ञानिक, कवि, गुरु — ये सभी सीमित अन्तर्दृष्टि रखते हैं। आप और हम आगे आते हैं और कहते हैं, "देखिए यह सीमित है और मैं असली, पूर्ण अन्तर्दृष्टि चाहता हूँ, आंशिक नहीं।" ठीक ?

व० : हमें इसे समझना है कि पूर्ण अन्तर्दृष्टि क्या है। क्या यह एक अनुभव है ?

कृ० : नहीं। मुझे इस पर संदेह है। यह एक अनुभव नहीं है।

व० : तो फिर इसे भीतर से आना है।

कृ० : नहीं, आप देखें, आप पहले ही से अपेक्षा कर रहे हैं कि क्या होना चाहिए।

व० : इसका पहले से अनुमान नहीं लगाया जा सकता।

कृ० : इस बारे में आप नियम नहीं बना सकते। आप नहीं कह सकते कि यह अनुभव है ; यह नहीं है।

व० : आप हमें बताने जा रहे थे कि यह सब किस तरह पूर्ण बनेगा।

कृ० : यह सब नहीं, टुकड़े मिलकर पूर्ण नहीं बनते। मैं उतना ही तार्किक हूँ जितना आपमें से कोई भी व्यक्ति। मैं सिर्फ़ यह कह रहा हूँ कि आप ग़लत ढंग से उस तक पहुँच रहे हैं — अर्थात् मेरे विचार में, ऐसा न कहें कि यह अनुभव है, यह ज्ञान पर आधारित है, जो ज्ञान पर आधारित है वह आविष्कार है, सृजन नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व० : सर, वे नहीं कह रहे थे कि यह ज्ञान पर आधारित अनुभव है, बल्कि इसे वास्तविक और प्रमाणित होना चाहिए।

कृ० : ऐसा नहीं है कि मैं अनुभव करता हूँ; वह वास्तविक है। मैं आपकी परेशानी नहीं समझ रहा हूँ। कोई मेरे निकट आता है, मुझे एक कहानी सुनाता है। मैं तन्मय होकर सुनता हूँ। यह कहानी सुन्दर भाषा और शैली में है। मैं उससे सम्मोहित हूँ, कहानी सुनता हूँ और वह दिन-ब-दिन चलती ही रहती है और मैं कहानी में लीन हो जाता हूँ। यह कहानी यों ख़त्म होती है : किस्सा ख़त्म।

व० : हमारे लिए कहानी ख़त्म नहीं होती; समस्याएँ जारी रहती हैं।

कृ० : आप मेरे मित्र हैं। मैं आपको बताना चाहता हूँ कि लोगों की सीमित अन्तर्दृष्टि हुआ करती है और यह बात बिलकुल जाहिर है। आपका यह मित्र यहाँ पर कहता है कि मैं बताऊँगा कि किस तरह आपके पास पूरी अन्तर्दृष्टि हो सकती है। क्या आप उसे सुनेंगे? बहस न करें, सिर्फ़ सुनें। आप भिखारी को चावल देते हैं; वह आपसे कुछ अपेक्षा नहीं कर रहा था, पर आप उसे देते हैं। इसी तरह वह आपको उपहार देता है और वह कहता है, "इसे लो, मुझसे यह मत पूछो कि तुम्हें किसलिए यह दिया जा रहा है, अतः कौन यह दे रहा है; सिर्फ ले लो।" इसी तरह मैं आपसे कह रहा हूँ, अन्तर्दृष्टि बुद्धि पर निर्भर नहीं है, ज्ञान पर निर्भर नहीं है। यह किसी प्रकार की स्मृति पर निर्भर नहीं है और यह समय पर भी निर्भर नहीं है। बोधि समय पर निर्भर नहीं है। समय, स्मृति, याद, कारण — जब इनका अस्तित्व नहीं होता तभी पूर्ण अन्तर्दृष्टि होती है। सर, जैसे रात के समय दो समुद्री जहाज़ एक दूसरे के पास से गुजर रहे हों और एक जहाज़ दूसरे से कहे, "यह बात है!" और गुज़र जाए। आप क्या करेंगे?

व० : सर, यह क्या धीरे-धीरे अभ्यास से आता है, अथवा क्या यह तत्क्षण होता है?

कृ० : अभ्यास का मतलब है स्मृति, समय।

व० : तब तो यह तत्काल ही हो सकता है।

कृ० : अरे नहीं, नहीं — सर, ज़रा सुनें। वह मुझसे यह कहता है और ग़ायब हो जाता है। वह मेरे पास एक अद्‌भुत रत्न छोड़ गया है और मैं उसकी सुन्दरता देख रहा हूँ। मैं नहीं कह रहा हूँ कि उसने मुझे क्यों यह दिया, वह कौन है, आदि आदि। उसने यह मुझे दिया और उसने कहा — "मेरे मित्र, इसे लो, इसके साथ जिओ, और अगर इसे न चाहो तो इसे फेंक दो।" और मैंने उसे फिर दोबारा नहीं देखा। मैं उस रत्न से सम्मोहित हूँ और वह रत्न ऐसी वस्तुओं को प्रकट करने लगता है जिन्हें मैंने पहले कभी नहीं देखा। वह रत्न कहता है — "मुझे और कस कर पकड़ो, तुम और अधिक देखोगे।" लेकिन मैं कहता हूँ कि मेरी पत्नी है, बच्चे हैं, कालेज है, विश्वविद्यालय है, मेरी नौकरी है; अतः मैं उसे मेज़ पर रख देता हूँ, शाम को वापस आता हूँ और उसकी ओर देखता हूँ। पर वह रत्न धूमिल हो रहा है, इसलिए मुझे उसे पकड़ रखना है, उसे संजो रखना है, उसे प्रेम करना है, उसे देखना है और जतन से रखना है।

मैं किसी से कोई भी चीज़ मनवाने की कोशिश नहीं कर रहा हूँ। हम देखते हैं कि हमारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञान बहुत ही सीमित है और ज्ञान ही ख़तरा हो सकता है, यह हम सबमें जहर के रूप में मौजूद हो सकता है।

सर, भारत आने से ठीक पहले, हाल ही में मैं तीन बिलकुल नवीन आधुनिकतम कम्प्यूटर विशेषज्ञों से मिला। वे कृत्रिम बुद्धि की अधिक गहराई से परीक्षा कर रहे हैं। हम मानव जिन कार्यों को कर सकते हैं उनमें से अधिकांश को कृत्रिम बुद्धि कर सकती है – तर्क करना, हम लोगों में से किसी से भी अधिक ज्ञान रखना। इसमें ब्रिटिश ज्ञान, यूरोपियन ज्ञान, फ्रेंच ज्ञान, रूसी ज्ञान, सभी उपनिषद्, सभी बाइबिलें, कुरान सभी कुछ शामिल होगा और यह कार्य करेगा — यह आपको बताएगा कि क्या खाना है और क्या नहीं खाना है, स्वास्थ्य के लिए आप कब सोएँ, कब कामवासना में न लिप्त हों। आप जो कुछ कर सकते हैं इसने पहले ही से करना आरम्भ कर दिया है। मैं जो कुछ कर सकता हूँ यदि वह मशीन वह सब कुछ कर सकती है सिवाय कामवासना में लिप्त होने के या आसमान के तारों को देखने के तो मानव मस्तिष्क का क्या होगा? तो फिर मनुष्य का क्या प्रयोजन रहेगा? और मनोरंजन के धंधे-फुटबाल, टेनिस वगैरह यहाँ भी बदक़िस्मती से बहुत ज़बर्दस्त है। अतः यदि मनुष्य इन सभी मनोरंजनों में, जिनमें धार्मिक मनोरंजन भी है, डूबा रहा तो फिर मनुष्य कहाँ है? सर, यह बहुत गंभीर प्रश्न है, यह कोई मामूली बातचीत नहीं है।

ब० : यदि मस्तिष्क में एक गुणात्मक परिवर्तन होता है तो यह सवाल नहीं उठेगा। वह मौजूदा मस्तिष्क से बहुत आगे होगा क्योंकि यह मस्तिष्क स्मृति है और मशीन के पास कहीं श्रेष्ठ स्मृति है।

कृ० : इस तरह की एक छोटी चिप्पी ६० करोड़ शब्द संचित रखती है।

ब० : संसार के सभी पुस्तकालय उस मशीन में होंगे।

कृ० : ऐसा उनके पास है। क्या उनके पास नहीं है? अतः मैं क्यों पुस्तकालय जाऊँ, फिर मैं यह सब क्यों सुनूँ? इसलिए मनोरंजन करना है। ....

ब० : या गुणात्मक परिवर्तन लाना है।

कृ० : बिलकुल ठीक, यही प्रश्न है जो मैं पूछता आया हूँ।

ब० : तो हम फिर उसी प्रश्न पर वापस आ गये।

ब० : क्या इन सब में ध्यान का कोई स्थान है?

कृ० : हाँ! सर, क्या ऐसा ध्यान है जो आयोजित न हो, जो जान बूझ कर न किया गया हो, जो यह न कहे कि अभ्यास करो, अभ्यास करो। जिसका इन सबसे वस्तुतः कुछ लेना देना नहीं है क्योंकि उसी तरह तो मैं एक धनी आदमी बनने का अभ्यास करता हूँ, उसमें मेरा एक निश्चित लक्ष्य होता है। अतः अभी हम जैसा करते हैं, वह ध्यान नहीं है। इसलिए शायद ऐसा कोई ध्यान है जिसका इन सबसे कुछ लेना-देना नहीं है — और मैं कहता हूँ कि ऐसा है।

ब० : क्या हम यहीं समाप्त करें?

कृ० : हाँ, हम समाप्त करते हैं, कहानी की तरह।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

K
0८१
१२६

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

बौद्धों के साथ परिचर्चा
९ नवम्बर, १९८५

कृष्णमूर्ति (कृ) : क्या यहाँ ऐसा कुछ है जो पवित्र और चिरस्थायी है तथा जो व्यवसाय से प्रभावित नहीं है? क्या ऐसा कुछ भारत में यानी विश्व के इस भाग में है?

परिचर्चा में भाग लेने वाला एक वक्ता (व०) : निश्चय ही इस देश में ऐसा कुछ है जिस पर बाहरी बातों का असर नहीं हुआ है।

कृ० : मेरा यह प्रश्न नहीं था। क्या यहाँ ऐसा कुछ है जो अन्यत्र नहीं है — जो अछूता है, जो भ्रष्ट नहीं हुआ है और धर्म के नाम पर चल रहे सारे तमाशों ने जिसे कुरूप नहीं बना दिया है? क्या पहले से ही यहाँ ऐसा कुछ है? यदि ऐसा है तो उसे संभाल कर रखने के लिए पूरे मन और हृदय से प्रयत्न करना होगा। सर, क्या आप इसे समझते हैं?

व० : मैं नहीं कह सकता क्योंकि किसी अर्थ में मैंने इसको प्रत्यक्ष रूप में अनुभव नहीं किया है, न मैं यही कह सकता हूँ कि दूसरों ने किया है। परन्तु पुराने शास्त्रों के अध्ययन ने मुझे ऐसा निश्चित बोध कराया है कि यहाँ कुछ ऐसा है जिसका स्पष्ट रूप से अनुभव किया जा सकता है।

103180

कृ० : पंडित जी, मैं पूछ रहा हूँ : क्या यहाँ कुछ ऐसा चिरस्थायी है जो समय से, विकास आदि से बंधा नहीं है? वह बहुत अधिक पवित्र होगा। और यदि ऐसा यहाँ कुछ है तब तो अपनी जान दे कर भी इसकी रक्षा करनी चाहिए, इसे सबल बनाना चाहिए, सिद्धान्त और ज्ञान से नहीं बल्कि उसकी अनुभूति, उसकी गहराई, उसके सौन्दर्य तथा उसकी व्यापक शक्ति से। यही बात मैं पूछ रहा हूँ।

व० : ऐसी चीज़ को प्राप्त करने की हमारी इच्छा है, पर हम ऐसा नहीं कर पाए हैं। हमारा ऐसा अनुभव है कि हम अपने आप को अनेकानेक सिद्धान्तों में, विभिन्न परम्पराओं में, अनेक पद्धतियों में उलझा लेते हैं। यदा-कदा हम ऐसी स्पष्ट वाणी सुनते हैं जो इसका प्रतिपादन अकाट्य ढंग से करती है। ऐसी वाणी आपसे निकलती है पर एक तरह से हम उस तक पहुँचने में असमर्थ हैं। यह सारा प्रपंच एक बड़े भारी मेले की तरह है जिसमें तरह-तरह की बेसुरी आवाजें समस्याओं का समाधान प्रस्तुत कर रहीं हैं।

कृ० : आप मेरे प्रश्न का उत्तर नहीं दे रहे हैं : कोई ऐसी चीज़ है अथवा नहीं — परम्परा नहीं, न ही पुरानी संस्कृति का धूमिल होता हुआ ऐतिहासिक सिलसिला जो कि व्यावसायिकता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से नष्ट किया जा रहा है बल्कि किसी शक्ति, किसी प्रज्ञा से संचालित महान् प्रेरणा? क्या वह शक्ति, वह प्रज्ञा इस समय मौजूद है? मैं उसी बात को दूसरे तरीक़े से दोहरा रहा हूँ।

व० : अगर मुझे आपके सवाल का जवाब देना ही है तो मैं कहूँगा कि आप जिसके बारे में बात कर रहे हैं — वह चीज़ जीवन है।

कृ० : मैं एक बहुत सीधा सवाल पूछ रहा हूँ, इसे उलझा न दें। कभी भारत पूरे एशिया पर छा गया था जिस तरह यूनान सारी पश्चिमी संस्कृति पर। मैं भारत के बारे में भौगोलिक रूप में नहीं बल्कि विश्व के एक अंग के रूप चर्चा कर रहा हूँ। यह दावानल की तरह फैल गया था। इसमें मौलिक ढंग की कोई विशाल ऊर्जा थी। वस्तुओं को गतिशील करने की इसमें शक्ति थी। क्या वह अब भी यहाँ है या वह सब लुप्त हो गया है? क्या वह ज़रा-सा भी यहाँ अब है?

व० : मैं नहीं जानता, सर। मैं समझता हूँ कि वह मौजूद है।

कृ० : क्यों? आप ऐसा क्यों सोचते हैं?

व० : कभी-कभी यह प्रकट हुआ करती है, पर सामान्यतः नहीं।

कृ० : यह ताज़ा हवा में साँस लेने जैसा है। यदि वह लगातार बह रही है तो वह हमेशा ताज़ा है।

व० : वह हमेशा बह रही है, वह हमेशा ताज़ा है, लेकिन ऐसे लोगों का संपर्क हमेशा नहीं मिलता।

कृ० : मैं समझ रहा हूँ लेकिन यह संतोषजनक नहीं है।

व० : आप इसे भौगोलिक रूप से विश्व के इस भाग के साथ क्यों जोड़ना चाहते हैं?

कृ० : भौगोलिक रूप से? मैं आपको बताऊँगा। सभी प्राचीन लोगों ने, जहाँ तक मैं समझता हूँ, पर्वतों की उपासना की। यूनानियों के अनुसार, प्राचीन सुमेरियनों के अनुसार देवता वहाँ से आते थे। पर्वत में उन्हें पवित्रता का बोध होता था। इसके बाद आप हिमालय को ही लीजिए — यह सब दक्षिणमूर्ति स्तोत्र में है। मुनि वहाँ रहते थे, ध्यान करते थे। क्या अब भी वहाँ यह चीज़ है या वह अब व्यवसाय का माध्यम बनाया जा रहा है?

व० : यह चीज़ वहाँ है। उसे व्यवसाय का साधन नहीं बनाया जा सकता, व्यावसायिकता कुछ और है।

कृ० : क्या वहाँ यह चीज़ है?

व० : हाँ।

कृ० : आप हाँ क्यों कहते हैं?

व० : क्योंकि वहाँ यह चीज़ है, यह ....

कृ० : सर, आप यहाँ सशरीर मौजूद हैं। मैं सिद्धान्त बना सकता हूँ कि शरीर किस तरह बनता है, परंतु आप यहाँ मौजूद हैं — छू कर, महसूस कर हम देखते हैं कि आप सचमुच यहाँ हैं। क्या ऐसी कोई प्रत्यक्ष चीज़ हिमालय में, भारत में अब भी मौजूद है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व : हाँ, यह वास्तव में वहाँ है। यह है।

कृ० : मुझसे यह कहना काफ़ी नहीं है कि 'यह वहाँ है।' यदि यह वहाँ है तो विश्व का यह भाग इतना भ्रष्ट एवं इतनी भयंकर स्थिति में क्यों है? मैं जो कह रहा हूँ, उसे आप स्पष्टतः महसूस नहीं कर रहे हैं।

व० : आरंभ से ही मैं कह रहा हूँ कि यह वहाँ है, लेकिन जन समूह के साथ इसका सम्बन्ध, संपर्क....

कृ० : मैं जनसमूह के बारे में बात नहीं कर रहा हूँ। यह तो आप, आप....

व० : जनसमूह के साथ न सही, व्यक्तियों के साथ....

कृ० : आपके साथ....

व० : यह कम हो गया है।

कृ० : यह क्षीण क्यों हो गया, यह कम क्यों हो गया, यह तुच्छ क्यों हो गया?

व० : लोगों की इसमें रुचि नहीं है।

कृ० : अतः इसका मतलब हुआ?

व० : व्यवसाय में उनकी अधिक रुचि है।

कृ० : हाँ, इसीलिए वह नष्ट हो गया। कोई बात नहीं। उसे छोड़ें। क्या एक अन्य कारण ज़बर्दस्त स्वार्थपरता है — ज्ञान के रूप में, हिन्दूवाद के रूप में, बुद्धवाद के रूप में स्वार्थ। यह सब मूलतः स्वार्थ है और विश्व में यह स्वार्थ व्यापक रूप में बढ़ रहा है और यह ऐसा दरवाज़ा है जो उस बहुमूल्य चीज़ के लिए बंद हो जाता है। क्या आप इसे समझ पा रहे हैं?

कुछ समय हुआ, तीन अत्यंत चतुर व्यक्ति — वे वैज्ञानिक थे — ब्रॉकवुड पार्क स्थित हमारे स्कूल में आये और हम सब लोग बात कर रहे थे। वे कृत्रिम प्रज्ञा प्राप्त करने का प्रयास कर रहे हैं। यदि वे उसे पा लेते हैं तब तो हम सब को समाप्त ही समझिए। आपका ज्ञान, आपके वेद, आपके उपनिषद् और आपकी गीता — ये सब गये, क्योंकि मशीन आपसे और हमसे कहीं अधिक अच्छा दुहरा सकती है।

व० : आपने जो अभी प्रश्न उठाया उससे एक प्रतिप्रश्न करने का एक बहुत अच्छा अवसर प्राप्त होता है और वह प्रतिप्रश्न यह है : आप जो कहते हैं वह हमें आकर्षित करता है, पर आज के परिवेश में हम इसे कैसे पा सकते हैं, अनुभव कर सकते हैं और दूसरों के साथ बाँट सकते हैं?

कृ० : आप इसका अनुभव नहीं कर सकते। इसके अनुभव के लिए अनुभवकर्ता होना चाहिए। उसने हजारों अनुभव किये हैं, वह उसमें एक और अनुभव जोड़ता है — यही है मेरा असली तर्क! यह कोई अनुभव नहीं है, यह ऐसा नहीं है कि मैं और आप इसका अनुभव करें। यह विद्युत की तरह मौजूद है। मैं इसकी प्रशंसा कर सकता हूँ, उपासना कर सकता हूँ, लेकिन यह मौजूद है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व० : मनुष्यों के पास केवल एक देन है और वह है अनुभव करने की शक्ति और उसे आप छीन ले रहे हैं। इसके बाद हम किसके सहारे रहेंगे?

कृ० : मैं आपसे कुछ छीन नहीं रहा हूँ। पर मैं देखता हूँ कि अनुभव एक अत्यंत तुच्छ बात है। मैं अनुभव करता हूँ, फिर उसके बाद क्या?

अनुभव यह ज्ञान देता है कि पहाड़ पर कैसे चढ़ा जाए। हम अनुभव पर निर्भर रहते हैं पर 'वह' चीज़ अनुभव नहीं की जा सकती। आप जल का अनुभव नहीं कर सकते, वह बस होता है। मैं कामवासना का अनुभव कर सकता हूँ, मैं उसका अनुभव कर सकता हूँ जिससे मुझे चोट पहुँचती है, कोई प्रशंसा करता है तो इसका अनुभव भी कर सकता हूँ।

व० : जल वहाँ है पर मैं उसके अनुभव के द्वारा ही उसे जानता हूँ।

कृ० : आप इसीलिए जानते हैं क्योंकि आप इसे प्रत्यक्ष देखते हैं। आप इसके गुण-धर्म को जानते हैं, आप इस पर तैरते हैं पर यह सब इसके बारे में आपके ज्ञान का हिस्सा है।

व० : यदि मुझे ज्ञान न होता तो मुझे कोई अनुभव भी नहीं होता।

कृ० : आप जिसे अनुभव कहते हैं वह ज्ञानेन्द्रिय द्वारा अवलोकन पर आधारित है और ज्ञानेन्द्रियों पर आधारित हमारा अवलोकन आंशिक है, कभी भी पूर्ण नहीं है। अपनी सभी सजग इन्द्रियों से अवलोकन करना — वह कोई अनुभव नहीं है। सर, मैं उस कपड़े के टुकड़े को देखता हूँ कि वह लाल है क्योंकि मैं उसे लाल कहने के लिए संस्कारित (कंडिशंड) किया गया हूँ। यदि आप उसे बैंगनी कहने के लिए संस्कारित होते तो उसे आप उसे बैंगनी ही कहते। मस्तिष्क हमारे अनुभव से, हमारी संवेदनात्मक प्रतिक्रियाओं से सदा ही संस्कारित होता है — किस तरह तर्क किया जाए, किस तरह इन्कार किया जाए, आदि।

यदि मैं एक ईसाई होता तो धर्म के प्रति मेरा सारा दृष्टिकोण ईसा मसीह, उनकी माँ कुंआरी मेरी इत्यादि तक ही सीमित होता। आप हिन्दू अथवा बौद्ध हैं — क्षमा करें, मैं तुलना नहीं कर रहा हूँ — और इन्हीं संस्कारों से होते हैं आपके सारे कर्म और प्रतिक्रियाएँ। अतः आप जब कहते हैं, 'अनुभव करो, यह सीखो, वह करो' तो यह सब उस मस्तिष्क से आता है जो संकुचित और संस्कारबद्ध हो गया है।

व० : हमने जिस विषय पर चर्चा की उसी पर फिर लौट आएँ। हम संस्कारबद्धता, स्वार्थपरता आदि को समझते हैं। उससे हटने की संभावना तो है किन्तु हम वहीं ठहर जाते हैं।

कृ० : सर, क्यों?

व० : या मैं यह कहूँ कि उससे पूरी तरह दूर हटना सम्भव नहीं है।

कृ० : या जहाँ हैं वहीं बने रहें — आप समझते हैं? और दूर न हटें। जहाँ आप हैं वहीं रहें और देखें कि क्या होता है। सर, आप कभी समग्र रूप से किसी चीज़ के साथ नहीं रहते। 'जो है' उसके साथ ही आप रहें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व० : हाँ, यह बात तो साफ़ है।

कृ० : ठहरें, सर, ठहरें, ठहरें। हम कभी वहाँ नहीं ठहरते। हम सदा चलायमान रहते हैं — गतिशील। ठीक ? मैं यह हूँ, मैं वह होऊँगा — 'जो है' से दूर होने की गति यही है।

व० : या तो यह जहाँ है वहीं हम रहें अथवा गति से बाहर निकल जाएँ।

कृ० : गति क्या है ?

व० : परिवर्तन, शक्ति ....

कृ० : तब हमें यह समझना है कि समय क्या है — वह जो कि हम रोज़ जिया करते है; समय जो अतीत है, समय जो वर्तमान है, समय जो भविष्य है। अतः समय क्या है ? सर, आप समझते हैं ? संस्कृत सीखने में, संस्कृत बोलने में, पुराने सिद्धान्तों, विभिन्न साहित्यों की खोज में, पुराने लोगों ने क्या कहा, बुद्ध ने क्या कहा, नार्गाजुन ने क्या कहा, आदि में बहुत समय लगता है। किसी चीज़ में दक्षता प्राप्त करने में, एक जगह से दूसरी जगह जाने में समय लगता है। जो भी हम करते हैं, उस सब में समय लगता है। अतः हमें इस बात का पता अवश्य ही लगाना चाहिए कि समय क्या है।

व० : समय उपलब्धि का साधन है।

कृ० : हाँ, सफलता, असफलता, किसी कौशल को प्राप्त करना, भाषा सीखना, पत्र लिखना, यहाँ से वहाँ तक की दूरी तय करना, आदि। हमारे लिए यही है समय। समय क्या है ?

व० : यह मन में एक गति है, मन की गूढ़ और अविराम गति।

कृ० : तो फिर मस्तिष्क ('ब्रेन') क्या है ? मन (माइंड) क्या है ? कल्पना न करें। इसे देखें, मस्तिष्क क्या है ?

व० : मस्तिष्क और मन के बीच अन्तर का पता लगाना बहुत कठिन है। अनैच्छिक विचारों का अज्ञात उद्दीपकों की ओर निरन्तर प्रवाह ही समय के अस्तित्व के लिए उत्तरदायी है।

कृ० : नहीं, सर, आप सुन नहीं रहे हैं। घड़ी का समय है : किसी दूरी को पार करना, किसी भाषा को सीखना — इसमें समय लगता है। इस धरती पर हम लोग कोई २५ लाख वर्षो से रह रहे हैं। यहाँ अत्यधिक विकास हुआ है, जो कि समय है। समय से आपका क्या आशय है ?

व० : आपने अभी जो कुछ कहा वह भौतिक समय है। पर समय की असली समस्या यह है कि वह मानव मस्तिष्क में किस प्रकार कार्य करता है। एक गुत्थी अभी भी रह गयी है जिसे हम सुलझाना चाहते हैं।

कृ० : आप मन के बारे में चर्चा करें इससे पहले मैं सविनय सुझाव दूँगा कि आप पता लगाएँ कि मस्तिष्क क्या है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब० : मस्तिष्क सम्भवतः मन का भौतिक आधार यानी जैविक ढाँचा है।

कृ० : मस्तिष्क हमारे सभी कृत्यों एवं संवेदनात्मक प्रतिक्रियाओं का केन्द्र है। खोपड़ी के भीतर यह सभी विचारों का केन्द्र है। मस्तिष्क की वह कौन सी गुणवत्ता है जो यह प्रश्न पूछती है : समय क्या है? आप इस प्रश्न को कैसे ग्रहण करते हैं?

ब० : आपके साथ चर्चा के उपरान्त हमने समझा है कि यह सिर्फ़ समग्र अवधान (अटेंशन) है जो एक समग्र रूपांतरण लाएगा। यहीं पर हमारी असली समस्या आरम्भ होती है।

कृ० : मैं कुछ कहूँ? समय अतीत है, समय वर्तमान है और वर्तमान ('नाउ') अतीत से नियन्त्रित एवं निर्मित है। भविष्य वर्तमान का ही परिवर्तित रूप है। मैं इसे बहुत ही सरलता से कह रहा हूँ। इस प्रकार भविष्य तत्क्षण है। अतः प्रश्न है : यदि सारा समय इस क्षण में समाहित है, सारा समय-अतीत, वर्तमान और भविष्य — तो फिर परिवर्तन से हमारा क्या आशय है?

ब० : 'परिवर्तन' शब्द कोई अर्थ नहीं रखता।

कृ० : नहीं, रुकें। तत्क्षण में सारा समय है। यदि तथ्य है — तथ्य न कि सिद्धान्त, न कि किसी प्रकार का अनुमानित निष्कर्ष — कि इस क्षण में ही सारा समय निहित है तो यह क्षण ही भविष्य और वर्तमान है। तब किसी चीज़ के लिए या किसी चीज़ की ओर कोई गति नहीं रह जाती। गति में समय निहित है, ठीक? इस प्रकार तब कोई परिवर्तन का प्रश्न भी नहीं रह जाता। परिवर्तन की बात ही मूर्खतापूर्ण हो जाती है। तब मैं वही हूँ जो मैं हूँ : मैं लोभी हूँ और मैं कहता हूँ कि हाँ मैं हूँ।

ब० : आप और हम में बहुत अन्तर है, भले ही हम एक ही बात कहते हों।

कृ० : अरे, नहीं, नहीं। मैं ऐसी कोई बात नहीं मानता।

ब० : आप कहते हैं कि सारा समय अभी है और मैं भी यही कहता हूँ कि सारा समय अभी है। पर मेरा कहना और आप का कहना ये दोनों बिलकुल अलग चीज़ें हैं।

कृ० : क्यों?

ब० : क्योंकि वे सज्जन तर्क और अनुमान से कहते हैं।

कृ० : बिल्कुल सच। इसका मतलब है कि वहाँ समय कार्यरत है।

ब० : हम इस कठिनाई को कैसे दूर कर सकते हैं?

ब० : पण्डित जी, आप इस प्रश्न का उत्तर दें : जिस प्रवाह में हम बह रहे हैं उसे कैसे तोड़े?

ब० : प्रवाह तर्क के द्वारा तोड़ा जाता है। आप और हमारे बीच एक बहुत बड़ा अन्तर है। आप जो कह रहे हैं उसे हम काल्पनिक रूप में समझ रहे हैं। समस्या यह है : इस अन्तर को हम किस प्रकार दूर करें? क्योंकि समझ की दृष्टि से हम एक मिलन-बिन्दु पर पहुँच गये हैं।

कृ० : मैं आपको बताऊँगा। नहीं, मैं आपको दिखाऊँगा। कृपया याद रखें कि मैं कोई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरु नहीं हूँ। क्या यह एक तथ्य है कि समय इसी क्षण में है, सारा समय इस क्षण में ही है — इसी पल में। सचमुच, यह एक असाधारण चीज़ है — यह देखना कि भविष्य और अतीत, 'अभी' है। क्या यह एक तथ्य है या तथ्य की एक अवधारणा है?

व० : यहाँ दो चीज़ें हैं : प्रत्यक्ष देखना और कल्पना करना। अभी मैं कल्पना कर रहा हूँ, प्रत्यक्ष नहीं देख रहा हूँ।

कृ० : यह कहने से आपका तात्पर्य क्या है?

व० : कुछ नहीं, लेकिन मैं यहाँ से आगे बढ़ना पसंद करूँगा — धारणा, कल्पना से प्रत्यक्ष दर्शन तक।

कृ० : कल्पना तथ्य नहीं है।

व० : कल्पना एक तथ्य नहीं है, प्रत्यक्ष दर्शन एक तथ्य है और हम सभी कल्पना में, समय में फँसे हैं। कल्पना और समय की समकालिता को तोड़ना होगा। हमें इससे दूर जाना होगा ......

कृ० : यह दूर जानेवाला कौन है?

व० : मेरा मतलब है, प्रत्यक्ष दर्शन के लिए कार्यरत होने के लिए।

कृ० : 'कार्यरत होना,' इस शब्द का मतलब ही समय है।

व० : एक मिनट रुकें। इस बिन्दु पर पहुँच कर यदि मैं कहूँ कि यदि सारा समय इस क्षण में है, तो फिर और कुछ नहीं है।

कृ० : जिसका क्या अर्थ हुआ?

व० : कि आप देखना बन्द कर देते हैं।

कृ० : अब आप पूर्वानुमान कर रहे हैं।

व० : मैं कोई पूर्वानुमान नहीं कर रहा हूँ। यदि संपूर्ण समय यह क्षण ही है ...

कृ० : संभवतः यह अत्यंत असाधारण चीज़ है, बशर्ते कि आप इसकी गहराई में जाएँ। वह करुणा का सार हो सकता है, वह अद्भुत, अपरिभाषेय प्रज्ञा का सार हो सकता है। यदि यह आपके लिए एक वास्तविकता नहीं है तो आप नहीं कह सकते कि सारा समय अभी है। दूसरी बातों का कोई महत्त्व नहीं है। मैं नहीं जानता कि मैं अपने को स्पष्ट कर पा रहा हूँ या नहीं।

सर, यदि इस क्षण में सारा समय मौजूद है, तो फिर वहाँ कोई गति नहीं है। जो मैं अभी करता हूँ, वही मैं कल करूँगा। इस तरह कल अभी है। यदि भविष्य यानी कल अभी है, तो उस हालत में मैं क्या करूँ? मैं लोभी हूँ, ईर्ष्यालु हूँ, और मैं कल भी ईर्ष्यालु रहूँगा। तो क्या लोभ को तत्क्षण ख़त्म करने की कोई संभावना है?

व० : ऐसा करना बहुत कठिन है।

कृ० : यह बिलकुल ही कठिन नहीं है। मैं देखता हूँ कि अगर मैं आज लोभी हूँ, आज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईष्यालु हूँ, तो कल भी ऐसा ही रहूँगा बशर्ते कि इसी क्षण कुछ घटित नहीं हो जाता। यह बहुत ही आवश्यक है कि इसी क्षण कुछ घटित हो। अतः क्या मैं इसी क्षण गुणात्मक रूप से रूपांतरित हो सकता हूँ?

जहाँ यह मूलभूत परिवर्तन है वहाँ एक ऐसी गति है जो समय से संबंधित नहीं है। सर, आप समझ रहे हैं? २५ लाख वर्ष पूर्व हम बर्बर थे। हम अब भी बर्बर हैं, पद-प्रतिष्ठा के लिए लोलुप, परस्पर हत्या करनेवाले, ईष्यालु, तुलना करनेवाले आदि, आदि। आपने मेरे सामने यह चुनौती रखी है कि समय इसी क्षण है। मेरे लिए अब निकलने के रास्ते नहीं हैं, इस आधारभूत सच्चाई से भाग निकलने के लिए मेरे सामने कोई दरवाज़ा नहीं है। मैं स्वयं से कहता हूँ : हे भगवान्, यदि मैं अभी नहीं बदलता तो कल भी अथवा हजारों कल बाद भी ऐसा ही रहूँगा। अतः क्या मेरे लिए मुमकिन है कि मैं तत्क्षण पूर्ण रूप से परिवर्तित हो जाऊँ? मैं कहता हूँ — हाँ।

व० : क्या आप हमें बता सकते हैं कि कैसे?

कृ० : कैसे नहीं, सर। जिस क्षण आप कहते हैं 'कैसे', तो आप पहले से ही समय की प्रक्रिया में होते हैं। मैं आपको यह, यह, यह बताता हूँ और आप कहते हैं कि मैं यह करूँगा — उसे पा लेने के लिए यह। पर आप इसे नहीं पा सकते क्योंकि आप वही हैं जो इस समय है।

व० : इसका मतलब है कि आपके वक्तव्य — सारा अभी है — को सुनने में एक तरह की हमारी संचयवृत्ति है।

व० : सुनने की क्रिया को शुद्ध करना होगा।

कृ० : सर, इस तरह, न ज्ञान है, न ध्यान है और न अनुशासन है। तब सब कुछ रुक जाता है। क्या मैं इस प्रश्न को दूसरे ढंग से रखूँ? उदाहरण के रूप में मान लीजिए कि मैं मरने जा रहा हूँ। 'अभी' और मृत्यु के बीच समय का अन्तराल है, अर्थात् मैं पहली जनवरी को मरूँगा (मैं पहली जनवरी को सचमुच मरने नहीं जा रहा हूँ) डाक्टरों ने मुझे बताया है कि मुझे घातक कैंसर है और मैं जनवरी तक ही जीवित रह पाऊँगा। इस तरह मेरे मरने में कोई दो महीने ब़ाकी रह गये हैं। यदि सारा समय अभी है तो मैं अभी मर रहा हूँ। इस तरह मेरे पास समय नहीं है; मैं समय नहीं चाहता। अतः मृत्यु अभी है। क्या मानव मस्तिष्क हर समय मृत्यु के साथ जी सकता है? आप समझते हैं?

मैं मरने जा रहा हूँ, यह निश्चित है। और कहता हूँ, भगवान के लिए एक मिनट रुकें। परन्तु अगर मैं इस तथ्य का अनुभव करता हूँ कि संपूर्ण समय इसी क्षण में समाविष्ट है तो इसका अर्थ है कि मृत्यु और जीवन एक साथ हैं, ये कभी भी पृथक नहीं है। परन्तु ज्ञान मुझे बाँट कर पृथक् कर रहा है — ज्ञान कि मैं जनवरी के अन्त में मरने जा रहा हूँ — और मैं भयभीत होता हूँ, मैं मृत्यु से कहता हूँ : कृपया रूको, रूको, रूको, मुझे एक वसीयत लिखनी है, मुझे यह करना है, मुझे वह करना है। पर यदि मैं मृत्यु के साथ जीता हूँ तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह कार्य वस्तुतः मैं हर समय कर रहा हूँ, अर्थात् मैं वसीयत करता हूँ और इसी क्षण मैं मर रहा हूँ अर्थात् मैं वस्तुतः जी रहा हूँ। मैं जी रहा हूँ और मृत्यु मेरे पड़ोस में है। इस प्रकार जीने और मरने के बीच अलगाव अथवा विभाजन नहीं है।

सर, क्या आप ऐसा कर सकते हैं अथवा ऐसा करना असंभव है? जिसका आशय है कि मृत्यु कहती है — "आप अपने साथ कुछ नहीं ले जा सकते" आपका ज्ञान, आपकी पुस्तकें, आपकी पत्नी, आपके बच्चे, आपके रुपये-पैसे, आपका चरित्र, आपका दंभ, जो कुछ भी आपने अपने लिए बनाया है — वह सभी अंत में मृत्यु के साथ चला जाता है। आप भले ही कहें कि संभवतः मेरा पुनर्जन्म होगा। पर मैं आप से पूछ रहा हूँ : क्या मैं अभी किसी भी चीज़ के प्रति बिना अल्पतम आसक्ति के जी सकता हूँ? आप इसे टालते क्यों है? मृत्यु के अंतिम क्षणों तक आपकी आसक्ति क्यों बनी रहती है? इसी क्षण आसक्ति से मुक्त हो जाएँ।

व० : क्या हम आपके साथ मौन में बैठ सकते हैं?

कृ० : (सहमत होते हैं।)

व० : आपने परिचर्चा का प्रारंभ इस प्रश्न से किया था कि वह क्या चीज़ है और इस देश में वह चीज़ अभी भी है या नहीं। क्या 'यही' वह चीज़ है?

कृ० : (सहमति में सिर हिलाते हैं; फिर एक लंबे मौन के बाद) आप देखें, यह कठिन नहीं है। यह बहुत आसान है। मैं व्यक्तिगत रूप में कोई ख्याति नहीं चाहता। मैं ऐसा भाव भी नहीं रखना चाहता कि मैं जानता हूँ और आप नहीं जानते। स्वभाव से मैं अत्यन्त विनम्र, अत्यधिक संकोची, दूसरों का आदर करनेवाला और भद्र हूँ। तो आप क्या चाहते हैं? सर, आप समझ रहे हैं? यदि आप उसी तल पर आरंभ कर सकें तो....खैर! इतना काफ़ी है। मैं एक चुटकुला आपको सुनाता हूँ।

हिमालय में तीन साधु रहते थे — सचमुच, यह हिमालय ही हो सकता है। दस साल बीतते हैं, उनमें एक कहता है, "वाह, कितनी सुंदर शाम है।" दस साल और बीतते हैं, दूसरा कहता है, 'लगता है कि पानी बरसेगा।' दस वर्ष और बीत जाते हैं, तीसरा व्यक्ति कहता है, "काश कि तुम दोनों चुप रहते।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बौद्धों के साथ परिचर्चा

११ नवम्बर, १९८५

कृष्णमूर्ति (कृ०) : सर, मैं अनेक प्रश्न उठाना चाहूँगा। क्या कोई ऐसी निर्णायक रेखा है जहाँ स्वार्थ समाप्त होता है और जहाँ से उस स्थिति का आरम्भ होता है जो स्वार्थ नहीं है? हम सभी के स्वार्थ हैं; ज्ञान, भाषा, विज्ञान और हमारे जीवन के प्रत्येक हिस्से में वह है। हमारे जीवन की हर राह में है हमारा स्वार्थ, और उसने भीषण तबाही उत्पन्न की है। कहाँ तक है स्वार्थ का फैलाव? हम कहाँ पर एक रेखा खींच कर कह दें, "यहाँ यह आवश्यक है, और वहाँ यह बिलकुल ही आवश्यक नहीं है?" अपने नित्य के जीवन में; विज्ञान, गणित और ज्ञान के क्षेत्र में नहीं। सैद्धान्तिक रूप में नहीं, मैं तथ्यगत बात कर रहा हूँ।

परिचर्चा में सहभागी (स०) : यदि आप निश्चित शर्तें रख देंगे तो यह प्रश्न बड़ा ही कठिन बन जाएगा, ठीक वैसी ही कठिनाइयाँ जो समाज में हमारे सामने आती हैं; पर अगर आप शर्तें न रखें तो मैं उत्तर देने की कोशिश करूँगा।

कृ० : ठीक, मैं-शर्तें हटा रहा हूँ। नहीं, हटाना नहीं, यही तो जीवन है। मैं शर्त या नियम नहीं बना रहा हूँ। आप कैसे सोचें इसके लिए मैं नियम नहीं बना रहा हूँ, पर जीवन मुझे यह दिखा रहा है कि प्रत्येक कार्य में, संसार के प्रत्येक भाग में स्वार्थ हावी है। धर्म के साथ, कृष्णमूर्ति के विचारों के साथ, सभी प्रकार की चीज़ों के साथ हम खिलवाड़ करते हैं, पर स्वार्थ का सूत्र बहुत मज़बूत है, और मैं स्वयं से पूछता हूँ यह कहाँ से शुरू होता है और कहाँ इसका अंत होता है, अथवा इसका कोई अंत नहीं है? ईश्वर हमारा स्वार्थ है, धार्मिक अनुष्ठान, विद्वता, विज्ञान भी।

स० : जो मैं कहने जा रहा हूँ उसके पीछे मेरा किताबी ज्ञान भी है लेकिन व्यक्तिगत जीवन में जो अनुभव होता है उसके आधार पर भी मैं कुछ कहना चाहता हूँ।

कृ० : हाँ, एक व्यक्ति के रूप में आप जो कुछ अनुभव करते हैं। पुस्तकों एवं अपने अध्ययन आदि के आधार पर आपने और अन्य लोगों ने भी नाना प्रकार से यह प्रश्न उठाया होगा।

स० : जब मैं अपने अस्तित्व को निश्चित रूप से स्वीकार करता हूँ तो मैं स्वयं को कुछ खास श्रेणियों में रख लेता हूँ। इस गहरी आत्म-स्वीकृति के कारण मुझे अपने सारे व्यवहार और परस्पर संबंधों में स्वार्थ की गंध मिलती है। अपने अस्तित्व में मैं इस स्वार्थ से मुक्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होने की कोशिश करता हूँ, और जिस हद तक मैं स्वयं को अस्वीकार कर पाता हूँ उस हद तक स्वार्थ का बोझ अपने ऊपर हल्का कर लेता हूँ।

कृ० : पर वह भी स्वार्थ है।

स० : जितनी गहराई से मैं अपने अस्तित्व को स्वीकार करता हूँ, उतना ही मेरा व्यवहार स्वार्थपूर्ण हो जाता है, और जिस हद तक मैं स्वयं को नकारता हूँ उस हद तक मेरा स्वार्थ भी घट जाता है।

कृ० : नहीं, मेरी बात आप नहीं पकड़ पा रहे हैं। मैं इसे अत्यंत सरल बनाना चाहता हूँ। जितनी अधिक सरलता से हम सोचेंगे उतना ही बेहतर हमारा कर्म होगा और चीज़ों को हम बेहतर ढंग से देख पाएँगे। बचपन से ही समस्याएँ शुरू हो जाती हैं, मुझे स्कूल जाना है, मुझे पढ़ना और सीखना है, मुझे गणित पढ़ना है। सम्पूर्ण जीवन समस्या बन जाता है, क्योंकि मूलतः हम जीवन को समस्या मानकर जीवन का सामना करते हैं। अंग्रेजी भाषा में समस्या का अर्थ है कोई चीज़ जो आप पर डाल दी गयी है। ग्रीक भाषा का शब्द है प्रोबलेमा, इसका अर्थ है कि आप पर कुछ फेंक दिया गया है और आपको उसका जवाब देना है। अतः बचपन से ही, समस्याओं के साथ जीने और उनका समाधान करने के लिए मेरा मस्तिष्क संस्कारित किया गया है — और उन समस्याओं का समाधान कभी भी नहीं हो सकता। मैं यह क्रम बनाए रखता हूँ, एक समस्या के बाद दूसरी समस्या; मेरा सम्पूर्ण जीवन समस्या बन जाता है। समस्या बन जाता है जीना। और मैं कहता हूँ कि मैं इस तरह से जीना नहीं चाहता, इस तरह से जीना ही ग़लत है। इसलिए मैं स्वयं से पूछता हूँ : क्या स्वार्थ ही समस्या उत्पन्न करता है, और क्या मन एवं मस्तिष्क समस्याओं से दूर हो सकता है ताकि वह समस्याओं से निपट सके? क्या आप अन्तर देख पा रहे हैं? मालूम नहीं कि मैं स्वयं को स्पष्ट कर पा रहा हूँ या नहीं। यह एक तथ्य है कि मैं मुझे स्कूल जाना है, सीखना है, पढ़ना है इत्यादि। समस्याओं के साथ रहते-रहते हमारा मस्तिष्क उनका अभ्यस्त हो जाता है। मस्तिष्क ही समस्या बन जाता है। हर चीज़ एक समस्या बन जाती है। तो मस्तिष्क की इस समस्या के समाधान हेतु मैं आपके पास आता हूँ। हो सकता है कि यह समस्या स्वार्थ से जुड़ी हो।

स० : समस्याएँ पैदा करना और उनका समाधान खोजते रहना हमारे जीवन का एक नियम बन गया है, और इस प्रकार समस्याएँ ही हमारे अस्तित्व का निर्माण करती हैं।

कृ० : अतः आपका अस्तित्व ही एक समस्या है। लेकिन आप मेरी बात नहीं पकड़ पा रहे हैं। आपका अस्तित्व देश के साथ, साहित्य के साथ, देवी-देवताओं के साथ अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। इन चीज़ों के साथ आपने अपना तादात्म्य बना लिया है और उन्हीं में अपनी जड़ें स्थापित कर ली हैं, और इसलिए वही आपका अस्तित्व बन गया है। उससे अलग कोई अस्तित्व नहीं है — कोई आध्यात्मिक अस्तित्व वगैरह नहीं। उन सबों में मेरा विश्वास नहीं है, मैं पूरी तरह संशयवादी हूँ। इसलिए मैं स्वयं से पूछता हूँ : मैंने, अथवा आपने, जीवन को ऐसा क्यों बना दिया, जीवन जो सुन्दर रूप से विकसित हो रहे वृक्ष की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाँति जीने के लिए है! मैं तो उस तरह नहीं जी सकता, मैं वैसे नहीं जीऊँगा। ईश्वर है या नहीं आदि बातों में मेरी कोई भी दिलचस्पी नहीं, मैं उन सब बातों का पूर्णतया परित्याग करता हूँ, और मैं स्वयं से कहता हूँ, जिस प्रकार आप जी रहे हैं मैं वैसे नहीं जीऊँगा। उस तरह जीने से बेहतर है कि मैं पहाड़ों, जंगलों में चला जाऊँ। आपने जिन्दगी को नष्ट कर डाला है ज्ञान द्वारा, कम्प्यूटर द्वारा। आपने मेरी ज़िन्दगी को नष्ट कर दिया है — मैं पहाड़ों में जा सकता हूँ, पर इसमें कोई मतलब नहीं है।

स० : आप जीवन को, जीने को बचाना क्यों चाहते हैं? अगर हम इसे तोड़ दें तो उसमें क्या दिक्कत है?

कृ० : मैं जीना चाहता हूँ ऐसा नहीं कह रहा; मेरा आशय यह नहीं है। मैं तो यह प्रश्न करता हूँ : मैं इस ढंग से क्यों जी रहा हूँ? यह पूछ कर तो मैं इसका बचाव नहीं कर रहा हूँ। जीने की इस भयंकर प्रक्रिया से मुझे क्यों गुजरना पड़ता है? काम वासना एक समस्या बन जाती है, खाना एक समस्या बन जाता है, हर चीज़ एक समस्या बन जाती है। और मैं नहीं चाहता कि समस्याएँ रहें। इसका अर्थ यह नहीं कि मुझे जीना अस्वीकार है। मैं समस्याएँ नहीं चाहता, अतः मैं समस्याओं का सामना करता हूँ। चूँकि मेरा मस्तिष्क समस्याओं के बीच काम नहीं कर पाता अतः मैं सभी समस्याओं का सामना कर सकता हूँ।

स० : जो समझा रहे हैं उसमें हमें ऐसा लगता है कि आप समस्याओं को तो नहीं आने देना चाहते या समस्याओं से बाधित होना नहीं चाहते लेकिन अपने अस्तित्व से इनकार भी नहीं करना चाहते। क्या यह बात सही है?

कृ० : नहीं, नहीं। आपने मुझे बिलकुल ग़लत समझा। मैं यह कह रहा हूँ, जन्म से मृत्यु तक जीवन को एक समस्याक्रम रूप में लिया जाता है। स्कूल, कालेज, विश्वविद्यालय, उसके बाद नौकरी, विवाह, सेक्स, बच्चे, उनमें एक नटखट अथवा मेधावी हो सकता है और मैं उस लड़के का इस्तेमाल करता हूँ अथवा उसका शोषण करता हूँ और जीवन-पर्यन्त इसी प्रकार चलता जाता हूँ। तब मृत्यु एक समस्या बन जाती है। और मैं पूछता हूँ, "क्या आगे भी जीवन है?" पुनर्जन्म इत्यादि। मानवजाति ने आज तक जो कुछ किया है उसे आप देख रहे हैं न? यही है जीवन। हमारा मस्तिष्क एकदम सरल क्यों नहीं हो पाता, यह कहने के लिए एकदम स्वतंत्र क्यों नहीं हो पाता कि समस्या है और इसका समाधान करना है? अर्थात्, मस्तिष्क उसका समाधान करने के लिए स्वतंत्र रहे, उसमें एक और समस्या न जोड़े।

स० : सर, मैं तो कहना चाहूँगा कि समस्या कोई बाहर से नहीं आती, समस्या इसी मस्तिष्क में उत्पन्न होती है। हमारा मस्तिष्क इन्हीं समस्याओं पर पलता है। वही समस्या का निर्माण करता है। समस्या को यह तुरन्त उसी क्षण ख़त्म क्यों नहीं कर लेता?

कृ० : क्योंकि इसने किसी भी समस्या का समाधान नहीं किया है।

स० : क्या समाधान का सामर्थ्य मस्तिष्क में है?

कृ० : हाँ, पर हमें निश्चय ही एक अन्तर कर लेना चाहिए, एक बात स्पष्ट कर लेनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिए। हमारा मस्तिष्क केन्द्र है हमारे समस्त स्नायुओं का, लड़ाई-झगड़े वगैरह का। हमारी चेतना का यह केन्द्र है, और इस चेतना को हम अपनी मानते हैं — मेरी चेतना। मैं कहता हूँ कि यह चेतना मेरी नहीं है, कृष्णमूर्ति की यह व्यक्तिगत चेतना नहीं है। और यह चेतना आपकी भी नहीं है, क्योंकि धरती का प्रत्येक आदमी इस यातना से गुज़रता है — पीड़ा, दुःख, क्षणिक सुख, सेक्स, चिन्ता, अनिश्चितता, कुछ बेहतर की आशा इत्यादि। यही है हमारी चेतना। अतः यह चेतना आपकी नहीं है बल्कि यह मानव चेतना है। यह चेतना ही मानवता है। मैं मानवता हूँ — आप सब और मैं नहीं। मैं मानवता हूँ।

स० : मुझे ऐसा लगता है कि हम दो तरह के कर्म ही जानते हैं : एक वह जो मस्तिष्क द्वारा विचारित और निर्णित है, और इसलिए उसमें अनिवार्य रूप से स्वार्थ का बीज मौजूद है, स्वार्थ से प्रेरित है। मैं नहीं समझता कि मस्तिष्क कोई भी ऐसी चीज़ करने में समर्थ है जिसमें स्वार्थ का बीज न हो। क्योंकि यह उसी के लिए बना है। पर ऐसे सहज कर्म भी हैं जिनका अनुभव हम कभी-कभी करते हैं, जो विचार-प्रेरित नहीं हैं बल्कि जिनका जन्म प्रेम से हुआ है। और चूँकि आदमी यह नहीं जानता कि ऐसे सहज कर्म का क्या किया जाए, अतः उसने अन्य चीज़ों का निर्माण कर लिया है — उसने वह सब कुछ विकसित कर लिया है जिन्हें उसका मस्तिष्क अच्छी तरह कर सकता है, जिनका वह हिसाब लगा सकता है, जिनकी उपलब्धि वह कर सकता है, और सम्पूर्ण संसार भरा है ऐसे कर्म और गतिविधियों से। यही बन गया है हमारा जीवन। और वह जो सर्वाधिक जीवंत और महत्वपूर्ण है, यदा कदा ही घटित होता है।

कृ० : फिलहाल हमलोग इस पर चर्चा नहीं करेंगे। मन वस्तुतः मस्तिष्क से भिन्न है — पूर्णतया पृथक्। मस्तिष्क से उसका कोई भी संबंध नहीं है। स्वार्थ से प्रेम का कोई संबंध नहीं है। अभी प्रेम की चर्चा न करें। तथ्य यह है कि प्रेम का अस्तित्व हो सकता है। हमारे भीतर सहानुभूति, स्नेह, दया हो सकते हैं – पर वह प्रेम नहीं है, इसीलिए उसे मैं अलग रखता हूँ। केवल अभी के लिए। प्रेम और स्वार्थ साथ-साथ हो ही नहीं सकते। प्रेम और समस्याओं का साथ संभव नहीं। अतः अगर है तो समस्याओं का कोई अर्थ नहीं है। जहाँ वह है वहाँ समस्याएँ नहीं हैं।

स० : वे साथ-साथ नहीं रह सकते इस पर मुझे पक्का भरोसा नहीं है। वे स्वतंत्र हैं; लेकिन मैं समझता हूँ कि वह व्यक्ति भी जिसमें स्वार्थ है और जिसके पास समस्याएँ हैं यदाकदा मस्तिष्क के हस्तक्षेप के बगैर कर्म करता है — प्रेमवश। अतः मैं नहीं कहूँगा कि मस्तिष्क का अस्तित्व प्रेम को पूरी तरह नकार देता है।

कृष्णमूर्ति : सर, मैं कहूँगा कि यह हुआ कभी-कभी एक अच्छा अण्डा खा लेना। पर मुझे तो अच्छा अण्डा प्रतिदिन चाहिए — कभी-कभी नहीं। इसलिए मैं आप सबों से पूछता हूँ, स्वार्थ कहाँ प्रारम्भ होता है और कहाँ समाप्त होता है? स्वार्थ का कहीं अंत भी है? अथवा स्वार्थ से ही समस्त कर्म उत्पन्न होते हैं। "कभी-कभी", ऐसा नहीं कहिए। उसमें मेरी रुचि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं है। यदाकदा खिड़की के बाहर मैं देख लेता हूँ और वह खिड़की बड़ी ही सँकरी है; मैं कैदखाने में हूँ। अतः मेरी बात पर कृपया एक मिनट ग़ौर करें। ब्रह्माण्ड में अद्‌भुत व्यवस्था है। 'ब्लैक होल' उसी व्यवस्था का एक अंग है। जहाँ आदमी पहुँचता है वहाँ वह अव्यवस्था पैदा कर देता है। अतः मैं पूछता हूँ, क्या मैं जो एक मानव के रूप में शेष मानवता हूँ, सर्वप्रथम स्वयं अपने भीतर व्यवस्था उत्पन्न कर सकता हूँ? व्यवस्था का अर्थ है कि स्वार्थ नहीं रहे।

स० : समस्या यह है कि सामूहिक चेतना को मानकर उस केन्द्र को अस्वीकार कर देना आसान नहीं है जो स्वयं का निर्माण एक सीमित स्व के रूप में कर लेता है, एक संग्रहवृत्ति वाला स्व, जिसके लिए सभी समस्याएँ वास्तविक हैं, काल्पनिक नहीं। मेरा मतलब है कि हमारे सामने बीमारियाँ हैं, मृत्यु है — यह कैसे संभव है कि इन्हें समस्या नहीं माना जाए?

कृ० : क्या आप यह कह रहे हैं कि स्व ही समस्या है? हम इसे एक समस्या क्यों बना देते हैं? आप ऐसा क्यों कहते हैं कि स्व ही समस्या है? संभवतः हम इसे एक समस्या का रूप दे देते हैं और तब कहते हैं, "मैं इससे बाहर कैसे निकलूँ? हम समस्या पर ग़ौर नहीं करते। हम नहीं कहते कि स्व ही समस्या है, मुझे इसे समझने दीजिए, मुझे इस कीमती रत्न को ग़ौर से देखने दीजिए — बिना इसकी निंदा करते हुए। निंदा ही समस्या है। आप मेरा आशय समझ रहे हैं? अतः हम इसकी निंदा नहीं करेंगे, इसका दमन नहीं करेंगे, इसको नकारेंगे नहीं, इसका अतिक्रमण नहीं करेंगे। बल्कि पहले हम इसे ग़ौर से देखें।

स० : सर, मान लें कि एक आदमी के शरीर में काँटा चुभा है और वह दर्द का अनुभव करता है। काँटे का दर्द वैसा ही जैसा विवशताओं तथा समस्याओं से ग्रस्त स्व का दर्द।

कृ० : नहीं, सर। यदि मेरे पैर में काँटा चुभा है, तो मैं उसे पहले देखता हूँ, मैं अवगत होता हूँ दर्द से। मैं स्वयं से पूछता हूँ : मैंने उसपर पाँव रखा ही क्यों? मैं क्यों सचेत नहीं था? मेरे देखने में यानी मेरी आँखों में क्या दोष है? मैं कहाँ जा रहा हूँ यह मैंने देखा क्यों नहीं? मैं जानता हूँ कि यदि मैंने देख लिया होता तो छूता तक नहीं। अर्थात् मैंने उसे नहीं देखा। जब दर्द हुआ तभी कुछ करने का प्रश्न उठा। वह चीज़ मेरे पाँव के सामने थी पर मैंने उसे नहीं देखा। तो मेरे देखने में खोट है। इसलिए मैं पूछता हूँ, मेरे मस्तिष्क को क्या हो गया कि उसने उसे नहीं देखा। संभवतः वह किसी और चीज़ के संबंध में सोच रहा था। जब मैं रास्ते में था तो वह किसी और चीज़ के बारे में क्यों सोच रहा था? आप समझ रहे हैं न?

स० : लेकिन मनोवैज्ञानिक समस्याओं के मामले में तो द्रष्टा और दृश्य आपस में बुरी तरह उलझे हुए हैं।

कृ० : नहीं। हम विषय से दूर जा रहे हैं। हम केवल एक मसले पर, एक मुद्दे पर रहें। स्वार्थ कहाँ प्रारम्भ होता है और कहाँ वह समाप्त होता है? क्या उसका कभी अंत होता भी है? और अगर उसका अंत होता है, तो वह कौन सी अवस्था है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स० : क्या मैं एक उत्तर प्रस्तुत करने का साहस करूँ? शायद स्व के साथ ही स्वार्थ आता है और स्व आता है शरीर के साथ।

कृ० : मैं निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता।

स० : वे दोनों साथ-साथ चलते हैं। मैंपन का भाव और मेरा अस्तित्व में आना, ये दोनों साथ-साथ चलते हैं।

कृ० : आप ऐसा कहते हैं, पर मैं वैसा नहीं कहता।

स० : मेरी समझ से तो शरीर के अस्तित्व में आने के साथ ही स्व का भाव आ जाता है, और स्व तथा स्वार्थ साथ-साथ चलते हैं। स्व के समाप्त होने पर ही स्वार्थ समाप्त हो सकता है। और जब तक शरीर है स्व का कुछ अंश कायम रहेगा। अतः, परम अर्थ में मृत्यु के साथ ही यह ख़त्म होगा। उसके पहले स्वार्थ को देखने से हम केवल उसको सूक्ष्म कर सकते हैं, लेकिन जब तक शरीर क़ायम है हम पूरी तरह ख़त्म नहीं कर सकते। मैं तो इसे ऐसा देखता हूँ।

कृ० : मैं समझ रहा हूँ। खोज के आधार पर वैज्ञानिक बता रहे हैं कि शिशु जब जन्म लेता है और स्तनपान करता है तो वह स्वयं को सुरक्षित अनुभव करता है और वह यह सीखने लगता है कि माँ की सखी कौन है, कौन उससे भिन्न तरह का बरताव करते हैं, कौन उसके खिलाफ हैं। चूँकि उसकी माँ यह सब अनुभव करती है तो उसे भी यह लगने लगता है। उसे यह माँ से मिलता है कि मित्र कौन है, कौन मित्र नहीं है। शिशु माँ पर भरोसा करना शुरू करता है। तो वहीं से शुरू होता है। गर्भ में वह बहुत सुरक्षा महसूस करता था और अचानक अब वह बाहर संसार में आया तो उसे महसूस होने लगा कि उसकी सुरक्षा केवल माँ है। वहाँ वह सुरक्षित अनुभव करने लगा। और यही है हमारा जीवन। लेकिन क्या कहीं कोई सुरक्षा है?

स० : सर, मेक्सिको के भूकम्प में अनेक शिशुओं को ज़मीन के नीचे ग्यारह दिनों तक पूरी तरह दबे रहने के बाद भी जीवित पाया गया और उन नवजात शिशुओं को कोई क्षति नहीं पहुँची थी। मेक्सिको के राजदूत मुझे बता रहे थे कि शिशु को जब मलवे के नीचे अँधेरी जगह से बाहर निकाला गया तो उसकी प्रतिक्रिया ठीक वैसी ही थी जैसी गर्भ के बाहर आने के बाद होती है।

कृ० : मानो वह अभी भी गर्भ में ही था।

स० : सर, आत्म-रक्षा की सहज प्रवृत्ति जानवरों में भी होती है, पर जब वह मनुष्य के रूप में विकसित हुआ तो उसने समस्याएँ पैदा करना शुरू कर दिया। जानवर समस्याएँ पैदा नहीं करते। यदि हम वैज्ञानिकों के इस कथन पर विश्वास करें कि मनुष्य जानवर से ही विकसित हुआ है, तो उसमें वे सारी मूल प्रवृत्तियाँ मौजूद हैं जो जानवरों में पायी जाती हैं। मूलभूत अन्तर यह है कि इन प्रवृत्तियों के अतिरिक्त आदमी में सोचने की क्षमता भी है, और सोचने की इस क्षमता ने ही इन सारी समस्याओं को भी उत्पन्न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया है। और जो आप पूछ रहे हैं वह यह है : क्या इस क्षमता का उपयोग समस्या उत्पन्न करने में नहीं बल्कि कोई सर्वथा भिन्न कार्य करने में हो सकता है?

कृ० : हाँ, सर, बिलकुल ठीक।

स० : मस्तिष्क सभी समस्याओं का स्रोत है। इसने स्व उत्पन्न किया है तथा सभी समस्याएँ भी उत्पन्न की हैं। आप संकेत कर रहे हैं कि मस्तिष्क समस्याओं का अंत कर सकता है। तब मस्तिष्क जिसने समस्याओं का अंत कर लिया है और मन, इन दोनों में क्या अन्तर है?

स० : आपने कहा कि मस्तिष्क समस्याओं का स्रोत है और मस्तिष्क से ही समस्याओं का अंत होता है। उस अंत के साथ ही जो मस्तिष्क शेष रह जाता है वह सोचता है, अवलोकन करता है एवं सूचनाएँ ग्रहण करता है। उस मस्तिष्क और मन में क्या अन्तर है?

कृ० : मैं समझ रहा हूँ, मैं समझ रहा हूँ। एक मिनट रुकिए। देखिए, आप जो प्रश्न पूछ रहे हैं उसमें मृत्यु निहित है। उस प्रश्न का उत्तर देने के पहले मुझे निश्चय ही यह बताना चाहिए कि मृत्यु क्या है। एक इतालवी कहावत है : सारा संसार मरने वाला है, शायद मैं भी। इसका मतलब आप समझ रहे हैं न? तो, मृत्यु क्या है? हम यह तो जानते हैं कि जन्म क्या है — माँ, बाप इत्यादि, और शिशु जन्म लेता है तथा इस असाधारण त्रासदी से गुज़रता है। यह सचमुच एक त्रासदी है। यह कोई आनंद नहीं है। शेक्सपीयर के किसी भी दुखांत नाटक से कहीं बड़ी त्रासदी है यह। तो हम जानते हैं कि जन्म क्या है। अब, मृत्यु क्या है? मैं आपसे पूछ रहा हूँ, आप मुझे बताएँ।

स० : उस दिन जब हमलोग समय के संबंध में चर्चा कर रहे थे तो आपने एक ऐसे 'अब' अर्थात् तत्क्षण का ज़िक्र किया जिसमें सम्पूर्ण काल है, जीवन और मृत्यु दोनों। मस्तिष्क, जिसमें जीवन के प्रवाह को देख सकने की क्षमता है कि वह उस अंत को भी उजागर कर सकता है जो मृत्यु है। यही उत्तर है।

कृ० : मैंने कहा था कि हमारा जीना है आसक्ति, पीड़ा, भय, सुख, चिन्ता, अनिश्चितता यानी यह सब और मृत्यु वहाँ और बहुत दूर है। सावधानीपूर्वक मैं उससे एक दूरी बनाये रखता हूँ। मेरे पास सम्पत्ति है, पुस्तकें हैं, जवाहरात हैं; यही है हमारा जीवन। मैं इसे यहाँ रखता हूँ और मृत्यु वहाँ है। मेरा कहना यह है कि इन दोनों को साथ-साथ रखिए, वरन अभी। इसका अर्थ है अभी इनका अंत कीजिए, क्योंकि मृत्यु बिलकुल यही बात कहने जा रही है। मृत्यु कहती है कि आप कुछ भी अपने साथ नहीं ले जा सकते। अतः मृत्यु को आमंत्रित कीजिए — आत्महत्या नहीं — मृत्यु को बुलाइए और उसके साथ रहिए। मृत्यु अभी है, कल नहीं।

स० : इसमें कुछ कमी लग रही है। मृत्यु को अभी आमंत्रित कर सकता हूँ और थोड़े समय के लिए मस्तिष्क बिलकुल शांत भी हो सकता है, किन्तु फिर सारी बातें लौट आती हैं और उसी के साथ लौट आती है जीवन की समस्या।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृ० : नहीं, नहीं। अमुक व्यक्ति के साथ मेरा लगाव है, वह मेरा मित्र है, मैं उसके साथ रहा हूँ, हम साथ-साथ टहले हैं, हम साथ-साथ खेले हैं, वह मेरा साथी है, और मेरा उससे लगाव है। मृत्यु मुझसे कहती है, "आप उसे अपने साथ नहीं ले जा सकते।" इसलिए मृत्यु मुझे बताती है, "स्वयं को अभी मुक्त कर लो, दस वर्ष बाद नहीं।" और मैं कहता हूँ, "बिलकुल ठीक, मैं उस मित्र से मुक्त हो जाऊँगा।" यद्यपि अभी भी मैं उसका मित्र हूँ, परंतु मैं उस पर ज़रा भी निर्भर नहीं हूँ। क्योंकि, मैं उसे अपने साथ ले नहीं जा सकता। इसमें क्या गड़बड़ी है? आप इसके तो विरुद्ध नहीं है न?

स० : इसका अर्थ हुआ, सर, हमें समस्त तुष्टियों को समाप्त कर देना है।

कृ० : नहीं, मैं यह नहीं कह रहा हूँ। मैंने कहा आसक्ति।

स० : समस्त लगाव, आसक्तियाँ।

कृ० : बस, इतना ही।

स० : सर, जब तक दो शरीरों का अस्तित्व है, तब तक समस्त आसक्ति का अंत करना क्या संभव है?

कृ० : जी हाँ, सर। हमलोगों के शरीर एक साथ जुड़े हुए नहीं हैं। ये दो अलग-अलग शरीर हैं। मनोवैज्ञानिक रूप से मैं उसे मित्र मानता हूँ और धीरे-धीरे भीतर से मैं उसके प्रति आसक्त हो जाता हूँ। बाहर से मैं उससे जुड़ा नहीं हूँ क्योंकि वह इस रास्ते पर जाता है और मैं दूसरे — वह शराब पीता है, मैं नहीं पीता, इत्यादि। पर फिर भी वह मेरा मित्र है। और मृत्यु आकर कहती है, 'आप उसे अपने साथ नहीं ले जा सकते।' यह एक तथ्य है। अतः मैं कहता हूँ, बिलकुल ठीक, मैं अब अनासक्त हो जाऊँगा।

स० : सर, क्या यह सच नहीं है कि समस्या इसलिए नहीं आती कि हम अपने मित्र से या अपनी पत्नी से सुख पाते हैं, वरन् उस सुख का इस्तेमाल हम अपनी परिपूर्णता के लिए करने लगते हैं, और इसीलिए हम उसकी निरन्तरता चाहते हैं और इस प्रकार उस व्यक्ति को हम अपने वश में रखना चाहते हैं?

कृ० : हाँ। अतः संबंध क्या है? अभी हम लोग इस विषय की छानबीन नहीं करेंगे, हमलोगों के पास समय नहीं है। सर, आप देखिए कि आप मेरी बात का जवाब नहीं दे रहे हैं। मैंने आपसे पूछा था : स्वार्थ का प्रारंभ कहाँ होता है? और अंत कहाँ होता है? क्या उसका अंत करना किसी भी अन्य बात से अधिक महत्व का है? अंत करना। और वह कौन सी अवस्था है जहाँ स्वार्थ बिलकुल ही नहीं है? क्या वह मृत्यु है? जिसका अर्थ है अंत। मृत्यु का अर्थ है अंत। मृत्यु का अर्थ है अंत। हर चीज का अन्त। इसलिए मृत्यु कहती है, "प्रज्ञावान बनो, — मृत्यु के साथ-साथ जिओ।"

स० : इसका अर्थ है मृत हो जाओ पर शरीर को ज़िंदा रखो। हर हालत में वह मृत्यु तो आने वाली है।

कृ० : शरीर? इसे पक्षियों को दे दो या नदी में फेंक दो। परंतु मनोवैज्ञानिक तल पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो मैंने यह विशाल ढाँचा खड़ा किया है, उसे मैं अपने साथ नहीं ले जा सकता।

स० : सर, क्या यह एक मूल प्रवृत्ति है? क्या वह एक ऐसी चीज़ है जो हमें 'जीन्स' के माध्यम से विरासत में मिली है?

कृ० : हाँ शायद। पर जानवर इस ढंग से नहीं सोचते; मैंने अनेक जानवरों की गतिविधियों को ग़ौर से देखा है।

स० : नहीं, इसलिए मैं नहीं जानता कि यह मूल प्रवृत्ति है।

कृ० : मैं यही कह रहा हूँ। सर, इसे मूल प्रवृत्ति न बना डालिए।

स० : आप कौन सा चुटकुला हमें सुनाने जा रहे थे?

कृ० : एक आदमी मर जाता है और स्वर्ग में अपने मित्र से मिलता है। वे बातें करते हैं और वह कहता है, "यदि मैं सचमुच मर गया हूँ, तो मैं इतना बेचैन क्यों अनुभव कर रहा हूँ?"

राजघाट, ११ नवंबर, १९८५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वार्ता

१८ नवम्बर, १९८५

सहज जिज्ञासा होती है कि आप सब लोग यहाँ क्यों उपस्थित हैं। हम सभी लोग गंगा के तट पर यहाँ क्यों इकट्ठे हुए हैं? यदि सचमुच कोई गम्भीरतापूर्वक यह पूछे तो आपका क्या उत्तर होगा? क्या केवल इसलिए चूँकि आपने इस व्यक्ति को पहले भी अनेक बार सुना है, अतः आपने सोचा कि चलो, फिर सुना जाए? यह वक्ता जो कहता है और आप जो करते हैं उनमें क्या कोई सम्बन्ध है? अथवा ये दोनों भिन्न वस्तुएँ हैं? अर्थात् इसे जो कुछ कहना है उसे आप सुन भर लेते हैं और दैनिक जीवन में पुराने ढर्रे पर ही चलते रहते हैं। तो क्या आपने इस प्रश्न को समझा?

हम लोग साथ-साथ चर्चा करने जा रहे हैं, किन्हीं गूढ़ और सैद्धान्तिक समस्याओं पर नहीं, बल्कि पुराने दोस्तों की तरह इस वृक्ष के नीचे बैठ कर अपने दैनिक जीवन के सम्बन्ध में बातें करने जा रहे हैं, जो किसी भी सैद्धान्तिक और गूढ़ समस्या से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। हमारे पास अनेक समस्याएँ हैं — कैसे ध्यान किया जाए, किस गुरु का अनुसरण किया जाए — यदि अनुसरण करना चाहते हैं — कौन सी साधना की जाए, आपकी दिनचर्या कैसी हो, आदि। साथ ही, हमारा प्रकृति से क्या सम्बन्ध है, सभी वृक्षों, नदियों, पर्वतों, मैदानों और घाटियों से क्या संबंध है? वृक्ष से, पुष्प से, पास से गुज़रते हुए पक्षी से क्या संबंध है? और हमारा परस्पर क्या सम्बन्ध है, वक्ता के साथ नहीं, बल्कि एक-दूसरे के साथ, अपनी पत्नी के साथ, अपने पति के साथ, अपने बच्चों के साथ, समस्त वातावरण के साथ यानी सरकार, समाज और पड़ोसियों के साथ। इन सब के साथ हमारा क्या सम्बन्ध है? अथवा क्या हम बिलकुल अलग-अलग हैं — अपने ही बारे में चिन्तित एवं अपनी ही जीवन-चर्या में पूरी तरह लिप्त?

ये सारे प्रश्न एक सच्चे मित्र के रूप में पूछे जा रहे हैं न कि एक गुरु के रूप में। वक्ता का उद्देश्य आपको किसी भी प्रकार प्रभावित करना नहीं है, न यह बताना है कि आप क्या करें, न आपकी किसी प्रकार सहायता करना है। इस पूरी वार्ता के दौरान आप इस बात को अपने ध्यान में रखें कि आपकी सहायता करने का मेरा कोई उद्देश्य नहीं है। मैं आपको इसका कारण, इसका तर्क दूँगा। आपके अनेक गुरु रहे हैं, हज़ारों सहायक रहे हैं — ईसाई, हिन्दू और बौद्ध सहायक, हर प्रकार के नेता भी हैं आपके, केवल राजनीतिक ही नहीं अपितु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथाकथित धार्मिक भी। आपके बड़े से बड़े तथा छोटे से छोटे नेता भी रहे हैं। पर इस लम्बे विकास के अन्त में आप कहाँ हैं?

माना जाता है कि २५ लाख वर्षों से हम इस धरती पर रहते आये हैं और इस लम्बे विकास क्रम के दौरान हम सदा बर्बर रहे हैं। हम पहले से अधिक साफ़-सुथरे भले ही हों तथा संचार, स्वास्थ्य, परिवहन आदि भी बेहतर हुआ हो, परन्तु नैतिक रूप से, साथ ही आध्यात्मिक रूप से, यदि इस शब्द का प्रयोग मैं करूँ तो, इनमें अभी भी हम बर्बर हैं। हम एक दूसरे की हत्या करते हैं, केवल युद्ध में नहीं अपितु शब्दों से भी, हाव-भाव से भी। हम अत्यधिक प्रतिस्पर्धात्मक हैं। हम अत्यंत महत्त्वाकांक्षी हैं। हर व्यक्ति अपने ही बारे में चिंतित है। हमारे जीवन में स्वार्थ ही सर्वोपरि है। स्वार्थ अर्थात् अपने ही कल्याण, सुरक्षा, सम्पत्ति, सत्ता आदि की चिन्ता। क्या हम अपने लिए ही आध्यात्मिकता, धर्म, व्यापार आदि में चिन्तित नहीं है? सारे विश्व में प्रत्येक व्यक्ति अपने 'स्व' से ही आवृत्त और चालित है, जिसका अर्थ है स्वयं को बाक़ी मानवता से अलग करना। यह एक तथ्य है, हम अतिशयोक्ति नहीं कर रहे हैं। हम कोई ऐसी चीज़ नहीं कह रहे हैं जो कि सत्य नहीं है।

आप जहाँ कहीं भी जाएँ — वक्ता समय-समय पर सारे विश्व में घूमा है, अब भी जगह-जगह जाता है — तो आप क्या देखते हैं? विनाशकारी शस्त्रों में वृद्धि, हिंसा, धर्मान्धता, असुरक्षा एवं अनिश्चितता की गहरी भावना तथा पार्थक्य के यानी स्व-पर के गहरे भाव, आप और मैं का द्वंद्व। यही तो मानवता का सामान्य स्वर है। हम तथ्यों का सामना कर रहे हैं, न कि सिद्धान्तों का या किसी सैद्धान्तिक, दार्शनिक वक्तव्य का। हम तथ्यों को देख रहे हैं, न कि मेरे तथ्य जो कि आपके तथ्यों के विपरीत हैं। जैसा कि आप जानते हैं, विश्व का प्रत्येक देश शस्त्रों के संग्रह में लगा है चाहे वह निर्धन हो या धनी। आप अपने ही देश को देखें जहाँ अत्यधिक निर्धनता, अव्यवस्था और भ्रष्टाचार है, परंतु यह शस्त्रों के संग्रह में लगा है। पहले तो एक तलवार ही दूसरे की हत्या का साधन थी, अब तो आप एक एटम बम या न्यूट्रॉन बम के सहारे लाखों लोगों को मिटा सकते हैं। व्यापक क्रान्ति हो रही है जिसके बारे में हम बहुत कम जानते हैं। तकनीकी प्रगति इतनी तेज़ है कि रातों-रात कोई नया आविष्कार हो जाता है, पर नैतिकता के धरातल पर हम वही हैं जो लाखों वर्ष पूर्व थे। आप इस विषमता को समझ रहे हैं? तकनीकी दृष्टि से कम्प्यूटर मनुष्य से कई गुना अधिक सोच सकता है। वह नयी ध्यान-पद्धति का, नये ईश्वर का, नये सिद्धान्तों का आविष्कार भी कर सकता है। तब मनुष्य के, अर्थात् आपके और मेरे, मस्तिष्क का क्या होगा? कम्प्यूटर प्रायः वह सभी कुछ कर सकता है, जिन्हें करने की एक आदमी क्षमता रखता है। यह केवल सैद्धान्तिक रूप से सच नहीं है बल्कि ऐसा अभी घटित हो रहा है। अतः हम मनुष्यों का अब क्या होगा?

हम मनोरंजन चाहते हैं। संभवतः आपका यहाँ होना भी आपके मनोरंजन का ही हिस्सा है। यहाँ आना, बैठना, सुनना, सहमति अथवा असहमति जताना और दैनिक कार्यों में जुट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाने के लिए वापस घर चले जाना। यह मनोरंजन का ही एक भाग है, उसी तरह जैसे कि गिरजाघर, मन्दिर, मस्जिद में जाना या इस देश में फुटबाल, क्रिकेट देखने जाना मनोरंजन है। कृपया इस वार्ता को मनोरंजन न समझें। आप और मैं यानी वक्ता साथ-साथ सोचें, न कि आप केवल शान्त बैठे रहें और किसी विलक्षण वातावरण को आत्मसात करें, कुछ पुण्य अर्जित करें। क्षमा करें, यहाँ ऐसा कुछ भी नहीं है।

हम साथ-साथ समझदारी से, तर्कपूर्वक सोचने जा रहे हैं। हम एक ही वस्तु को साथ-साथ देखें। यह नहीं कि आप किस तरह देखते हैं और मैं किस तरह, बल्कि हम साथ-साथ अपने दैनिक जीवन का अवलोकन करें जो कि अन्य किसी भी चीज़ से कहीं ज़्यादा महत्वपूर्ण है — दिन के प्रत्येक क्षण का अवलोकन। अतः हम पहले साथ-साथ सोचने जा रहे हैं, न कि केवल सुनने, सहमत या असहमत होने — वैसा करना बहुत आसान है। अच्छा हो कि आप सहमति और असहमति को एक ओर रख दें। अधिकांश ऐसे लोगों के लिए जो कि सहमत और असहमत होने के लिए अत्यंत उत्सुक रहते हैं ऐसा कर पाना अत्यन्त कठिन है। हमारी प्रतिक्रियाएँ इतनी तेज़ है कि हम, हर व्यक्ति एवं वस्तु को धार्मिक, अधार्मिक, सांसारिक आदि श्रेणियों में वर्गीकृत कर देते हैं। यदि संभव हो तो कम से कम आज प्रातः आप सहमति और असहमति को पूरी तरह से एक तरफ़ रख दें और केवल साथ-साथ देखें, साथ-साथ सोचें। क्या आप ऐसा करेंगे? आप अपनी धारणा और मेरी धारणा, अपनी विचारधारा तथा दूसरे की विचारधारा को पूर्णतः एक तरफ हटा दें। एवं साथ-साथ देखें और सोचें।

सहमति और असहमति लोगों को विभक्त करती है। ऐसा कहना तर्क-विरुद्ध होगा कि ठीक है, मैं आपसे सहमत हूँ या मैं आपसे सहमत नहीं हूँ, क्योंकि इसका तात्पर्य है कि आप अपनी धारणा, अपने निर्णय, अपने मूल्यांकन का प्रक्षेपण कर रहे हैं, उन्हें पकड़े हुए हैं या जो कहा जा रहा है उसको अस्वीकार करते हैं। यदि आप चाहें तो खेल के लिए ही सही, केवल मनोविनोद के लिए अथवा मनोरंजन के लिए ही सही क्या आप इस क्षण अपनी धारणाओं, अपने निर्णय, सहमति और असहमति की अभिव्यक्ति को भुला सकेंगे ताकि केवल एक निर्मल, स्वस्थ मस्तिष्क आपके पास हो न कि भक्तिपूर्ण, भावपूर्ण अथवा रूमानी मस्तिष्क — ऐसा मस्तिष्क जो स्पष्टता से सोच सके तथा जो सिद्धान्त, धारणाओं, स्वीकृति, असहमति की जटिलता में न फँसे। क्या हम ऐसा कर सकते हैं?

आइए, अब आगे बढ़ें। विचारणा या विचार की प्रक्रिया क्या है? संसार में हर मानव —निरे अबोध, निरे असभ्य, छोटे से गाँव के अत्यन्त साधारण व्यक्ति से लेकर अत्यधिक विवेकशील वैज्ञानिक तक इन सबमें आपने एक समानता देखी होगी। वह है : विचारणा, सोचने की क्रिया, जो सब में समान है। गाँव का रहने वाला जिसने कभी कुछ नहीं पढ़ा तथा स्कूल, कालेज, विश्वविद्यालय नहीं गया और यहाँ आपमें अधिकांश जो कि शिक्षित हैं, वे सभी सोच-विचार करते हैं। इस प्रकार आप भी सोचते हैं और गाँव का एक साधारण आदमी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी सोचता है। जो आदमी हिमालय में अकेला रहता है, वह भी सोचता है। ठीक है न? सोचने की यह क्रिया मनुष्य में आरंभ से चली आ रही है। अतः आप सबसे पहले यह पूछें कि विचारणा क्या है। वह क्या है जिसके बारे में आप सोच-विचार किया करते हैं? क्या आप पहले इस प्रश्न का उत्तर देंगे? पुस्तकों से नहीं, गीता से नहीं और न ही उपनिषद्, बाइबिल या क़ुरान से।

विचारणा क्या है? हम विचारणा के तल पर ही जिया करते हैं। हमारे दैनिक कार्य सोच-विचार पर आधारित होते हैं। आप भले ही एक प्रकार से सोचें और दूसरा भिन्न प्रकार से, यह भी विचारणा ही है। अतः यह क्या है? यदि आपके पास स्मृति न हो तो क्या आप सोच सकते हैं। क्या आप पीछे की ओर या आगे की ओर सोच सकते हैं? आप कल या अगले घंटे क्या करेंगे अथवा आपने कल या आज सबेरे क्या किया था? आप आगे-पीछे सोच सकते हैं और इसे कम्प्यूटर जगत् में 'आर्किटेक्चर' कहते हैं। अतः हम साथ-साथ पता लगाएँ — विचार की प्रक्रिया अपने आप में क्या है, न कि भारतीय प्रकार की विचारणा, अथवा यूरोपीय प्रकार की विचारणा या बौद्धों की विचारणा अथवा हिन्दू-मुस्लिम, ईसाई अथवा अन्य मत की। जब तक हम सचमुच विचार की प्रक्रिया नहीं समझ जाते, तब तक हमारा जीवन अत्यंत सीमित होगा। अतः हम अत्यधिक गहराई से तथा गंभीरता से विचार-प्रक्रिया का पता लगाएँ। हम अत्यन्त सूक्ष्मता से विचारणा की समस्त प्रक्रिया का परीक्षण करें जो कि हमारे जीवन को निश्चित संरचना प्रदान करती है। मानव ने ही अपनी विचारणा से ईश्वर की सृष्टि की है, ईश्वर ने मनुष्य की सृष्टि नहीं की है। वह अतीव दयनीय ईश्वर होगा जिसने इन मानव प्राणियों की सृष्टि की होगी जो निरंतर परस्पर लड़ रहे हैं। अतः विचारणा क्या है और हमने इससे अनेक समस्याओं को क्यों निर्मित कर लिया है?

हम सूक्ष्मता से परीक्षण करें कि हमारे साथ समस्याएँ क्यों हैं — राजनीतिक समस्याएँ, वित्तीय समस्याएँ, आर्थिक समस्याएँ, एक धर्म की अन्य धर्मों के विरुद्ध समस्याएँ अथा अन्य हज़ारों समस्याएँ। समस्या क्या है? 'प्राबल्म' शब्द का क्या अर्थ है? अंग्रेजी शब्दकोष के अनुसार इसका अर्थ है : वह जो आप पर फेंका गया हो, कोई चुनौती, कोई ऐसी चीज़ जिसे आपको देखना है, जिसका सामना करना है। आप इससे बच नहीं सकते, आप इससे भाग नहीं सकते, आप इसे दबा नहीं सकते। यह घायल अँगूठे की तरह मौजूद है। ऐसा क्यों है कि हमारे सम्पूर्ण जीवन में, जब से हम पैदा हुए तब से मृत्यु पर्यन्त हमारे पास मृत्यु की, भय की एवं सैकड़ों तरह की समस्याएँ हुआ करती हैं? क्या यह प्रश्न आप पूछ रहे हैं या आपकी तरफ़ से मैं ही यह प्रश्न पूछ रहा हूँ? जब आप पैदा होते हैं तभी से आपके लिए समस्याएँ शुरू हो जाती हैं। आप स्कूल जाते हैं, वहाँ आपको पढ़ना-लिखना होता है जो बच्चे के लिए एक समस्या है। गणित सीखना है तो वह भी एक समस्या है। माँ कहती है कि ऐसा करो, ऐसा न करो और वह भी एक समस्या है। अतः बचपन से ही हम समस्या में पला करते हैं। हमारा मस्तिष्क समस्याओं से संस्कारित है। यह कभी भी समस्याओं से मुक्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं रहता। आप जैसे-जैसे बड़े होते हैं, किशोर होते हैं आपके सामने समस्या होती है कि कामवासना में पड़ें या न पड़ें, कैसे धन कमाएँ, कौन सा काम करें, समाज का अनुसरण करें या नहीं, विद्रोह करें या नहीं और अन्त में आप समाज के, वातावरण के सामने झुक जाते हैं। संसार में हर राजनीतिज्ञ जहाँ एक समस्या का समाधान करता है वहीं उसी समाधान से अनेकानेक अधिक जटिल समस्याओं को उत्पन्न कर देता है। क्या आपने इन सब पर ध्यान नहीं दिया है? इस खोपड़ी के भीतर सिमटा हुआ मानव-मस्तिष्क स्वयं एक समस्या है। तो क्या मस्तिष्क कभी समस्याओं से पूर्णतः मुक्त होकर समस्याओं के समाधान के लिए सक्षम हो सकता है? आप मेरा प्रश्न समझ रहे हैं? यदि मस्तिष्क समस्याओं से ग्रस्त है, तो यह किस प्रकार किसी समस्या का समाधान करने में सक्षम होगा? यह प्रश्न तर्क संगत है। इस तरह आपका मस्तिष्क, जो खोपड़ी के भीतर है, जो स्मृतियों को संचित रखता है तथा जिसने व्यापक तकनीकी ज्ञान अर्जित कर लिया है, ऐसा मस्तिष्क समस्याओं को सर्वदा धारण करने एवं पोषित करने के लिए शिक्षित किया गया है। अतः अब हम जानना चाहते हैं कि क्या आपका मस्तिष्क स्वयं समस्याओं से पूर्णतः मुक्त स्थिति में होगा ताकि वह समस्याओं का समाधान करने में समर्थ हो सके? क्या आप पहले समस्याओं से मुक्त हो सकते हैं? अथवा क्या ऐसा असंभव है? मस्तिष्क संकीर्ण धर्मों से तथा विविध विषयों के पांडित्यपूर्ण ज्ञान से संस्कारबद्ध है। हमारा मस्तिष्क अपने पर्यावरण से, जिसमें कि हम रहते हैं, हमारी अपनी शिक्षा से, अपने धर्म से, ग़रीबी अथवा रईसी से, संन्यासी के रूप में की गयी प्रतिज्ञाओं से संस्कारग्रस्त है। (मैं नहीं जानता कि संन्यासियों ने इन प्रतिज्ञाओं को जो कि उनके लिए एक यातना, एक यंत्रणा है, एक समस्या है, इन संकल्पों को क्यों अपना लिया है।) इस प्रकार हमारा मन एक व्यापारी के रूप में, एक गृहस्थ आदि के रूप में असाधारण रूप से संस्कारग्रस्त हो गया है, और उसी संकीर्ण दृष्टिकोण से हम वर्तमान क्षण को देखते हैं।)

अतः हमें इस प्रश्न की छानबीन करनी है। न केवल यह कि हम समस्याओं को किस प्रकार जमा करते हैं बल्कि हमें यह भी समझना है कि विचार-प्रक्रिया क्या है। आख़िर आप सोचते ही क्यों है? क्या कार्य करने का कोई दूसरा ऐसा मार्ग, एक वैकल्पिक जीवनशैली, दैनिक जीवन के प्रति सर्वथा भिन्न दृष्टिकोण या कोई नवीन तरीक़ा है, जिसके लिए विचारणा या विचार की कोई ज़रूरत नहीं है? अतः पहले साथ-साथ हमें अत्यंत सन्निकटता से देखना है, ऐसा नहीं कि मैं समझाऊँ और आप मान लें। ऐसा तो मूर्खतापूर्ण होगा। बल्कि हम एक साथ उत्तर खोजें और तब कार्य करें। अतः हम इस विषय की छानबीन करने जा रहे हैं। विचारणा क्या है? क्या आप विचार नहीं करते? यदि ऐसा न होता तो आप यहाँ न होते। आपने यहाँ आने का, साथ ही लौटने का इंतज़ाम किया — यह है विचारणा। दार्शनिक रूप में सोचना क्या है? दर्शन यानी फिलासॅफ़ी का अर्थ है सत्य से प्रेम, जीवन से प्रेम, न कि विश्वविद्यालय की किसी परीक्षा को पास करना। अतः आइए, पहले हम साथ-साथ पता लगाएँ कि विचारणा क्या है। यदि आपके पास कल की स्मृति न रहे, या किसी प्रकार की कोई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्मृति न हो, तो क्या आप सोच सकते हैं? ठीक? अतः अब देखें कि स्मृति क्या है। आपने कल कुछ किया जो कि स्मृति बन जाता है और इस स्मृति के अनुसार ही आप सोचते और कार्य करते हैं। ठीक? जो आपकी तारीफ़ करता है, जो आपको चोट पहुँचाता है और आपके बारे में गंदी बातें कहता है, उन सभी को आप याद रखते हैं। वह स्मृति अंकित ज्ञान का परिणाम है। अब ज्ञान क्या है? यह विषय अपेक्षाकृत कठिन है। हम सभी के पास संचित ज्ञान है। बड़े-बड़े विद्वान्, प्रोफ़ेसर, वैज्ञानिक संचयशीलता से व्यापक ज्ञान अर्जित करते हैं। तो ज्ञान क्या है? आपको ज्ञान किस प्रक्रिया से, किस तरह होता है? जब कोई अनुभूति होती है, तो ज्ञान उपजता है। ज्ञान अनुभव-प्रसूत है। आप किसी कार दुर्घटना में पड़े; उस एक अनुभव से आपको ज्ञान हुआ है और उस ज्ञान से आपकी स्मृति बनी और स्मृति से विचार उठता है। ठीक? तो अनुभव क्या है? वह घटना, कार की दुर्घटना, जो कि आपके मस्तिष्क में अंकित है? ठीक? अनुभव से विचार तक का क्रम हुआ — अनुभव-ज्ञान-स्मृति-विचार। यह तर्कपूर्ण है, न कि देखने का कोई मेरा तरीक़ा या आपका तरीक़ा है।

इस तरह सभी अनुभव, चाहे वह ईश्वर का अनुभव हो या आपका अनुभव, सर्वदा सीमित है। वैज्ञानिक उसमें प्रतिदिन और अधिक, और अधिक जोड़ते चले जा रहे हैं। जिसमें निरंतर कुछ जोड़ा जाता हो, वह सर्वदा सीमित है। मैं थोड़ा ही जानता हूँ, और मुझे अधिक जानना चाहिए। इस तरह कोई भी अनुभव सदा ही सीमित है, क्योंकि जिसमें कुछ और अधिक जोड़ा जा सकता है, वह सदा ही सीमित है। इसलिए स्मृति सीमित है और इस प्रकार ज्ञान और विचार भी सीमित है। ठीक? और जहाँ कहीं सीमाएँ हैं, वहाँ विभाजन है, जैसे कि सिख, हिन्दू, बौद्ध, मुसलमान, ईसाई, डेमोक्रेट, रिपब्लिकन, कम्युनिस्ट इत्यादि। ये सभी विचार पर आधारित हैं, इसीलिए सभी सरकारें सीमित हैं, आपके सभी कार्यकलाप सीमित हैं। भले ही आपके विचार कितने ही सूक्ष्म और गूढ़ क्यों न हों अथवा आप कितने ही उदार होने की चेष्टा क्यों न करें, तब भी वह विचारणा ही है। सभी विचारणा सीमित है। इस सीमित विचारणा से उत्पन्न हमारे सभी कार्य-कलाप भी सीमित हैं। तब क्या कोई कार्य ऐसा भी है जो इन सभी सीमाओं से मुक्त हो? आप बैठें, इस बीच आप सोचें, सावधानी से देखें। विचारणा के सीमित होने के कारण हमने समस्त ब्रह्माण्ड को एक छोटे से कारोबार या संकीर्ण प्रयोजनों में सीमित कर दिया है। विचारों की परिधियों में हम अपने जीवन को भी एक तुच्छ घटना बना देते हैं। मुझे ऐसा होना ही चाहिए, ऐसा नहीं होना चाहिए, मेरे पास सत्ता अवश्य आए, इत्यादि। आप सब समझ रहे हैं? हमने जीवन की अनंतता को अत्यंत तुच्छ व्यापारों में बदल दिया है।

अतः क्या विचार से मुक्त हो पाना संभव है? जिसका अर्थ है कि यहाँ आने के लिए मैं अवश्य सोचूँ; यदि मैं पदाधिकारी हूँ तो मैं प्रशासनिक ढंग से अवश्य सोचूँ, यदि मैं फैक्टरी जाऊँ और वहाँ कोई पेंच घुमाना हो तो भी मुझे निश्चित जानकारी होनी चाहिए। परंतु खुद अपने बारे में ज्ञान क्यों आवश्यक है? क्या आप मेरा प्रश्न समझ रहे हैं — उच्चतर स्व,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निम्नतर स्व और इसी तरह की अन्य बातें? हमें इसके बारे में क्यों ज्ञान होना चाहिए? यह अत्यंत सीधी सी बात है कि मैं स्वार्थी हूँ। वस्तुतः मैं केवल स्वयं से ही मतलब रखता हूँ, स्व में ही लीन हूँ। भले ही भाई-चारे का ढोंग करें, शान्ति के बारे में चर्चा करें, अनेक तरह का शाब्दिक आदान-प्रदान कर लें, पर हम सदा स्व-केन्द्रित हैं। अब इससे प्रश्न उठता है — 'इस प्रकार की स्व-केन्द्रिता से, जो कि निश्चय ही गहरी स्वार्थपरायणता है, क्या इस पृष्ठभूमि से हममें कोई परिवर्तित हो भी सकता है? क्या हम पूर्णतः स्वार्थरहित हो सकते हैं? अतः अब हमें जानना है कि स्व क्या है।

आप अपने नाम, व्यवसाय, अपनी प्रतिज्ञाओं, किसी गुरु का अनुगमन करने आदि के अतिरिक्त क्या हैं? इसे दूसरे रूप में रखें — क्या आप अपना नाम हैं? क्या आप अपना व्यवसाय हैं? या क्या आप अपने समाज और समुदाय मात्र का एक अंश या अपनी परम्परा के मात्र एक अंग है? आप क्या हैं? केवल गीता अथवा उपनिषद् अथवा किसी अन्य की बातों को न दोहराएँ। वह व्यर्थ है। वस्तुतः आप क्या हैं? क्या यह पहला अवसर है जब कि आपसे ऐसा प्रश्न पूछा गया है? आप क्या हैं? क्या आप आपके भय नहीं हैं? क्या आप अपना नाम नहीं हैं? क्या आप अपना शरीर नहीं है? क्या आप वह नहीं हैं जो आप स्वयं को समझते हैं, वह बिम्ब जो आपने अपने विषय में बनाया है? क्या आप यह सब नहीं है? क्या आप अपना क्रोध नहीं है? क्या वह क्रोध आपसे भिन्न है? आगे बढ़ें। क्या आप अपना भय नहीं हैं, अपनी महत्वाकांक्षाएँ, अपना लोभ, अपनी प्रतिस्पर्द्धा, अपनी अनिश्चितता अथवा अपनी भ्रान्ति, अपनी पीड़ा, अपना शोक, क्या आप यह सब नहीं हैं? क्या आप वह गुरु नहीं हैं जिसका कि आप अनुगमन करते हैं? जब आप अपना तादात्म्य करते हैं उससे, अर्थात् आपका भय, आपका सुख, आपकी पीड़ा, आपका दुःख, आपका स्नेह, आपकी कठोरता, — ये सभी क्या आप स्वयं नहीं हैं? अथवा क्या आप कुछ उन्नत और बड़े हैं — उत्कृष्ट स्व, उत्कृष्ट चेतना? यदि आप कहते हैं कि आप उत्कृष्ट चेतना हैं, उच्चतर स्व हैं, तो यह भी विचारणा का ही अंश है। इसलिए जिसे आप उच्चतर विचारणा, उच्चतर स्व कहते हैं वह भी अत्यधिक तुच्छ है।

अतः आप क्या हैं? मैं कह रहा हूँ कि आप इन्हीं सब संकल्पनाओं, संवेगों और विचारों आदि की गठरी हैं। इस गट्ठर को विचार ने इकट्ठा किया है। यह विचारणा का ही संपादन है। आप वही सब कुछ हैं। आप जो सोचते हैं, आप वही हैं। ठीक? आप कुछ भी अनाप-शनाप का आविष्कार कर सकते हैं, पर वह आविष्कार भी वही है, जो कि आप हैं? इन सब का एक साथ संकलित होना, ग्रंथित होना ही 'मैं' कहलाता है। मैं स्वयं, मेरा अहम मेरा व्यक्तित्व, मेरा उच्चतर स्व, मेरा ईश्वर, मैंने ही इस प्रकार की बातों का आविष्कार किया है। किसने इन्हें संकुलों में बाँधा? अथवा इन सबकी क्या केवल एक ही संरचना है? किसने इन्हें पृथक्-पृथक् कर दिया है? किसने कहा है कि मैं हिन्दू हूँ या मैं मुसलमान हूँ, क्या यह सब केवल एक प्रचार है? किसने देशों के बीच विभाजन किया? विचार ने? अथवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या यह एक इच्छा, अपनी पहचान क़ायम करने, आत्म प्रतिमानों की उत्कंठा या सुरक्षित होने की चाह है? मैं आपसे सादर पूछ रहा हूँ कि किसने इस प्रकार का विभाजन पैदा किया है? ऐसां सचमुच विचार ने तो किया ही है परंतु विचार के पीछे कुछ और है। विचार के अतिरिक्त यह सब कौन कर रहा है? कौन सी इच्छा, कौन सी प्रेरणा तथा इसके पीछे कौन सी गति है? सुरक्षा, क्या यह नहीं है? मैं सुरक्षित होना चाहता हूँ, इसी कारण से गुरु का अनुगमन करता हूँ। मैं आपके साथ, अपनी पत्नी के साथ अपने सम्बन्ध में सुरक्षित होना चाहता हूँ। वह मेरी है, सदा मेरी रहे। सुरक्षा की इच्छा और लालसा से ही समस्त अनुचार और प्रतिक्रियायें होती हैं। यह भाव कि मैं अवश्य सुरक्षित रहूँ।)

हम सभी सुरक्षा चाहते हैं लेकिन हम कभी प्रश्न नहीं करते कि क्या कोई सुरक्षा है भी। क्या कोई ऐसी जगह है जहाँ मैं कहूँ कि मैं सुरक्षित हूँ? आपकी अपनी पत्नी का आप पर अविश्वास है। आप अपने अधिकारी के प्रति आशंकित हैं क्योंकि आप उसका स्थान पाना चाहते हैं। ये सब सामान्य बातें हैं भले ही अभी आप इस पर हँसे लेकिन संसार में प्रत्येक प्राणी एक ऐसा स्थान चाहता है जहाँ वह सुरक्षित हो सके, जहाँ होड़ न हो, जहाँ कि उसे चारों तरफ से धकेला न जाए, जहाँ उसे परेशान न किया जाए। क्या आप यह सब नहीं चाहते? पर आपने कभी यह नहीं पूछा : क्या किसी प्रकार की सुरक्षा है भी? यदि आप सुरक्षा चाहते हैं तब आप यह अवश्य पूछें : क्या इस जगत में कोई सुरक्षा है भी? अब प्रश्न उठता है कि आप क्यों सुरक्षा चाहते हैं? क्या विचार में सुरक्षा है? क्या आपके सम्बन्धों में सुरक्षा है, अपनी पत्नी के साथ, अपने बच्चों के साथ? क्या आपके काम-धन्धे में सुरक्षा है? चाहे आप प्रोफेसर हों, और अपने पद पर सुरक्षित हों परंतु वहाँ अधिक ऊँचे प्रोफेसर हैं, इसलिए आप वाइस चांसलर होना चाहते हैं। अतः सुरक्षा कहाँ है? संभवतः इस संसार में कोई भी सुरक्षा नहीं है। इस बारे में कुछ सोचें। सर, इसका सौन्दर्य देखें — क्या ऐसा संभव है कि सुरक्षा के लिए आप कोई इच्छा ही न रखें, उत्कंठा न रखें, ऐसी कोई भावना न रखें जिसमें सुरक्षा की चिन्ता हो? आपके घर में, आपके कार्यालय में, आपकी फैक्ट्री में, या सरकार और संसद आदि में, क्या कहीं सुरक्षा है? जीवन में शायद सुरक्षा नाम की चीज़ ही न हो। जीवन जीने के लिए है, न कि अनावश्यक समस्याओं के निर्माण के लिए और बाद में उनके समाधान के लिए। जीवन का अर्थ एवं प्रयोजन जीने में ही है, और यह एक एक दिन समाप्त भी होगा। मृत्यु हमारे अनेक भय में से एक है। ठीक? तो आज सुबह हमने एक दूसरे से क्या सीखा? वक्ता ने जो कुछ कहा, क्या उसे हमने सुना भी? क्या हमने अपने कानों से सुना? क्या आपने संसार के तथ्यों को देखा जो कि आप स्वयं हैं? संसार आप हैं। क्या आपने उन सभी तथ्यों की यर्थाथता देखी अथवा क्या वे तथ्य भी धारणाएँ हैं? तथ्य और धारणा में अन्तर है। धारणा कभी भी तथ्य नहीं है। यह माइक्रोफोन वक्ता के सामने है लेकिन 'माइक्रोफोन' शब्द यह वस्तु नहीं है। परन्तु हमने शब्द को ही वस्तु बना लिया है। अतः 'हिन्दू' आप नहीं हैं, शब्द आप नहीं हैं। आप तथ्य हैं, शब्द नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस प्रकार क्या हम शब्द को देख सकते हैं और समझ सकते हैं कि शब्द वस्तु नहीं हैं? 'ईश्वर' शब्द ईश्वर नहीं है। शब्द यथार्थ से, वास्तविकता से पूर्णतः भिन्न है।

मैं सादर पूछ रहा हूँ कि आज सवेरे आपने वस्तुतः क्या सीखा जिससे कि आप कर्म कर सकते हैं? ऐसा न कहें, 'हाँ, बिलकुल ठीक, बिलकुल सही', और आप घर चले जाएँ और पूर्ववत् काम में लग जाएँ। मैं नहीं जानता कि आपने इसका अनुभव किया है या नहीं कि संसार में अत्यधिक संघर्ष और यातना है। चूँकि आप भ्रांति में हैं, अतः आप अपने चारों ओर संसार में भ्रांति की सृष्टि करते जा रहे हैं। यदि आप परिवर्तित नहीं होते तो संसार भी परिवर्तित नहीं हो सकता। विश्व में आप जहाँ भी जाएँ आप पाएँगे कि संसार में प्रत्येक मानव उन्हीं परिस्थितियों से गुज़र रहा है जिनसे आप गुज़र रहे हैं — अनिश्चित, दुखी, भयभीत, असुरक्षित, सुरक्षा की चाह, नियंत्रण का प्रयास, इत्यादि।

वक्ता न तो आशावादी है और न निराशावादी। हम आपके सामने केवल तथ्य प्रस्तुत कर रहे हैं, समाचार पत्रों का तथ्य नहीं। हम अपने जीवन के तथ्यों के बारे में चर्चा कर रहे हैं, न कि किसी गुरु, किसी सम्राट या किसी अन्य जीवन के। हम साथ-साथ आपके जीवन के बारे में चर्चा कर रहे हैं। आपका जीवन शेष समस्त विश्व के जीवन के समान है — भीषण रूप में दुखी, अनिश्चित, दयनीय, लाखों बेरोज़गार, ग़रीबी, भूख, शोक, पीड़ा, बिलकुल आप ही की तरह। आप उनसे भिन्न नहीं हैं। आप अपने को हिन्दू अथवा मुसलमान या ईसाई अथवा जो चाहें कह लें, पर चेतना में यानी अभ्यन्तर में आप समस्त विश्व के समान ही हैं। आप भले ही काले हों, साँवले हों, आपकी भिन्न सरकार हो, पर प्रत्येक मानव प्राणी इस दारुण विश्व में सहभागी है। हमने संसार को बनाया है, आप इसे समझ रहे हैं? हम ही समाज हैं। यदि आप चाहते हैं कि समाज कुछ भिन्न हो तो आपको ही प्रारंभ करना है, आपको अपने घर में व्यवस्था लानी है और वह आप स्वयं हैं।

103180

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वार्ता

१९ नवम्बर, १९८५

कल हमलोग जिस विषय पर बातचीत कर रहे थे, क्या उसी पर आगे बढ़ें? जैसा कि हमने कहा था, हम साथ-साथ रेल से एक लम्बी यात्रा, एक बहुत लम्बी विश्व-यात्रा कर रहे हैं। यह यात्रा २५ लाख वर्ष पूर्व आरम्भ हुई थी। समय और दूरी के इस लम्बे अंतराल में हमें अनेक अनुभव हुए और वे अनुभव हमारे मस्तिष्क में, चेतन या अचेतन की गहरी परत में सुरक्षित हैं। वक्ता और आप साथ-साथ उसकी जाँच करने, छान-बीन करने जा रहे हैं। वक्ता अकेले बात नहीं कर रहा है। बल्कि हम सभी साथ-साथ बातचीत कर रहे हैं। वक्ता उसे शब्दों में प्रस्तुत कर रहा है और शब्दों का अर्थ अत्यंत महत्व का होता है। शब्द के भंडार का महत्व नहीं है। महत्व है शब्द की गहराई का, शब्द की अभिव्यंजकता और शब्द के अर्थ का।

जैसा कि हमने कल कहा था, आप और वक्ता साथ-साथ सफर कर रहे हैं। आप सो न जाएँ। आप सिर्फ़ ऐसा भी न कह दें, "ठीक, मैं सहमत हूँ।" या "असहमत हूँ।" हमने इसे गहराई में देखा है। हम सहमत अथवा असहमत नहीं हो रहे हैं। खिड़की से बाहर देख भर रहे हैं। देख रहे हैं कि मानव कितनी असाधारण घटनाओं से गुज़रा है। कैसे-कैसे अनुभव, कितनी पीड़ा, कितना असह्य दुःख मानव ने अपने विश्व के लिए रचा है। हम किसी का पक्ष नहीं ले रहे हैं, न गुण-दोष देख रहे हैं। कृपया इसे भलीभाँति समझ लें।

यह कोई राजनीतिक सभा नहीं है और न यह कोई मनोरंजन है। यह एक गंभीर सभा है। यदि आप मनोरंजन चाहते हैं तो आपको किसी सिनेमा या फुटबाल मैच में जाना चाहिए। जहाँ तक वक्ता का सम्बन्ध है, उसके अनुसार यह अत्यंत गम्भीर सभा है। वह विश्व भर में बोलता रहा है। दुर्भाग्यवश अथवा सौभाग्यवश उसने ख्याति अर्जित की है। आप संभवतः उसी ख्याति के कारण यहाँ आये हैं, परन्तु उसका कुछ भी महत्व नहीं है। अतः हम ट्रेन में साथ-साथ बैठे, एक अन्तहीन यात्रा करते हुए खोजबीन करने जा रहे हैं। हम न तो आपको प्रभावित कर रहे हैं और न किसी ओर देखने के लिए बाध्य कर रहे हैं।

हम अपने दैनिक जीवन को तथा दस लाख वर्षों की पृष्ठभूमि को देख रहे हैं। मनुष्य को सभी फुसफुससाहटों एवं आहटों को सुनना चाहिए। प्रत्येक वस्तु को जस का तस देखना चाहिए, न कि वैसा जैसा कि आप उसे चाहते हैं, बल्कि उसी प्रकार जैसे कि चलती गाड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की खिड़की से वस्तुएँ दिखा करती हैं — पहाड़ियाँ, नदियाँ, जल का विस्तार और आपके चारों ओर बिखरा सौन्दर्य। क्या हम थोड़ी देर के लिए सौन्दर्य पर चर्चा करें? क्या आपको अच्छा लगेगा? ज़िन्दगी की तमाम चीज़ों की तरह ही यह एक गम्भीर विषय है। शायद आपने कभी यह पूछा ही नहीं है कि सौन्दर्य क्या है। केवल अपने आन्तरिक विचारों, भावों, अपने मतों और निर्णयों को ही सुनना ठीक नहीं है, दूसरे जो कह रहे हैं उसे भी सुनना चाहिए। अपने गुरुओं की बात नहीं — यह सब बचकाना है। बल्कि आपकी पत्नी जो कुछ कह रही है, आपका पड़ोसी जो कुछ कह रहा है तथा उस कौए की सारी काँव-काँव को भी सुनना। संसार के सौन्दर्य का, प्रकृति के सौन्दर्य का, अनुभव करें। इस क्षण हम साथ-साथ यह पता लगाने जा रहे हैं कि सौन्दर्य क्या है। इस ट्रेन में बैठे आप अद्भुत दृश्यों के बीच से, पहाड़ियों, नदियों, हिमाच्छादित विशाल पर्वतों, गहरी घाटियों के बीच से गुज़र रहे हैं और आपसे बाहर ही वस्तुएँ नहीं हैं बल्कि आपका आंतरिक ढाँचा भी है, आपकी अपनी प्रकृति, आप जो कुछ सोचते और अनुभव करते हैं और आपकी कामनाएँ इत्यादि भी हैं। व्यक्ति को इन सब को सुनना है न कि मात्र यह कहना — हाँ, ठीक! ग़लत, ऐसा ही मैं सोचता हूँ, ऐसा ही मुझे सोचना चाहिए, अथवा किसी परम्परा का अनुसरण करना चाहिए। इसके विपरीत आप अत्यंत शांतिपूर्वक बिना किसी प्रतिक्रिया के सुनें, वृक्ष के सौंदर्य को देखें।

अब हम साथ-साथ सौन्दर्य के बारे में बात करने जा रहे हैं। सौन्दर्य क्या है? क्या कभी आप मध्य युग, पुनर्जागरण युग की वस्तुओं के संग्रहालय में गये हैं? क्या आप में से कुछ ने उन्हें देखा है? संभवतः नहीं। मैं आपको संग्रहालय घुमाने नहीं ले जाऊँगा क्योंकि मैं कोई गाइड नहीं हूँ। प्राचीन यूनानियों, मिश्रवासियों, रोमनों तथा आधुनिक लोगों के चित्रों, चित्राकनों को देखने की अपेक्षा हम यह देख रहे हैं, पूछ रहे हैं, पता लगा रहे हैं तथा खोज करना चाहते हैं कि सौंदर्य क्या है। आकार नहीं, न स्त्री, न पुरुष, न असाधारण सुन्दर छोटा शिशु — सभी शिशु सुन्दर हुआ करते हैं — पर सौंदर्य क्या है? सर, मैं प्रश्न पूछ रहा हूँ। कृपया पहले स्वयं को ही इसका उत्तर दें। या आपने इस बारे में पहले कभी सोचा ही नहीं है? किसी चेहरे का सौन्दर्य नहीं, बल्कि हरे-भरे मैदान, फूल तथा हिम से आच्छादित विशाल पर्वत का सौन्दर्य और गहरी घाटियों, नदियों का शांत एवं निश्चल जल। वह सब आपसे बाहर है और आप कहते हैं कि वह कितना सुन्दर है! 'सौन्दर्य' शब्द का क्या आशय है? इस बात का पता लगाना अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि हमारे दैनिक जीवन में सौन्दर्य बहुत कम है। यदि आप बनारस आते-जाते रहते हैं तो आप यह सब जानते हैं — गंदी सड़कें, धूल और तमाम गंदगी। यह सब देख कर, साथ ही एक पत्ती की कोमलता, अथवा मानव की कोमल उदारता देख कर कवियों, चित्रकारों, वास्तुविदों द्वारा प्रयुक्त इस शब्द (सौन्दर्य) के बारे में आप स्वयं से पूछें और गहराई से पता लगाएँ, जैसा कि इस समय आप स्वयं से पूछ रहे हैं। सौन्दर्य का गुण क्या है? क्या आप चाहते हैं कि मैं इस प्रश्न का उत्तर दूँ? या आप इसका उत्तर देंगे? एक सज्जन कहते हैं कि आप ही उत्तर दें क्योंकि हम नहीं जानते।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर क्यों? आप क्यों नहीं जानते? हमने इस महत्वपूर्ण प्रश्न की छानबीन क्यों नहीं की? आपके अनेक प्रिय कवि होंगे, आरम्भ से लेकर अब तक। वे इसके बारे में लिखते हैं, वे इसके बारे में गाते हैं, नाचते हैं और आप कहते हैं कि सौंदर्य क्या है आप नहीं जानते। कैसे विचित्र लोग हैं आप!

अतः सौन्दर्य क्या है? दूसरे शब्दों में, आप क्या हैं? जैविक कारकों के अलावा, आपका अपना स्वरूप और ढाँचा क्या है? आप जब किसी हिमाच्छादित पर्वत को, गहरी घाटियों, गहरी नीली पहाड़ियों को देखते हैं तो आप कैसा अनुभव करते हैं? उन सबके प्रति आपकी क्या प्रतिक्रिया होती है? आप उनकी गरिमा, हरी घाटी की विशालता, अद्भुत प्रकाश, हिमाच्छादित पर्वत की पृष्ठभूमि में स्थित नीलाकाश से क्या एक सेकेण्ड या कुछ मिनटों के लिए पूर्णतः स्तब्ध नहीं हो जाते? आप जब उन्हें देखते हैं — उनकी भव्यता, उन पर्वतों का ऐश्वर्य, तो उस समय आपको कैसा लगता है? आप कैसा अनुभव करते हैं? क्या एक क्षण के लिए या कुछ मिनटों के लिए आपका अस्तित्व बिलकुल खो नहीं जाता? आप मेरा प्रश्न समझ रहे हैं? कृपया आप सहमत न हो जाएँ, बल्कि इसे गहराई से देखें। आप जब कभी किसी भव्य, विशाल, ऐश्वर्यवान वस्तु की ओर देखते हैं तो आप एक क्षण के लिए वहाँ नहीं होते, आप अपनी चिन्ताएँ, अपनी पत्नी, अपनी सन्तान, अपने काम-धन्धे एवं जीवन के समस्त झँझटों को भूल जाते हैं। उस क्षण आप उससे अभिभूत होते हैं। उस क्षण वह गरिमा आपकी समस्त स्मृति को मिटा देती है, एक क्षण के लिए। उसके बाद आप फिर पूर्ववत् हो जाते हैं। तो उस क्षण ऐसा क्या होता है?

जब आप वहाँ नहीं होते तो क्या होता है? तभी होता है सौन्दर्य। आप समझ रहे हैं? आप वहाँ नहीं होते। पर्वत या झील की भव्यता एवं ऐश्वर्य में, या उषाकाल में सूरज द्वारा नदी की सतह पर सुनहले पथ का निर्माण, एक क्षण के लिए आप सब कुछ भूल जाते हैं। अर्थात् जब स्व नहीं रहता तो सौन्दर्य होता है। जहाँ आप अपनी समस्याओं, जिम्मेदारियों अपनी परम्पराओं और सब कूड़े-कचरे के साथ नहीं होते तो वहाँ सौन्दर्य होता है। जैसे खिलौने के साथ एक बच्चा, जब तक खिलौना उसे आकृष्ट किए रहता है, खेलता है, खिलौना उसे तल्लीन किए रहता है, उस पर छाया रहता है। पर जैसे ही खिलौना टूट जाता है, वह वापस वहीं पहुँच जाता है जहाँ वह पहले था। हम भी वैसे ही हैं। हम भी पर्वत में तल्लीन हो जाते हैं, एक सेकेण्ड या कुछ मिनटों के लिए वह हमारे लिए खिलौना होता है। फिर हम अपनी पुरानी दुनिया में लौट जाते हैं। हम कह रहे हैं कि खिलौने, किसी ऊँची चीज़ में लीन हुए बिना क्या आप स्वयं से मुक्त हो सकते हैं? क्या आप मेरे प्रश्न को समझ रहे हैं? आप इसे नहीं समझते। आप बहुत चतुर हैं, आप अपने विपुल ज्ञान और अनुभव के बोझ तले दबे हुए हैं। आप सरल नहीं हैं। यदि आप बहुत सरल हैं, वस्त्रों में नहीं, बल्कि स्वयं में, गहराई के साथ, तो आप एक अद्भुत अनुभव करेंगे।

हमने थोड़ी देर सौन्दर्य के बारे में चर्चा की। आइए, अब हम स्वयं को देखें। संसार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को हमने बनाया अर्थात् आपने, वक्ता ने, उसके पूर्वजों ने, हज़ारों वर्षों की पीढ़ियों ने, समय ने। यह सब किस लिए? एक दूसरे की हत्या करना, दूसरे को अपंग बनाना, मेरा ईश्वर — तुम्हारा ईश्वर जैसा विभाजन करना। यह समाज इतना विद्रुप, क्रूर और निर्दय क्यों है? किसने इस राक्षसी दुनिया को बनाया? मैं न तो निराशावादी हूँ और न आशावादी, पर आपसे बाहर संसार में जो कुछ हो रहा है उसे मैं देखता हूँ। ग़रीब देश शस्त्रास्त्र ख़रीद रहा है, आपका देश शस्त्रास्त्र ख़रीद रहा है और यहाँ है भयंकर ग़रीबी, प्रतिस्पर्धा। किसने इन सब की सृष्टि की? क्या आप कहेंगे कि ईश्वर ने? तब तो वह निश्चय ही गड़बड़ ईश्वर होगा। तो किसने इस समाज को बनाया? किसने इन सबको एक साथ जोड़ा? क्या आपने यह सब नहीं किया? अकेले आपने नहीं बल्कि आपके पिता, आपके पितामह, आपके प्रपितामह तथा लाखों वर्षों की विगत पीढ़ियों — उन सबने अपनी संकीर्णता, ईर्ष्या एवं प्रतिस्पर्धा के साथ इस समाज को बनाया। उन्होंने संसार को आर्थिक, सामाजिक तथा धार्मिक रूप में विभाजित किया। सर, तथ्यों का सामना करें। हमने इस समाज को बनाया है, इसके लिए हम ही उत्तरदायी हैं — न कि ईश्वर, न कि कुछ बाहरी कारण, बल्कि हममें से प्रत्येक ने इस समाज का निर्माण कियां है। आप एक समूह से संबंधित हैं और मैं दूसरे से। आप एक गुरु की, भले ही वह कितना ही अल्पबुद्धि, मूर्ख क्यों न हो, पूजा करते हैं और मैं दूसरे की पूजा करता हूँ। इस प्रकार हमने समाज को विभाजित किया है। केवल सामाजिक रूप में ही नहीं अपितु धार्मिक रूप में ही विभाजित कर दिया है। हमने भौगोलिक रूप में विश्व को यूरोप, अमरीका, रूस में विभाजित किया है। हमने संस्कृति को पश्चिमी संस्कृति और पूर्वी संस्कृति में बाँटा है। हमने सरकार में — लेबर, डेमोक्रेट्रिक; रिपब्लिकन, कम्युनिस्ट जैसा विभाजन कर रखा है। सर, आप समझ रहे हैं न कि किस प्रकार आपका दिमाग काम करता है? यह बाँटता है, बाँटता है, बाँटता है। क्या आपने इस तथ्य पर ध्यान नहीं दिया? इसी विभाजन से संघर्ष आता है।

अतः आपने ही इस समाज का निर्माण किया है। आप ही यह समाज हैं। जब तक आप मूलतः नहीं बदलते तब तब आप समाज को भी नहीं बदल सकते। कम्युनिस्टों ने मनुष्य को बलपूर्वक, विवश करके, गुप्त रूप से, दुष्टता से दबा करके उन्हें नाना प्रकार के संतापों को झेलने के लिए बाध्य किया। आप इन सबको समझें। यह इतिहास है। इसलिए जहाँ कहीं विभाजन है वहाँ निश्चय ही संघर्ष होगा — यही नियम है। ज़ाहिर है कि हमें संघर्ष पसंद है। हम सतत संघर्ष में रहते हैं। अतः हम पीछे की ओर चलें और पता लगाएँ कि इन सब का क्या कारण है। क्या यह कारण तृष्णा है, भय है, सुख है? क्या यह समस्त पीड़ाओं से पलायन एवं अपराध-भावना है? हम स्वयं पता लगाएँ कि तृष्णा क्या है, क्योंकि वही आधार है — शक्ति पाने की तृष्णा, उपलब्धि की तृष्णा, कुछ होने की तृष्णा। हम तृष्णा के विरुद्ध नहीं हैं। हम तृष्णा को दबाने या उससे परे जाने का प्रयास नहीं कर रहे हैं, जैसा कि संन्यासी करते हैं। हम अवश्य ही यह जानें कि तृष्णा क्या है।

पुस्तकालय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम जानना चाह रहे हैं कि तृष्णा का मूल क्या है। क्या यह जानने में आपकी रुचि है? क्या आप उसकी जड़ का पता लगाना चाहते हैं? क्या आप चाहते हैं कि मैं इसे स्पष्ट कर दूँ? पर स्पष्टीकरण तो वह चीज़ नहीं है, वर्णन तो वह वर्णित वस्तु नहीं है। जब कोई किसी अद्‌भुत वृक्ष का वर्णन करता है तो वर्णन ही वह वृक्ष नहीं होता। इस प्रकार हम शब्दों का प्रयोग सम्प्रेषण के लिए कर रहे हैं, पर शब्द और वर्णन तथ्य नहीं है। 'पत्नी' शब्द तो पत्नी नहीं है। यदि हम इस सामान्य तथ्य को समझ सकें तो आप उसके साथ अधिक अच्छा व्यवहार करेंगे।

अतः तृष्णा क्या है और यह कैसे हम पर आधिपत्य कर लेती है। इसका क्या स्थान है? इसका क्या स्वभाव है? संसार भर के संन्यासी तृष्णा का दमन करते हैं या तृष्णा से परे जाना चाहते हैं या कतिपय बिम्बों, कतिपय प्रतीकों एवं कर्मकाण्डों के साथ इसे जोड़ते हैं। लेकिन तृष्णा क्या है? क्या कभी आपने ऐसा प्रश्न किया है। या क्या आप तृष्णा में बह जाते हैं, भले ही इसके चलते कुछ भी हो? हम संवेदन के सहारे जीते हैं — क्या ऐसा नहीं है? बेहतर खाना, बेहतर मकान, बेहतर पत्नी। इस प्रकार संवेदन जीवन है, जीवन का अंग है। इसी प्रकार कामवासना है। यह एक संवेदन है, एक सुख है, और हमारे अनेकानेक सुख हैं — स्वामित्व आदि का सुख। संवेदन हमारे जीवन का एक असाधारण रूप से महत्वपूर्ण अंग है। यदि आप में संवेदन न हो तो आप मुर्दा हैं। ऐसा है न? आपके सभी स्नायु निष्प्राण हो जाते हैं, आपका मस्तिष्क मुरझा जाता है। इस तरह हम संवेदन के साथ जिया करते हैं। संवेदन होना — स्पर्श, अनुभूति, जैसे सहसा आपकी अंगुली में कील का चुभना — यह है संवेदन। इसे आप पीड़ा कह सकते हैं। आँसू, हँसी, विनोद, ये संवेदन के ही अंग हैं। आप अधिक शक्ति, अधिक धन चाहते हैं, और यह 'अधिक' संवेदन का ही अंग है। प्रत्येक क्षण, प्रत्येक प्रतिक्रिया — बौद्धिक, सैद्धान्तिक, दार्शनिक — संवेदन का ही अंग है। हम संवेदन के सहारे से ही जीते हैं, यह स्पष्टतः समझ लीजिए, अर्थात्, इन्द्रियों की प्रतिक्रिया के साथ : अच्छा स्वाद, बुरा स्वाद, यह कटु है, यह मीठा है। संवेदन स्वाभाविक है, अनिवार्य है, जीवन का अंग है। जब आपमें संवेदन होता है तो उस समय क्या घटित होता है? आप जब कुछ अत्यंत सुन्दर — जैसे कोई कार, स्त्री, पुरुष, या सुन्दर मकान — देखते हैं तो क्या होता है? आप उस सुन्दर मकान को देखते हैं। सुन्दर बाग, फूल हैं और सब कुछ सुन्दरता, सुरुचि व कुलीनता से बनाया गया है! जब आप उसे देखते हैं तो वह संवेदन है। फिर विचार आता है जो उस संवेदन का बिम्ब बनाता है और कहता है — "मैं चाहता हूँ कि मेरे पास ऐसा घर हो।" उसी क्षण तृष्णा उत्पन्न होती है। जैसे ही संवेदन को एक रूप, एक आकार दिया गया, उसी क्षण तृष्णा की उत्पत्ति होती है।

जब कभी हम कोई ऐसी चीज़ देखते हैं जो हमारे पास नहीं है, जैसे मकान या कार, तो वह संवेदन प्रभावी हो जाता है। तब विचार आ जाता है और कहता है, "मैं चाहता हूँ कि यह मेरे पास हो।" उसी क्षण तृष्णा उत्पन्न हो जाती है। ठीक? क्या आप इसकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूक्ष्मता को, गहराई को समझते हैं? विचार जैसे ही संवेदन को एक विम्ब, आकार, ढाँचा देता है, वैसे ही तृष्णा उत्पन्न हो जाती है। अब प्रश्न होता है कि क्या ऐसा हो सकता है कि संवेदन विचार के द्वारा, जो कि स्वयं भी एक संवेदन है, न पकड़ा जाए? सर, आप इसे समझ रहे हैं? संवेदन के बाद, इसके पहले कि विचार उसे कोई आकार दे, आप थोड़ा समय लें और विचार द्वारा संवेदन को आकार दिये जाने से पूर्व एक अन्तराल रखें। आप ऐसा करें। इससे आप बहुत कुछ सीखेंगे। तो मैं कह रहा हूँ कि, संवेदन और विचार के मध्य जब कुछ समय यानी एक अंतराल, एक लंबा या छोटा अंतराल होता है तो आप तृष्णा के स्वरूप को समझेंगे। उसमें न तो दमन है और न उससे परे पहुँचना है। सर, यदि आपके पास कार है और आप उसके कल-पुर्जों को जाने बिना, उसके आन्तरिक दहन तथा मशीन को समझे बिना उसे चलाते हैं तो आप कुछ भयभीत से रहते हैं कि कहीं कुछ गड़बड़ न हो जाए। परन्तु यदि आपने कार के कल-पुर्जों को खोला और फिर जोड़ा है, बहुत सँभालकर, सब कल-पुर्ज़ों को समझकर, तब तो आप उस मशीन के जानकार हैं, अतः आप उससे नहीं डरते। आप उसे फिर जोड़ सकते हैं। उसी प्रकार यदि आप तृष्णा के स्वरूप यानी तृष्णा किस प्रकार उठती है, इसे समझ जाते हैं तो आप उससे भयभीत नहीं होते। तब आप यह जानते हैं कि उसके साथ क्या करना चाहिए।

अन्य विषय भी हैं जिस पर आपको तथा वक्ता को साथ-साथ चर्चा करनी चाहिए। हम हज़ारों वर्षों से जीते आए हैं। पर हमने भय के स्वरूप को नहीं समझा। भय का स्त्रोत क्या है? भय का कारण क्या है? स्पष्ट है कि हम शारीरिक एवं मानसिक भय को तथा एकाकीपन के भय को अब तक समाप्त नहीं कर पाए हैं। हमारे पास अनेक भय हैं। इन्हीं भय के कारण आप देवताओं, कर्मकाण्डों, आध्यात्मिकता, पुरोहित तंत्रों, गुरुओं, विश्व के समस्त देवस्थानों की सृष्टि करते हैं। अपनी पत्नी का भय, अपने गवर्नर का भय, पुलिस का भय — हमारे पास हज़ारों भय हैं। फिर भी हम पूछ रहे हैं कि भय क्या है। आपका विचित्र प्रकार का भय नहीं, न कि मेरा भय और आपका भय, बल्कि भय क्या है? जब आप कार के कलपुर्ज़ों को समझ लेते हैं तो आप कार की मशीन से नहीं डरते। उसी प्रकार यदि आप भय को जानते हैं, अनुभव करते हैं, उसके स्वरूप, कारण, एवं मूल को समझ लेते हैं तो आप भय के परे हो जाते हैं, और भय समाप्त हो जाता है। आज सुबह हम भय को समाप्त करने जा रहे हैं।

हम पूछ रहे हैं : भय क्या है? और इसका क्या कारण है? न कि कैसे इसके पार जाया जाए, इसका नियन्त्रण और दमन किया जाए अथवा इससे पलायन किया जाए, जैसा कि आप प्रायः करते हैं। इस प्रकार भय का क्या कारण है? इसका क्या स्त्रोत है? सर, इसे सोचें — एक मिनट के लिए इसकी छानबीन करें। अपने भय को, अपने विशेष भय को लें। इसका मूल क्या है? सुरक्षा? या अधिक की इच्छा? यदि आपको यह पता नहीं लगा है तो आप वक्ता से या उसकी तरह किसी और व्यक्ति से पूछते हैं कि इसका क्या कारण है। क्या आप उसे सुनेंगे?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या आप सचमुच सुनेंगे ? मैं इसे स्पष्ट करूँगा परंतु स्पष्टीकरण वह 'चीज' नहीं है। क्या 'भय' शब्द ही आपमें भय उत्पन्न करता है ? भय एक तथ्य है, पर शब्द तथ्य नहीं है। अतः स्पष्टीकरण भय समाप्त करने का साधन नहीं है। हमें तब पता लगाना होगा कि समय क्या है, क्योंकि समय भय है, जैसे यह भाव कि न जाने कल क्या होगा। मेरा मकान गिर सकता है। मेरी पत्नी किसी और की हो सकती है। मेरे पति दूर हैं और मैं डरती हूँ। भूत का भय और भविष्य का भय, वर्तमान का भय। मैं ऐसा हूँ पर मैं ऐसा नहीं रहूँगा या मैं वैसा अभी नहीं हूँ जैसा कि मैं हुआ करता था। सारी प्रक्रिया समय की एक गति है। यहाँ से वहाँ एक गति है और इसके लिए समय चाहिए। समस्त गति समय है।

भूत वर्तमान को आकार देता है और वर्तमान भविष्य को आाकार देता है एवँ बदलता है, क्योंकि परिस्थितियाँ बदलती हैं, कुछ घटनाएँ घटित होती हैं। अतः भूत में संशोधन, परिवर्तन, फेर-बदल हो जाता है। और भविष्य इसी क्षण में समाहित है। यह हमारी ज़िन्दगी से जुड़ा हुआ है, कोई कोरा सिद्धान्त नहीं है। कल आप कुछ थे और आज एक घटना घटती है जो भूत को परिवर्तित, संशोधित एवं कुछ रूपान्तरित कर देती है और अभी आप जो कुछ हैं वही अतीत का संशोधित भविष्य है। अर्थात् 'अभी' भूत, वर्तमान और भविष्य है। यदि अभी कोई गुणात्मक क्रांति आपमें नहीं होती तो आप बिलकुल वैसे ही रहेंगे जैसे कि आप पहले थे, उन सभी तमाशों के साथ। मैं हिन्दू हूँ और मैं कल हिन्दू रहूँगा। इसीलिए अभी आप जो करते हैं उसका कल जो कुछ आप करेंगे उसकी तुलना में अधिक महत्व है। अतः यदि कल अभी है तो आप क्या करेंगे ? यह तथ्य है, यह न मेरा सिद्धान्त है, न आपका — यह एक तथ्य है। अगर मैं अभी लोभी हूँ और इस विषय में अभी ही कुछ नहीं करता, तो कल भी लोभी रहूँगा। क्या आप आज लोभ को समाप्त कर सकते हैं ? आप ऐसा करेंगे ? नहीं, सचमुच नहीं। अतः आप जो थे वही रहेंगे। लाखों वर्षों से मानवता का यही रूप रहा है।

आप हत्या करना बुरा नहीं मानते। सच को स्वीकारें। हत्या बुरी है — यह आपके लिए एक सिद्धांत है। आप अपने देश को शक्तिशाली बनाना चाहते हैं। ठीक ? आप इससे शरमाएँ नहीं — यह एक तथ्य है और इसीलिए आप हथियार इकट्ठा करते हैं। यदि आप आज भारतीय होना नहीं छोड़ते तो कल भी भारतीय रहेंगे। अतः मैं पूछ रहा हूँ कि अभी आप क्या करेंगे ? भारतीय होना छोड़ें। क्या आप ऐसा करेंगे ? क्या आप इसके निहितार्थों को समझते हैं ? मेरा मतलब पासपोर्ट नहीं, कागज़पत्र नहीं, बल्कि किसी देश से, किसी समूह से, किसी धर्म से संबंधित न होना (यह सब वैसे भी बकवास है)। क्या ऐसा करना सम्भव है ? क्या आप ऐसा करेंगे ? क्या आप समझते हैं कि यदि अभी आपमें परिवर्तन नहीं है तो आप कल भी बिलकुल ऐसे ही रहेंगे। यह कोई आशावादी या निराशावादी होना नहीं है। यह एक तथ्य है। क्या आप इसकी गम्भीरता को समझ रहे हैं ? यदि मुझमें अभी आमूल परिवर्तन नहीं होता तो मैं कल भी वही रहूँगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतः भय का एक कारण समय है। भय केवल आपके लिए नहीं है, यह समस्त मानवता के लिए सामान्य है। क्या वह भय, केवल उसकी एक शाखा नहीं, बल्कि भय मात्र क्या समूल नष्ट हो सकता है। अर्थात् किसी प्रकार का भय न रहे। वक्ता कहता है कि तत्काल ऐसा सम्भव है। ऐसा बिलकुल किया जा सकता है। ऐसा न कहें कि यह सिर्फ संबुद्धों के लिए है। यदि आप अपना दिल-दिमाग लगाएँ तो आप इसका अंशतः नहीं बल्कि पूर्णतः अन्त कर सकते हैं। और तब आप स्वयं देखेंगे कि इसमें कितना असीम सौन्दर्य है। तब किसी देश की स्वतन्त्रता या सरकार की स्वतन्त्रता नहीं, बल्कि स्वतन्त्रता की विशालता, स्वतन्त्रता की महानता उपजेगी।

क्या आप आज, अभी ऐसा करेंगे? आज से भय का कारण देखते ही उसे ख़त्म कर दें। जब तक जैविक, शारीरिक, मनोवैज्ञानिक भय रहता है तब तक यह हमारा नाश करने वाला है। अतः इस सिद्धान्त को नहीं बल्कि तथ्य को सुनने के बाद कोई पूछ सकता है कि क्या किया जाए? समय ही भय और विचार का कारक है। अतः यदि आप अभी नहीं बदलते तो फिर आप कभी भी न बदलेंगे। आप अपने बदलाव को टालते रहेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वार्ता

२२ नवम्बर, १९८५

आज सुबह हम साथ-साथ बहुत सी बातों पर चर्चा करने जा रहे हैं। 'हम' केवल वक्ता नहीं हैं। हम जिन समस्याओं और प्रश्नों के सम्बन्ध में चर्चा करने जा रहे हैं उसमें आप और वक्ता साथ-साथ भाग ले रहे हैं, सह-भागी हैं। आप यों ही नहीं सुन रहे हैं बल्कि उसमें भाग ले रहे हैं। हमने पिछली दो वार्ताओं में अनेक विषयों-भय, मानव की समस्त पीड़ाओं, जो कि हमारी समस्याएँ हैं और जिनका समाधान करने में हम असमर्थ हैं, उन सब पर विचार किया, हमने उन पर सावधानी से विचार किया। समस्याएँ हैं, क्योंकि हमारे दिमाग में समस्याएँ भरी हैं। अतः किसी भी समस्या को देखने की स्वतन्त्रता हममें नहीं है। हमने विचार की जाँच-पड़ताल भी की। विचार ने क्यों इस जीवन को पूरी तरह से असम्भव बना दिया है। विचार ने बहुत अधिक संघर्ष उत्पन्न किया है। पच्चीस लाख वर्षों से युद्ध होते रहे हैं। इसका आशय है कि व्यवहारिक रूप में हम हर साल ईश्वर के नाम पर, देशभक्ति के नाम पर — मेरा देश आप के विरुद्ध, मेरा धर्म-आपका धर्म — आदि के लिए परस्पर हत्या करते रहे हैं। हमने विचार के स्वरूप के बारे में बात की। विचार क्यों लोगों को बाँटता है, और कभी कोई निश्चित कार्य करने के लिए क्यों उन्हें आपस में मिलाया करता है? जैसे, चन्द्रमा पर जाना, उसके लिए राकेट का निर्माण करने के लिए शायद आपको लगभग ३,००,००० लोगों की आवश्यकता हुई होगी जो अपने छोटे-छोटे कार्य को निपुणता से कर सकें। या तो युद्ध जैसे संकट के समय, जो कि घृणा से उत्पन्न है, हम साथ हो जाते हैं अथवा किसी राष्ट्रीय प्रश्न पर या जब कोई बड़े संकट जैसे भूकम्प, ज्वालामुखी, विस्फोट, प्राकृतिक विपत्तियों आदि के समय हम एक साथ हो जाते हैं। इनके अलावा हम कभी एक नहीं होते।

आज प्रातः मैं सादर कहना चाहूँगा कि हम सब एक साथ हों, जैसे कि हम इस समय साथ-साथ बैठे हैं और हम एक ऊर्जा संगृहीत करें ताकि हम जिन प्रश्नों को उठाने जा रहे हैं उनके सम्बन्ध में बहुत सफाई से सोच सकें। साथ-साथ का अर्थ है कि आप सक्रिय रूप से सोच रहे हैं, सक्रिय रूप से सुन रहे हैं। हमारा दिमाग जो कि मन्द है, तथा मद्धिम, सुस्त, एकरस एवं दुहरानेवाला है उसे हमें सक्रिय करना है। अतः आज सुबह हम अपने दिमाग को सजग रखने में साथ-साथ हैं। केवल शरीर के अवयवों को ही सक्रिय नहीं रखना है क्योंकि वे ऊर्जा देते हैं, बल्कि अत्यन्त स्पष्ट और सक्रिय मस्तिष्क भी हमें रखना है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

किसी प्रकार का ख़ास मस्तिष्क नहीं, जैसे कि दार्शनिक, वैज्ञानिक, भौतिकविद् आदि। इस प्रकार के मस्तिष्क अत्यन्त संकुचित हो जाते हैं। अंग्रेज़ी शब्दकोश के अनुसार फ़िलॉसफ़ी का अर्थ है — सत्य का प्रेम, जीवन का प्रेम, प्रज्ञा का प्रेम — न कि एक-एक करके सिद्धान्तों को जोड़ते जाना अथवा दूसरों को उद्धृत करना और यह बताना कि उन्होंने क्या सिखाया है।

मुझे पता नहीं कि आपने कभी सीखने के बारे में विचार किया है या नहीं। सीखना है क्या? अब हम साथ-साथ पता लगाने जा रहे हैं कि सीखने का क्या अर्थ है। सामान्यतः हम सीखने का अर्थ याद करना समझते हैं। स्कूल, कॉलेज और विश्वविद्यालय में शिक्षा के दौरान आप केवल रटा ही करते हैं। और ऐसी शिक्षा वस्तुतः जीविकोपार्जन में, सत्ता प्राप्त करने एवं सम्पत्ति, मर्यादा, संरक्षण आदि में उपयोगी हो सकती है। क्या किसी दूसरे प्रकार का भी सीखना होता है? हम तो प्रायः सामान्य ढंग का ही सीखना जानते हैं — स्कूल, कॉलेज, विश्वविद्यालय में अथवा किसी कौशल को सीखना, अद्‌भुत बढ़ई बनना अथवा नलसाज बनना या अच्छा रसोइया बनना। तो, सीखना क्या है? क्या कभी आपने इस बारे में सोचा है? आप जब अपना पाठ कण्ठस्थ करते हैं तो आपका मस्तिष्क स्मृतियों से भर जाता है। यह एक सरल तथ्य है। इस तरह स्मृतियाँ बढ़ती हैं और आपको सजग रखती हैं। आप अधिक, और अधिक सीखते जाते हैं। वक्ता आप से पूछ रहा है : क्या इससे भिन्न प्रकार का सीखना है जो कोई चीज़ कंठस्थ करना नहीं है?

यह प्रश्न अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि मस्तिष्क प्रत्येक घटना, प्रत्येक प्रकार की स्मृति को अंकित कर लेता है। आपको जब चोट लगती है तो यह बात आपके मस्तिष्क में अंकित हो जाती है, परन्तु आप यह पता नहीं लगाते कि किसे चोट लगी है। अब हम उसी महत्व पर आएँगे। आप इसके महत्त्व को देखें। मस्तिष्क में बातें अंकित होती रहती हैं नहीं तो मैं और आप यहाँ पर न होते। इस प्रकार मस्तिष्क निरन्तर अंकित करता है, छाँटता रहता है। अब यह देखें कि क्या अंकित होना आवश्यक है। आप मोटरकार में हुई किसी घटना या दुर्घटना को अंकित करते हैं। यह तत्काल ही अंकित हो जाती है, क्योंकि आपको पीड़ा है अथवा चोट लगी है या आपकी कार को क्षति हुई है। मस्तिष्क में ऐसी क्षमता, ऊर्जा है कि यह केवल बातों को अंकित ही नहीं करता बल्कि यह अपनी सुरक्षा भी करता है। हम यह पूछ रहे हैं : क्या प्रत्येक बात का अंकित किया जाना आवश्यक है? अथवा क्या हम उन्हीं बातों को अंकित करें जो आवश्यक हैं, बाकी कुछ भी नहीं? क्या आपने यह प्रश्न स्वयं से पूछा है? मस्तिष्क अपनी सुरक्षा के लिए रिकार्ड किया करता है, नहीं तो आप और हम यहाँ बैठे न होते। आपने यह रिकार्ड किया कि यहाँ आने में कितना समय लगा। हम पूछ रहे हैं : क्या कुछ चीज़ों का अंकन आवश्यक है और जहाँ स्व का सम्बन्ध है वहाँ पूर्णतः अनावश्यक है? आप मेरा प्रश्न समझ रहे हैं? जब आपकी वाहवाही होती है अथवा जब आप अपमानित होते हैं, तो क्या इन घटनाओं का अंकन मानस में आवश्यक है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंकन ही मानस का निर्माण करता है। यह अत्यन्त गम्भीर प्रश्न है क्योंकि मानस जो कि सभी तत्वों, विशिष्टताओं, प्रकृतियों से निर्मित है, मस्तिष्क में है जिसे हम चेतना कहते हैं। उस चेतना में स्मृति की सभी गतिविधियाँ, भय आदि रहते हैं। अतः हम फिर पूछ रहे हैं : क्या मानस का निर्माण आवश्यक है? मानस का अर्थ है 'स्व'। 'स्व' है समस्त स्मृति एवं विचार की गतिविधि अर्थात् कल्पना, आकर्षण, भय, सुख, दुख और पीड़ा। यह अंकन ही है जिससे सम्पूर्ण चित्त, 'मैं', व्यक्ति निर्मित होता है। क्या यह आवश्यक है कि अंकन हो ताकि स्व का निर्माण हो? क्या कभी आपने इस बारे में सोचा है, इसे देखा है अथवा पता लगाया है, जैसा कि आपने विभिन्न दार्शनिक, धार्मिक मामलों में किया है? वस्तुतः कुछ चीज़ों का अंकित होना तो आवश्यक है परन्तु कुछ का अंकित होना व्यर्थ है। इसकी खूबसूरती को देखें, ताकि मस्तिष्क सदा स्मृति से बंधा न रहे बल्कि वह असाधारण रूप से स्वतन्त्र और सक्रिय रहे। यही है पहली समस्या।

सीखना अंकन नहीं है। न्यूयार्क में हमारी इस विषय पर मनोचिकित्सकों से चर्चा हो चुकी है। वे अंकन न होने के विचार के प्रति आकृष्ट थे ताकि मस्तिष्क कोशिकाएँ खुद परिवर्तित हों। हमारा मस्तिष्क कोशिकाओं आदि से बना है — मैं कोई इस विषय का विशेषज्ञ नहीं हूँ — और मस्तिष्क-कोशिकाओं में स्मृतियाँ रहती हैं; हम उन्हीं स्मृतियों पर जीते हैं — अतीत की तथा अन्य स्मृतियाँ जो व्यक्ति के पास होती हैं। इस बात का पता लगाना आवश्यक है कि क्या मस्तिष्क के लिए प्रत्येक वस्तु का अंकन आवश्यक है। याद रखना और रिकार्ड न करना, ये पूर्णतः भिन्न मामले हैं। आपको जब आघात लगता है, शारीरिक नहीं बल्कि मानसिक यानी आंतरिक, तो आप कहते हैं मुझे चोट लगी है। आप सभी चोट खाये हुए हैं — क्या ऐसी बात नहीं है? बचपन से लेकर जब तक आप बूढ़े होते हैं और मरते हैं आपको हमेशा ही आघात लगता रहता है। आप कहते हैं — 'अब मैं अधिक सहन नहीं कर सकता, मैं पहले ही काफी आघात सह चुका हूँ। मैं भयभीत हूँ। अतः मैं अपने चारों ओर एक दीवाल खड़ी कर लेता हूँ, स्वयं को दूसरों से अलग कर लेता हूँ — आघात होने के सभी नतीजे हुआ करते हैं।

सर, अब यह बताएँ कि कौन आहत होता है? इसका उत्तर दें। आप कहते हैं, यह 'मैं हूँ'। तो 'मैं' क्या है? आप मात्र कहते हैं 'मुझे', 'मैं', 'अहं' — कोई भी शब्द जो आपकी ज़बान पर आता है। पर आप उसकी खोजबीन नहीं करते कि 'मैं' कौन है। यह व्यक्ति कौन है? आप क्या हैं — नाम, उपाधि — यदि आप भाग्यशाली या अभागे हों, व्यवसाय, मकान या फ्लैट, नाम के साथ लगने वाली पदवी? वे सभी बिम्ब हैं जो आपने अपने बारे में बना रखे हैं। इस तरह जब आप कहते हैं कि आप आहत हुए हैं तो आपके स्वनिर्मित बिम्ब ही आहत होते हैं। ये सभी बिम्ब आप ही हैं। आप ही भौतिकविद् हैं, आप डॉक्टर हैं, आप दार्शनिक हैं, आप एम० पी० हैं अथवा इंजीनियर हैं। क्या कभी आपने गौर किया है कि किसी भी व्यक्ति का परिचय उसके व्यवसाय से ही दिया जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपने अपनी पत्नी के वारे में एक विम्ब बना रखा है, और वह भी आपके वारे में एक विम्ब वना लेती है। इन विम्बों में ही परस्पर संवंध रहता है। देखिए, क्या हो रहा है। विम्बों के वीच ही संवंध है, न कि व्यक्तियों के बीच और आप उन्हीं पर जीते हैं। इस प्रकार आप कभी भी अपनी पत्नी, अपने पति या अपने मित्र को नहीं जान पाते। अथवा आप जानने की चिन्ता ही नहीं किया करते, बस अपने पास विम्ब रखते हैं। अतः प्रश्न है : क्या आप विना किसी बिम्ब के जी सकते हैं? इसके आशय को, इसके सौन्दर्य को, इसकी स्वतन्त्रता को देखें।

हमें साथ-साथ वात करनी चाहिए कि जीवन में इतनी सब कोशिश क्यों है? किसी चीज़ को करने के लिए इतनी गहरी कोशिश क्यों करते हैं? हम ध्यान के लिए, जीने के लिए, लड़ने के लिए, एक दूसरे से कलह के लिए, मत के विरुद्ध मत, निर्णय के विरुद्ध निर्णय — इन सव के लिए हम गहन प्रयास करते हैं। मैं आपके साथ सहमत होता हूँ, उसके साथ असहमत होता हूँ। यह सव चेष्टा किसलिए? क्यों? धन के लिए, अपने परिवार के लिए? किसी का प्रेम पाने के लिए? आप जव यह प्रश्न पूछें तो आप यह अवश्य पूछें कि प्रेम क्या है। क्या प्रेम प्रयत्न है? मैं आपको अवश्य प्रेम करूँ, अतः इसके लिए मैं प्रयास करने जा रहा हूँ — जहाँ महत्वाकांक्षा है, क्या वहाँ प्रेम हो सकता है? महाशय, ध्यान दें, यह अत्यन्त गम्भीर है। यह उसके लिए नहीं है जो चिन्ता ही नहीं करता, बल्कि जो अपना ही ढंग-ढर्रा पसन्द करता है। क्या यह महत्वाकांक्षा है, क्या यह लोभ है, क्या यह अपने में केन्द्रित होना है? क्या प्रेम, घृणा का उल्टा है? सर, आप जानते हैं, हम समय के आरम्भ से ही लड़ते रहे हैं। जीवन भर अच्छाई और बुराई में युद्ध चलता रहता है। आप इसे चित्रों में भी देख सकते हैं, जिनमें अच्छे और बुरे को प्रतीक-रूप में दिखाया गया है। युनानी पुराणों तथा अन्य पुराणों में सफेद साँड़ और काले साँड़ हैं, या अच्छा और बुरा अनेक रूपों एवं प्रतीकों में लड़ रहे हैं। हम अव भी वैसा करते हैं। अच्छा बुरे से लड़ रहा है। क्या अच्छा बुरे से भिन्न है? क्या अच्छा बुरे से उत्पन्न है? यदि अच्छा बुरे से उत्पन्न है, यदि अच्छा बुरे से संवंधित है तव तो यह अच्छा नहीं है। यदि अच्छा बुरे से उत्पन्न है, बुरे से आता है, तो यह अच्छा नहीं है। यह तो सीधी सी बात है, क्या ऐसा नहीं है? परन्तु, यदि बुरा अच्छे से पूरी तौर पर भिन्न है, यदि अच्छे और बुरे में कोई सम्बन्ध नहीं है तव तो केवल बुरा है और अच्छा है जो आपस में भिन्न हैं। अतः वे लड़ नहीं सकते।

अव हमें पता लगाना है कि अच्छा क्या है और आपको पूछना है : क्या प्रेम में घृणा रहती है? अथवा क्या घृणा का प्रेम से कुछ लेना-देना नहीं है, अतः उन दोनों में आपस में सम्बन्ध नहीं है। और इसलिए वे आपस में उलझ भी नहीं सकते? आपके लिए यह महत्वपूर्ण सवाल है जिसे आपको समझना है, जिसके भीतर जाना है। आप हमेशा ही कहते हैं : 'मैं आज अच्छा नहीं रहा, पर कल मैं अच्छा होऊँगा, या 'मैं आज क्रोधित था पर कल मैं क्रोधित नहीं होऊँगा'। इस तरह अच्छे और बुरे में परस्पर सम्बन्ध नहीं है। प्रेम का ईर्ष्या से कुछ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेना-देना नहीं है। प्रेम का घृणा से किसी तरह का सम्बन्ध नहीं है। जहाँ कहीं घृणा, भोग, चिन्ता आदि है, वहाँ प्रेम नहीं रह सकता। वक्ता को संदेह है कि शायद ही आप किसी से प्रेम करते हों। प्रेम क्या है? यह कैसे आता है? क्या आप सचमुच इस प्रश्न को पूछ रहे हैं? या क्या मैं आपके लिए यह प्रश्न पूछ रहा हूँ? जहाँ दुःख है क्या वहाँ प्रेम हो सकता है? हममें से अधिकतर किसी न किसी प्रकार के दुःख में हैं — परीक्षा में फ़ेल होना, व्यापार, राजनीति में सफलता प्राप्त करने में विफल होना या अपनी पत्नी के साथ अथवा किसी अन्य व्यक्ति के साथ सम्बन्ध में, चाहे वह आपका गुरु अथवा कोई काल्पनिक व्यक्ति हो, असफल होना। अतः जब आप सफल नहीं होते तो आप हताश होते हैं, आप दुःखी होते हैं। अथवा आप इसलिए दुःखी हैं कि आप एक छोटे से गाँव में रहते हैं और आप पढ़ना-लिखना नहीं जानते, कार चलाना नहीं जानते अथवा आप गरम जल से स्नान नहीं कर पाते या आपको एक ही गन्दा कपड़ा पहनना पड़ता है। जो आदमी अच्छी हालत में है, सफलता के सोपान पर ऊपर है, वह भी कष्ट में है। इस प्रकार धरती पर हर एक — बहुत धनी से लेकर बहुत दरिद्र तक, बहुत बलशाली से लेकर अत्यधिक दुर्बल तक — ये सभी दुःख पाते हैं। इस तरह दुःख आपका ही नहीं है क्योंकि दुनिया में हर एक दुःख पाता है। यह मेरा दुःख नहीं है — यह दुःख है। मुझे शक है कि शायद ही आप इसे समझ रहे हों। मेरा पुत्र मर जाता है और मैं बहुत बेचैन हो जाता हूँ और मैं कहता हूँ — 'हे प्रभु, मैंने अपना पुत्र खो दिया, और यह लगातार समस्या बन जाता है। जब भी किसी छोटे लड़के या छोटी लड़की को देखता हूँ, मैं हर बार रो पड़ता हूँ। मैं अकेलेपन आदि की पीड़ा से गुज़रता रहता हूँ। क्या दुःख का अन्त हो सकता है? यदि दुःख है तो वहाँ प्रेम नहीं है। कृपया इसे अनुभव करें। यदि मैं दुःखी हूँ, दुःखी हूँ, दुःख पाता रहता हूँ — तो यह आत्मदया, आत्मचिन्ता का अंश है। यह ऐसा है कि 'मेरा दुःख आपके दुःख से अलग है', जैसे 'मेरा गुरु आपके गुरु से शक्तिशाली है' या 'मेरा ईश्वर भिन्न है।' तो क्या दुःख का अन्त है? अथवा मानव-जाति जीवन भर इस संत्रास को झेलती रहेगी? वक्ता कहता है कि यह ख़त्म हो सकता है, अन्यथा प्रेम नहीं है। यदि मैं हमेशा रोता रहता हूँ और आप आते हैं और मुझसे कहते हैं — "धरती पर हर प्राणी दुःख पाता है, यह तुम्हारा ही दुःख नहीं है, हम सभी इसमें भागीदार हैं।" पर मैं इस तरह के वक्तव्य को मंजूर नहीं करता क्योंकि मैं अपने दुःख को पसन्द करता हूँ। मैं अपने दुःख में संतुष्ट हूँ और मैं अपने दुःख में दूसरों से अलग ही रहना चाहता हूँ — इस तरह इसके लिए बहुत जाँच-पड़ताल, चर्चा करना ज़रूरी है ताकि कहा जा सके — "यह केवल आपका दुःख नहीं है, थोड़ा सा आपका भी है, लेकिन आपका ही नहीं है।" इसका मतलब यह नहीं कि आप अपने पर तरस खा रहे हैं, बल्कि सचमुच आप दुःख के बोझ में सारी मानवता के साथ भागीदार बनते हैं। सर, आगे बढ़ें। इसके बारे में सोचें, इसको देखें। आप मानवता के अंश हैं और मानवता से भिन्न नहीं हैं। भले ही आपकी बेहतर स्थिति, उपाधियाँ हों, अधिक धन हो, पर आप मानवता के ही अंश हैं, आपकी चेतना मानवता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का अंश है। आपने जो कुछ सोचा, कल्पना की, भयभीत आदि हुए, वही सब कुछ आपकी चेतना में है। वही है आपकी चेतना और वही है मानव मात्र की चेतना। मनुष्य को भय, शोक, पीड़ा, चिन्ता, रोना, अनिश्चितता तथा भ्रान्ति है। धरती पर प्रत्येक मानव के पास यही सब है और सभी एक सरीखे हैं। अतः आप व्यक्ति नहीं हैं। मैं जानता हूँ कि मेरा शरीर आपके शरीर से भिन्न है। आप स्त्री हैं, मैं पुरुष हूँ, आदि, आदि। परन्तु विश्व में हम एक इकाई के रूप में है। आप जब इस संबंध का अनुभव करते हैं तो आप ही समस्त मानवता हैं। ऐसी स्थिति में आपमें कुछ पूर्णतः भिन्न घटित होता है, केवल शब्द, कल्पना नहीं, बल्कि इसकी अनुभूति, इसकी विशालता।

हमें मृत्यु के सम्बन्ध में भी बात करनी चाहिए। माफ करें, एक सुहानी सुबह, पेड़ों के नीचे बैठे, शान्त — कोई ट्रेन पुल से नहीं गुज़र रही है — ऐसे में मृत्यु की चर्चा करना विकृत लग सकता है। अब हम साथ-साथ इसका पता लगाने जा रहे हैं। आप भागीदार बनें — ऐसा नहीं कि केवल आप सुनें भर और मैं बोलता रहूँ। अतः मृत्यु क्या है? हम उससे इतने भयभीत क्यों हैं? हम मृत्यु को दस वर्ष, बीस वर्ष, अथवा सौ वर्ष परे क्यों रखते हैं? आपको, मृत्यु और मरना क्या है, केवल यही नहीं पूछना है बल्कि यह भी पूछना है कि जीना क्या है? आपका जीवन क्या है? क्लर्क, गवर्नर, फ़ैक्ट्री में काम करने वाले की तरह या अन्य किसी भी रूप में, नौ बजे से पाँच बजे तक दफ्तर या फ़ैक्ट्री में काम करना बूढ़े होने पर रिटायर होने तक, यही आपका जीवन है। बच्चे पैदा करना, सेक्स, सुख, पीड़ा, दुःख, चिन्ता, एक के बाद एक समस्या, अस्वस्थता, डॉक्टर, शल्य चिकित्सा, प्रसव-पीडा, यह है हमारा जीवन। क्या आप इससे इन्कार करते हैं? इसे ही आप जीना कहते हैं। आप इसका समर्थन करते हैं, आप इसमें मज़ा लेते हैं, और आप इसे ही अधिक से अधिक पाना चाहते हैं — ठीक है न? और आप मृत्यु को यथासंभव अधिकाधिक वर्षों तक दूर ही रखना चाहते हैं। समय के इस अन्तराल में आप उसी ढर्रे पर चलते रहते हैं। आपके पुत्र, आपके पौत्र, वे सभी उसी ढर्रे पर चलते जाते हैं, जिसे आप जीवन कहते हैं।

अतः मैं पूछता हूँ : जिसे आप मृत्यु कहते हैं, उसे जीवन में क्यों नहीं लाते? आप अपने साथ कुछ नहीं ले जा सकते — यहाँ तक कि जो कुछ आपके गुरुओं ने कहा है और जिसके अनुसार आपने जीने का अभ्यास किया, आप उसे भी साथ नहीं ले जा सकते। आपका फ़र्नीचर, आपकी पत्नी, आपके बच्चे और सोना-चाँदी, जिसका आपने संग्रह किया, बैंक में जमा किया — इनमें से कुछ भी आप अपने साथ नहीं ले जा सकते। जब आप कुछ भी अपने साथ नहीं ले जा सकते तो फिर आप दोनों को यानी जीवन व मृत्यु को मिलने क्यों नहीं देते? मैं जो कुछ कह रहा हूँ क्या उसे आप समझ रहे हैं? तो मृत्यु को क्यों न आज ही आने दें? आत्महत्या नहीं — मैं उसकी बात नहीं कर रहा हूँ। कुछ भी हो। अतः आप अभी आसक्ति से पूर्णतः मुक्त क्यों नहीं हो जाते? आज ही आप पूर्णतः आसक्ति-रहित हो जाएँ, कल नहीं। कल मृत्यु है। अतः मैं अपनी आसक्ति से क्यों न अभी ही मुक्त हो जाऊँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ताकि जीवन और मरण साथ-साथ रहें। मैं नहीं जानता कि आप इसका सौन्दर्य देखते हैं या नहीं। इससे आप में मुक्ति का असीम बोध आता है। अतः जीवन और मरण सदा ही साथ हैं। यह ऐसा कुछ नहीं है जिससे भयभीत हुआ जाए। यदि मस्तिष्क ऐसा कर सके तब तो वह मस्तिष्क गुणात्मक रूप से भिन्न होगा। कोई फँसाव नहीं है। इसमें अतीत, भविष्य और वर्तमान का भाव नहीं है। यह जीवन्त है। वस्तुतः यह जीने का अन्तहीन मार्ग है। अर्थात् हर दिन, एक नया दिन है। मैं जो कुछ कह रहा हूँ, उसे ग़लत न समझें। भविष्य अभी है। "मैं पुनर्जन्म लूँगा", जैसा कुछ नहीं है। यह तो मात्र एक धारणा है जिससे आप चिपके हुए हैं। इससे आपको अत्यन्त शांति तथा सांत्वना मिलती है परंतु यदि आप पुनर्जन्म पर विश्वास करते हैं तो आप अभी ही उचित कार्य करें क्योंकि अगले जीवन में आप को वही भुगतना है अथवा पुरस्कार पाना है। यह अत्यन्त सुखद धारणा है, पर है यह व्यर्थ। यदि आप इस समय सही कर्म करते हैं तो अच्छाई का पुरस्कार नहीं हुआ करता। अच्छाई अच्छाई है, न कि कुछ ऐसा कि आप इससे कुछ प्राप्त करने जा रहे हैं। ऐसी तो व्यापारिक मनोवृत्ति है, यह यान्त्रिक मनोवृत्ति है।

आइए, हम धर्म के सम्बन्ध में चर्चा करें। धर्म क्या है? सर, यह जीवन का एक महत्वपूर्ण प्रश्न है। भारत में सर्वत्र मन्दिर हैं, संसार भर में मस्जिदें हैं, दुनिया भर में गिरिजाघर और उनके पुरोहित हैं, जो सुन्दरता के साथ सजे हुए हैं तथा सुन्दर वेशभूषा में हैं। बहुत पुराने युग से अन्य समस्याओं में से एक समस्या थी : पुरोहित और राजा — पुरोहित सत्ता चाहते थे और राजा भी सत्ता चाहते थे। परन्तु पुरोहित शक्तिशाली था क्योंकि वह पढ़ा-लिखा था और राजा को उसका आदेश पालन करना पड़ता था। वस्तुतः पुरोहित अधिक बुद्धिमान समझा जाता था। धीरे-धीरे राजा सोचने लगा कि यह तो ठीक नहीं है। इस तरह पुरोहित और राजा में युद्ध शुरू हुआ। यह ऐतिहासिक है, इसे आप विभिन्न पुस्तकों में पाएँगे। किसी समय धर्म शब्द का अत्यन्त जटिल आशय होता था, पर अब तो यह एक प्रतीक, कर्मकाण्ड, अन्धविश्वास हो गया है। क्या यही धर्म है? अथवा क्या धर्म इनसे बिलकुल भिन्न है, जिसका कर्मकाण्डों या प्रतीकों से कुछ लेना-देना नहीं है? उन सबका आविष्कार तो मानव द्वारा ही किया गया है। चूँकि पुरोहित सत्ता, और पद चाहते थे अतः उन्होंने नये हैट (टोपियाँ), नये परिधान धारण किये और लम्बी दाढ़ियाँ बढ़ा लीं अथवा अपने सिर मुंडा दिए — और यही सब धर्म कहा गया। एक साधारण विचारशील मनुष्य, जिसमें थोड़ी सी बुद्धि है, उसके लिए यह सब कूड़ा-कचरा, पूरा कूड़ा-कचरा ही है। यदि वह इन सब को छोड़ देता है, सचमुच त्याग देता है और सभी अन्धविश्वासों, प्रतीकों, उपासना, प्रार्थना, आदि के साथ हिन्दू होना त्याग देता है तब वह गम्भीर आदमी है, वह कोई शब्दों का सौदागर नहीं है। सर, हम साथ-साथ बात कर रहे हैं — वक्ता कोई निर्णय नहीं दे रहा है। बस आइए, इस बारे में बात करें, हम साथ-साथ खोज करें, इसमें प्रवेश करें। हमारा मस्तिष्क हर समय बकबक करता रहता है। क्या आपने इस पर ध्यान दिया है। बकबकाना-बकबकाना-बकबकाना या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कल्पना करना या यह लगातार काम करता रहता है। कभी एक पल के लिए भी शान्ति नहीं है। और जो शान्ति होती है वह भी 'राम', 'राम' या आप ज़ो भी जपते हों — उसका जप ही होता है। आप जब कुछ मंत्रवत दोहराते हैं, जैसे कि शब्द दोहराते रहने से धीरे-धीरे आप का दिमाग मन्द और शान्त हो जाता है और वह शान्ति आपको अद्भुत लगती है। आप सोचते हैं कि सामने एक विशाल वस्तु प्राप्त करना है और आप यह सब दूसरों को बताते रहते हैं और आसानी से बहकावे में आ जाने वाले लोग कहने लगते हैं, "हाँ, हाँ।" आपका ध्यान तो आपकी उपलब्धियों का एक क्रम मात्र है। क्या आप वह सब बकवास छोड़ सकते हैं? मेरे लिए तो यह पूरी तरह से बकवास है, यह सर्कस जैसा है। हमें पता लगाना है कि ध्यान क्या है और शान्ति क्या है। शान्ति से अवकाश ('स्पेस') प्राप्त होता है। आप समय में शान्त नहीं हो सकते। हमें ध्यान, अवकाश तथा समय के प्रश्नों में भी प्रवेश करना है और देखना है कि क्या समय का अन्त है। हम आपसे यह नहीं कह रहे हैं कि ध्यान कैसे किया जाए। यह मत पूछिए कि ध्यान कैसे किया जाए। यह ऐसा है जैसा कि किसी बढ़ई को एक सुन्दर मंजूषा बनाने की विधि बताना। अगर वह अच्छा बढ़ई है तो उसे यह सब बताने की आवश्यकता ही नहीं होती। अभी आपका ध्यान एक उपलब्धि जैसा है। 'मेडिटेशन' (ध्यान) शब्द का अर्थ है विचार करना, सोचना, तौलना, सावधानी से देखना। इसका अर्थ 'मापना' भी है।

जब आप तुलना करते हैं — 'आज मैं ऐसा था, कल मैं इससे अच्छा हो जाऊँगा' — तो यह है मापना। मापने का ध्यान में कोई स्थान नहीं है। सभी टेक्नॉलॉजी में — चाहे आप कुर्सी बनाएँ या चाँद पर जाने के लिए अत्यन्त जटिल राकेट, मापना ज़रूरी है। हम कह रहे हैं कि ध्यान में निहित है : सभी प्रकार की तुलना और माप से पूर्ण मुक्ति। यह कठिन है। यदि आप जानते हैं कि क्या किया जाए तब तो ध्यान अद्भुत चीज़ है। ध्यान करने वाला ध्यान से भिन्न है। जब तक आप ध्यानी होते हैं तब तक ध्यान नहीं होता क्योंकि ध्यान करने वाला अपने बारे में सोचता रहता है — वह कैसी प्रगति कर रहा है, वह क्या कर रहा है। ध्यान में ध्यानी बिलकुल ही नहीं होता। सर, आप स्वयं इसकी सुन्दरता, गहराई, को देखें। ध्यान का अभ्यास ध्यान नहीं है। बैठ कर बुद्धि को अधिक से अधिक मन्द बनाना और कहना "ठीक, ध्यान में मैंने एक घंटा व्यतीत कर लिया है।" प्रसंगवश कहना है कि सर, आपलोग मेरे पैर न छुएँ। एक मनुष्य के लिए यह अत्यन्त अशोभनीय है। आप मेरा हाथ पकड़ सकते हैं पर पैर नहीं — यह अमानवीय और अशोभनीय है।

इस तरह ध्यान कुछ ऐसा है जिसका कि उस तरह से अभ्यास नहीं किया जा सकता जिस तरह आप वायलिन या पियानो का अभ्यास करते हैं। आप अभ्यास करते हैं अर्थात् आप पूर्णता के किसी खास स्तर तक पहुँचना चाहते हैं। पर ध्यान में कोई स्तर नहीं है, कुछ पाना नहीं है। इसलिए ध्यान कोई चेतन या जान-बूझकर किया जानेवाला नहीं है। 'ध्यान' वह है जो पूरी तरह से बिना किसी दिशा निर्देशन के है, अगर मैं चाहूँ तो अचेतन शब्द का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रयोग कर सकता हूँ। यह जान-बूझ कर की गयी प्रक्रिया नहीं है। अब इसे यहीं छोड़ें। हम इस पर बहुत समय — एक घंटा, एक पूरा दिन, बल्कि पूरा जीवन लगा सकते हैं। आइए, अब अवकाश (स्पेस) के बारे में बात करें क्योंकि ध्यान वहाँ अवकाश है। हमारी बुद्धि में 'अवकाश' (स्पेस) नहीं है। दो प्रयासों के बीच, दो विचारों के बीच अवकाश है, लेकिन यह अब भी विचार की परिधि में है। इसलिए अवकाश क्या है? क्या अवकाश में समय भी रहता है? अथवा क्या समय में सारा अवकाश शामिल है? हमने समय के बारे में बातचीत की। यदि अवकाश में समय है तब तो यह अवकाश नहीं है? तब तो यह घिरा हुआ और सीमित है। अतः क्या बुद्धि समय से मुक्त हो सकती है? सर, यह महत्वपूर्ण, व्यापक प्रश्न है। लगता है कि आप इसे समझ नहीं पा रहे हैं। यदि जीवन, सारा जीवन 'अब' में समाया है तो आप देख पा रहे हैं कि इसका आशय क्या है? सारी मानवता आप हैं। सारी मानवता — क्योंकि आप दुःखी हैं, वह दुःखी है। उसकी चेतना आप हैं, आपकी चेतना, आपका होना वह है। यहाँ आप या मैं जैसा कुछ नहीं है जो कि अवकाश को सीमित करे। अतः क्या समय का कोई अन्त है? घड़ी का समय नहीं, जिसकी चाभी आप भरा करते हैं और जो बन्द हो सकती है बल्कि समय की समग्र गति। समय गति है, घटनाओं का एक समूह है। विचार भी गतियों का समूह है। इस तरह समय विचार है — अतः हम कह रहे हैं कि : "क्या विचार का अन्त है?" जिसका आशय है : "क्या ज्ञान का अन्त है?", "क्या अनुभव का अन्त है?" जो कि पूर्ण मुक्ति है। और यही है ध्यान। न कि कहीं जाकर बैठना और देखना — यह बचकाना है। ध्यान के लिए बुद्धि की ही नहीं बल्कि गहरी अन्तर्दृष्टि की आवश्यकता होती है। भौतिकविद्, कलाकार, चित्रकार, कवि आदि सीमित अन्तर्दृष्टि रखते हैं — सीमित और छोटी। हम समयातीत अन्तर्दृष्टि की बात कर रहे हैं। यही है ध्यान, यही है धर्म और यदि आप चाहें तो शेष दिनों के लिए यही है जीने का मार्ग।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिविरार्थियों के साथ परिचर्चा

२१ नवम्बर, १९८५

जे० कृष्णमूर्ति (कृ०) : हम लोगों के बीच यह बातचीत जैसा है। आप प्रश्न करने जा रहे हैं, वक्ता से प्रश्न करने जा रहे हैं। हम चर्चा करने, विचार-विमर्श करने जा रहे हैं। ('डेलिबरेशन') विचार-विमर्श शब्द का अर्थ है — साथ-साथ परामर्श करना, साथ-साथ तौलना, साथ-साथ विचार करना, वस्तुओं का साथ-साथ सन्तुलन। ऐसा नहीं है कि आपके प्रश्नों या शंकाओं का एक व्यक्ति उत्तर देता है और तब आप उससे सहमत होते हैं — यह तो महज़ बचकाना है — बल्कि हम साथ-साथ बातचीत करने जा रहे हैं। शायद आप किसी से सचमुच खुल कर, बिना संकोच बात करने के आदी नहीं है, शायद आप कभी ऐसा करते ही नहीं हैं। यहाँ तक कि आप अपनी पत्नी अथवा पति से, या कोई जो आपका घनिष्ट सम्बन्धी है उससे कभी खुलासा, साफ़-साफ़ बातचीत नहीं करते। आप अपना मुखौटा लगाए रहते हैं, छल करते हैं। यदि आपसे हो सके तो सबेरे वह सब एक ओर हटा दें और विचारें कि हमारे पास क्या प्रश्न हैं, हमें साथ-साथ किन चीज़ों पर बात करनी है जिनसे आपका सरोकार है, न कि कुछ बेतुकी चीज़ें, बल्कि वह जिसका कि आप सचमुच पता लगाना चाहते हैं।

इससे पहले कि हम चर्चा आरम्भ करें — आप किस तरह किसी प्रश्न का सामना करते हैं? मैं जो कुछ पूछ रहा हूँ क्या इसे आप समझ रहे हैं? आप किसी प्रश्न को, किसी समस्या को कैसे देखते हैं? समस्या को किस तरह परखते हैं? आप समस्या के बिलकुल पास तक पहुँचते हैं? आप ऐसी आशा नहीं कर सकते कि वक्ता आपके प्रश्नों का उत्तर दे क्योंकि खुद प्रश्न में ही उत्तर हो सकता है। क्या आप इसे समझते हैं? अतः आज सबेरे जिन प्रश्नों की हम चर्चा करने जा रहे हैं, हम पहले उन प्रश्नों की परीक्षा करें, किसी उत्तर का इंतज़ार न करें। क्या हमने इस तथ्य को समझ लिया है? या क्या यह रहस्यमय है?

आप से मेरा प्रश्न है, मैं उसका उत्तर देने नहीं जा रहा हूँ — आप जीवन को, जीने को, दैनिक ज़िन्दगी को, अपनी आध्यात्मिक धारणा से पृथक् क्यों करते हैं? आप दोनों को बाँटते क्यों हैं? आप तथाकथित धार्मिक जीवन को, और नीरस, एकाकी, दैनिक जीवन को अलग-अलग क्यों करते हैं? आप मेरे प्रश्न का उत्तर दें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्नकर्ता (प्र०) — क्योंकि इसमें अलग तरह की ऊर्जा की ज़रूरत होती है। आध्यात्मिक जीवन और सांसारिक जीवन दो भिन्न प्रकार की ऊर्जा की अपेक्षा रखते हैं।

कृ० — अर्थात् दो अलग-अलग तरह की ऊर्जाएँ हैं — आदमी के तथाकथित आध्यात्मिक, धार्मिक जीवन के लिए एक, और दूसरे के लिए यानी सांसारिक जीवन के लिए दूसरी तरह की ऊर्जा। अब मैं प्रश्न का उत्तर देने नहीं जा रहा हूँ। आइए, हम पता लगाएँ कि आप जो कह रहे हैं, वह तथ्य है या नहीं।

आप कहते हैं कि जो लोग धार्मिक हैं, जो अजीब तरह के चोंगे पहनते हैं, उन्हें उन लोगों से अलग तरह की ऊर्जा की ज़रूरत होती है जो इधर-उधर जाते हैं और धन कमाते हैं। आप दोनों को अलग क्यों करते हैं? क्या मैं यह प्रश्न आप से पूछूँ? ऊर्जा तो ऊर्जा है, ठीक? चाहे वह विद्युत ऊर्जा हो, मोटर चलाने से उत्पन्न ऊर्जा हो या सौर ऊर्जा हो अथवा बाढ़ में उफनती नदी की ऊर्जा हो। तो, आप ऊर्जा को अलग-अलग क्यों करते हैं? क्या ऐसा है कि दाढ़ी वाले आदमी के पास, जिसके कि अजीबोग़रीब कपड़े हैं, अधिक ऊर्जा होती है या वह अपनी ऊर्जा को किसी ख़ास चीज़ पर एकाग्र करने का प्रयास कर रहा है? सर, क्या आप इसे समझ रहे हैं?

प्र० — यहाँ ऊर्जा के अनेक प्रकार हैं, एक है विचार की ऊर्जा जो स्थिर की जा सकती है, दूसरी है अन्तर्दृष्टि की ऊर्जा जो स्थिर नहीं की जा सकती। इसके अतिरिक्त दूसरी है मन की ऊर्जा जो करुणा तथा अन्य चीज़ों को उत्पन्न करती है।

कृ० — बिलकुल नहीं।

प्र० — सर, क्षमा करें।

कृ० — सर, हम इस पर विचार कर रहे हैं। मैं कोई निर्णय नहीं दे रहा हूँ। क्या आप सुनेंगे?

प्र० — ऊर्जा के तीनों पहलुओं के बीच अर्थात् विचार, अन्तर्दृष्टि और मन की ऊर्जाओं का परस्पर क्या सम्बन्ध है?

कृ० — आप इसका उत्तर दें।

प्र० — सर, क्या मैं?

कृ० — क्यों नहीं? आपको उत्तर देने का हक़ है।

प्र० — क्योंकि हम आश्वस्त होना चाहते हैं, हम ऊर्जा को अनेक हिस्सों में बाँटते हैं। मैं नहीं सोचता कि ऊर्जा के अनेक प्रकार हैं। ऊर्जा केवल एक ही हो सकती है।

कृ० — हाँ, मैं ख़ुद ऐसा ही सोचता हूँ। आप देखते हैं कि हम किस तरह सब कुछ विभाजित करते हैं। हम आध्यात्मिक ऊर्जा, मानसिक ऊर्जा, अन्तर्दृष्टि की ऊर्जा, विचार की ऊर्जा जैसा विभाजन करते हैं।

प्र० — इस तरह यह इतना जटिल हो जाता है।

कृ० — मैं जानता हूँ कि जटिल बना देता है, क्या यह नहीं बनाता? हम क्यों न बहुत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरल हो जाएँ? शरीर की ऊर्जा, सेक्स की ऊर्जा, विचार की ऊर्जा — यह सब ऊर्जा ही है। यह एक ही चीज़ है, केवल हम बाँट देते हैं। क्यों? पता लगाएँ, मैडम, हम क्यों इसे अलग बाँटते हैं?

प्र० — हम बाँटने के लिए संस्कारित हैं।

कृ० — हाँ सर! आप क्यों संस्कारित हैं? आप क्यों ऐसे बँटवारे को मानते हैं? भारत-पाकिस्तान, रूस-अमरीका, आप यह सब क्यों बाँटते हैं? मुझे बताएँ।

प्र० — विभाजन सचाई है।

कृ० — सचमुच यह सचाई है। सर, आप क्यों, इस तरह के स्पष्ट वक्तव्य देते हैं?

प्र० — सत्य और वास्तविकता के बीच अन्तर होता है।

कृ० — बिलकुल ठीक, आप किसे वास्तविकता कहते हैं?

प्र० — जो हम देखते हैं।

कृ० — इसलिए आप कहते हैं कि वास्तविकता ठीक आपके सामने है, ठीक है, जो कुछ आप नेत्रों से, दृष्टि से देखते हैं। क्या वह पेड़ वास्तविकता है?

प्र० — हाँ, सर।

कृ० — बिलकुल ठीक, आप जो सोचते हैं, क्या वह वास्तविकता है?

प्र० — कभी-कभी हमें सोचना पड़ता है।

कृ० — क्या आपकी पत्नी वास्तविकता है? मैं आपसे एक सवाल पूछ रहा हूँ, 'मेरी पत्नी' से आपका क्या आशय है?

प्र० — वहाँ मनोवैज्ञानिक भाव रहता है जो मैं अपनी पत्नी के प्रति रखता हूँ और वहाँ मेरी पत्नी की वास्तविकता भी है जो कि अपना मनोविज्ञान रखती है।

कृ० — सर, क्या आप कह रहे हैं — यदि मैं इसे अपने शब्दों में रखूँ कि आपकी पत्नी का बिम्ब जो कि आपने बनाया है, वह आपकी पत्नी से अलग है। क्या यह ऐसा है?

प्र० — कभी हो सकता है कि बिम्ब और मेरी पत्नी जो वास्तविकता है, वे मिल जाते हैं।

कृ० — क्या आपने अपनी पत्नी को देखा है? क्या आपने उसे देखा है? उसकी महत्वाकांक्षाओं, पीड़ा, चिन्ता, बच्चों को गर्भ में धारण करने की पीड़ा आदि का पता लगाया है? क्या आपने सोचा है कि आपकी पत्नी क्या है? आपने तो उसके सम्बन्ध में एक बिम्ब बनाया है — क्या आपने ऐसा नहीं किया है?

प्र० — आवश्यक रूप से नहीं।

कृ० — मैं आवश्यक अथवा अनावश्यक नहीं कह रहा हूँ। क्या यह एक तथ्य है कि यदि आप शादी-शुदा हैं, या आपकी कोई मित्र है, तो आप उसके बारे में बिम्ब बना लेते हैं? क्या ऐसा नहीं करते? आवश्यक रूप में नहीं, पर ऐसा होता है। ठीक?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्र० — हाँ, सर।

कृ० — सर, मैं आपको परास्त नहीं करना चाहता, लेकिन हर कोई दूसरे के बारे में बिम्ब बनाकर रखता है। आप मेरे बारे में बिम्ब रखते हैं, नहीं तो आप यहाँ न होते। इस तरह हम अपने मिज़ाज के मुताबिक, अपने ज्ञान, अपनी भ्रान्ति, अपने साधनों आदि के आधार पर, दूसरे के बारे में बिम्ब बनाते हैं। हम लोगों के बारे में बिम्ब बनाते हैं, आप प्रधानमन्त्री के सम्बन्ध में बिम्ब रखते हैं, आप से जो बात कर रहा है, उस आदमी के बारे में आप बिम्ब रखते हैं। अतः हम एक और गम्भीर प्रश्न पूछ रहे हैं और वह है — क्या आप बिना बिम्बों के रोज़मर्रा का जीवन जी सकते हैं?

प्र० — हम जो बिम्ब बनाते हैं, सामान्यतः खुद हमसे सम्बन्धित होते हैं। मैं अपने चारों ओर बिम्ब बनाता हूँ।

कृ० — हाँ, आप खुद अपने बारे में बिम्ब रखा करते हैं।

प्र० — हाँ, आप जिस स्थिति के बारे में चर्चा करते रहे हैं, यदि हम उसे पा लें — केन्द्र (स्व) को समाप्त करके तो उस हालत में बिम्ब खुद-ब-खुद मिट जाएँगे। तब किसी भी बिम्ब के बिना जीना संभव है।

कृ० — इस तरह आप सम्बन्ध के बारे में बात करते हैं तो उससे, उस शब्द से, आपका क्या मतलब है? सर, जवाब देने से पहले आप चुपचाप सुनें। आप थोड़ी सांस ले लें। आपका दूसरे से क्या सम्बन्ध है? आप 'सम्बन्ध' शब्द को समझते हैं? सम्बन्धित होना, — मैं रक्त द्वारा उससे सम्बन्धित हूँ, वे मेरे पिता हैं, भाई हैं, जो कुछ भी हों। सम्बन्ध शब्द से आपका क्या आशय है? सर, सावधानी के साथ, बहुत जल्दी न करें, धीरे से बढ़ें।

प्र० — हम उस भाव में 'सम्बन्ध' शब्द का प्रयोग नहीं कर रहे हैं।

कृ० — मैं तो उसी भाव में कर रहा हूँ।

प्र० — अपने मित्रों के लिए, अपने माता-पिता के लिए, अपने बच्चों के लिए देखभाल और चिन्ता, नफ़रत — यह सभी इसमें शामिल है।

कृ० — क्या आप सचमुच देखभाल करते हैं? अथवा क्या यह सिर्फ़ ख़याल है कि आप देखभाल करें? क्या मैं नम्रता के साथ पूछ सकता हूँ कि 'संबंधित' शब्द से आपका क्या मतलब है? न कि आप उसे क्या अर्थ देते हैं — शब्दकोश के अनुसार अर्थ?

प्र० — असली के साथ संपर्क, न कि शब्दों और बिम्बों के द्वारा।

कृ० — सर, मैं आपसे एक सवाल पूछ रहा हूँ, आप इसे ठुकरा न दें, 'सम्बन्धित (रिलेटेड) से आपका क्या मतलब होता है? मैं उससे संबंधित हूँ — इसका क्या मतलब है?'

प्र० — मैं सोचता हूँ कि जब मैं कहता हूँ कि मैं सम्बन्धित हूँ तो मैं उसका हिस्सा बन जाता हूँ।

कृ० — क्या आप अपनी पत्नी का एक हिस्सा हैं?

प्र० — हाँ, अंशतः।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृ० — पूर्ण अथवा आंशिक नहीं। मैं पूछ रहा हूँ संबंधित (रिलेटेड) इस शब्द से आपका क्या आशय है?

प्र० — सर, मेरा आशय है, दिन-प्रतिदिन के जीवन से संबंधित होने के कारण, परस्पर एक-दूसरे से आशा-प्रत्याशाओं, कर्तव्यों, जिम्मेदारियों का जाल।

कृ० — हे भगवान्, आप इसे बहुत जटिल बना रहे हैं — क्या आप ऐसा नहीं कर रहे हैं? मैं सिर्फ़ आपसे पूछ रहा हूँ कि आपका उस शब्द से अपने आप — खुद अपने लिए — क्या मतलब होता है, न कि वह जो आप सोचते हैं कि उसका मतलब होना चाहिए।

प्र० — घनिष्ट सम्बन्ध, मिल जाना, कुछ समानता होना। यदि आपके बारे में मेरे पास बिम्ब है तो मेरा आपके साथ सम्बन्ध है।

कृ० — क्या आपका मुझसे कोई सम्बन्ध है?

प्र० — हाँ।

कृ० — किस तरह? मैं यह गंभीरता से पूछ रहा हूँ। सर, इसे एक तरफ टाल न दें।

प्र० — मैं बिना बिम्ब आपको जब देखता हूँ तो उसी क्षण मेरा आपके साथ सम्बन्ध होता है।

कृ० — सर, वाक़ई आपने इस बारे में नहीं सोचा है। आप सिर्फ़ शब्दों का इस्तेमाल कर रहे हैं।

प्र० — मैं सोचता हूँ कि हम मूल प्रश्न से भटक गये हैं।

कृ० — मैं जानता हूँ, सर, मैं जानता हूँ, आइए हम वापस चलें। हम उस शब्द पर फिर आएँ, हमारे जीवन में वह शब्द बहुत महत्वपूर्ण है।

हम आध्यात्मिक और सांसारिक को अलग-अलग क्यों बाँटते हैं? हम पाकिस्तान के विरुद्ध भारत को अलग करते हैं। हम विभिन्न धर्मों को ईसाई, बौद्ध, हिन्दू आदि में विभाजित करते हैं। हम विभाजित, विभाजित, विभाजित किया करते हैं। आप उत्तर न दें, सिर्फ़ इसकी ओर देखें। सर, हम साथ-साथ परामर्श कर रहे हैं, हम एक ही समस्या को साथ-साथ देख रहे हैं — हम क्यों विभाजित करते हैं? सचमुच स्त्री-पुरुष के बीच विभाजन है। आप लम्बे हैं, मैं नाटा हूँ, आप साँवले या गोरे हैं और मैं काला हूँ, लेकिन यह सब तो प्राकृतिक है। क्या ऐसा नहीं है? हम आज इन सब की गहराई में जाएँगे। अतः हम क्यों विभक्त करते हैं?

प्र० — क्योंकि हमारी विभिन्न धारणाएँ, विभिन्न भावनाएँ और विभिन्न स्वार्थ हैं और हम उनसे ही चिपके रहना चाहते हैं।

कृ० — आप उनसे क्यों चिपके रहना चाहते हैं?

प्र० — क्योंकि हम स्वार्थी हैं और हमारा अपना स्वार्थ होता है।

कृ० — हर चीज़ को स्वार्थपरता पर लाकर न डाल दें। हम क्यों विभाजित किया करते हैं। मैं पूछ रहा हूँ कि कौन विभाजित कर रहा है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्र० — मन सबसे पहले खुद अन्दरूनी समझ में बाँटता है, बाद में बाहरी समझ में।

कृ० — क्या यह आपका अपना अनुभव है या आप किसी दूसरे का उद्धरण दे रहे हैं?

प्र० — आधा-आधा।

कृ० — क्या हम लोग कुछ देर के लिए गंभीर हो जाएँ और इन तथ्यों का सामना करें? हमने चारों ओर की दुनिया को बाँट डाला है — पाकिस्तान, भारत, यूरोप, अमरीका, रूस आदि आदि। किसने ये सारे विभाजन किए हैं?

प्र० — मैं सोचता हूँ कि यह अहं है, यह विचार है।

कृ० — आप क्या अंदाज़ा लगा रहे हैं? आप पहले तथ्यों को क्यों नहीं देखते? हमारे अलग-अलग सिद्धान्त, विभिन्न धारणाएँ हैं : दुनिया का एक हिस्सा जीसस पर विश्वास रखता है, दूसरा अल्लाह पर, कुछ और हिस्सा बुद्ध पर एवं दूसरा हिस्सा कुछ और पर। किसने ये सब विभाजन किए हैं?

प्र० — यह तो हम मनुष्य ने किए हैं, मानवजाति ने।

कृ० — जिसका मतलब हुआ कि आप?

प्र० — जी हाँ।

कृ० — आपने संसार को बाँटा है?

प्र० — जी हाँ।

कृ० — क्यों? आपने क्यों विभाजित किया है?

प्र० — भय और सुरक्षा की ख़ातिर।

कृ० — आप जो कह रहे हैं क्या आप उसके बारे में निश्चित हैं?

प्र० — हम खुद को बाँटते हैं, क्योंकि इस बँटवारे से हमको सुख मिलता है।

कृ० — यदि आप दूसरे पक्ष द्वारा मारे जा रहे हैं तो क्या वह भी सुख है? बेढंगी टिप्पणी न करें क्योंकि यह कोई मनोरंजन नहीं है, मैं यहाँ आपके मनोरंजन के लिए नहीं हूँ।

आप मेहरबानी करके सुनें, मैं आपसे एक सवाल पूछ रहा हूँ : किसने संसार को इस तरह विभाजित किया है? क्या मानव ने ऐसा नहीं किया है? आपने ऐसा किया है — क्योंकि आप हिन्दू, मुसलमान अथवा सिख या अन्य मतावलम्बी हैं, ठीक? मनुष्य सुरक्षा चाहता है, अतः वह कहता है कि मैं बौद्ध मत से सम्बन्धित हूँ, क्योंकि उससे मेरी पहचान बनती है, वह मुझे बल देती है, वह मुझे उस स्थान का बोध कराती है जहाँ मैं रह सकता हूँ। हम ऐसा क्यों करते हैं? क्या सुरक्षा के लिए? यदि मैं एक हिन्दू के रूप में मुसलमानों की दुनिया में रहूँ तो वे सब मुझे ठुकरा देंगे। अथवा अगर मैं एक 'प्रोटेस्टेन्ट' के रूप में रोम में रहूँ तो बहुत अधिक कठिनाई होगी क्योंकि रोम कैथोलिकवाद का केन्द्र है, ठीक? किसने यह सब — यह सारी गड़बड़ी की है? आपने की है, उन्होंने की है। आप इस बारे में क्या करेंगे? इस बारे में कुछ बात करें? आप चेष्टा नहीं करना चाहते, आप कहते हैं, आइए चलते जाएँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्र० — आप हमें मदद करने का इरादा नहीं रखते पर जब हम यहाँ हैं तो हम देखते हैं कि आप हमारी मदद कर रहे हैं। ऐसा किस तरह होता है?

कृ० — यह तो बहुत बुरा है। मैं किसी की सहायता नहीं करना चाहता। दूसरे की सहायता करना ग़लत है, सिवाय शल्य-चिकित्सा में, भोजन आदि में। वक्ता आपका नेता नहीं है। मैंने सारे यूरोप, अमरीका और यहाँ इस वात को हज़ारों बार कहा है।

प्र० — आप हमारी मदद न करें लेकिन आप हमें चीज़ों को समझने दें।

कृ० — नहीं। हम साथ-साथ बातचीत कर रहे हैं। इस बातचीत से हम खुद चीज़ों को साफ-साफ देखना आरम्भ कर देते हैं। इसलिए कोई भी आपकी मदद नहीं कर रहा है, यह बातचीत है।

प्र० — जी हाँ।

कृ० — जी हाँ, न कहें। मैंने जो कहा, क्या उसे आपने सुना — कि वक्ता यहाँ किसी भी तरह से आपकी मदद करने के लिए नहीं है। वह आपका गुरु नहीं है, आप उसके अनुयायी नहीं है। वक्ता के अनुसार वह सब घृणास्पद है।

पुस्तकालय

प्र० — प्रकृति में ऐसी क्रूरता क्यों है कि जीव अपने जीवित रहने के लिए दूसरे को खाता है?

कृ० — बाघ छोटी चीज़ों को खाकर जीता है, ठीक? इस तरह बड़ी चीज़ें छोटी चीज़ों को खाती है और आप पूछ रहे हैं कि प्रकृति इतनी क्रूर क्यों है?

प्र० — नहीं, सर, प्रकृति में इतनी अधिक क्रूरता क्यों है?

कृ० — सबसे पहले, प्रकृति में इतनी अधिक क्रूरता क्यों हैं? शायद ऐसा स्वाभाविक है। ऐसा न कहें कि प्रकृति में क्रूरता है। आप इतने क्रूर क्यों हैं? मनुष्य क्यों इतने क्रूर हैं?

प्र० — मैं अपनी पीड़ा और दुःख से मुक्त होना चाहता हूँ इसलिए यदि कोई मुझे पीड़ा पहुँचाता है तो मैं भी उसी तरह प्रतिक्रिया करता हूँ, जवाब देता हूँ।

कृ० — क्या कभी आपने विचार किया है कि सभी मनुष्य दुःख पाते हैं — संसार के सभी मनुष्य, भले ही वे रूस, अमरीका, चीन, भारत या पाकिस्तान में रहते हों, या कुछ भी हों। सभी मनुष्य दुःख पाते हैं।

प्र० — जी हाँ।

कृ० — आप उस पीड़ा का हल किस तरह करते हैं?

प्र० — मुझे तो अपने दुःख की फ़िक्र है।

कृ० — आप उस बारे में क्या कर रहे हैं?

प्र० — मैं यहाँ आपसे प्रवोधन के लिए आया हूँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृ० — सर, हम साथ-साथ क्या कर सकते हैं? साथ-साथ। न कि मैं आपकी मदद करूँ या आप मेरी मदद करें। दुःख से छुटकारा पाने के लिए हम साथ-साथ क्या कर सकते हैं?

प्र० — सर, मैं नहीं जानता।

कृ० — आप निश्चित हैं?

प्र० — जी हाँ।

कृ० — नहीं, नहीं, सावधानी से जवाब दें, यह बहुत ही गंभीर सवाल है। क्या आप निश्चित हैं कि आप यह नहीं जानते कि दुःख से कैसे छुटकारा पाया जाए?

प्र० — जी हाँ, दुःख से कैसे छुटकारा पाया जाए, यह मैं नहीं जानता।

कृ० — सिर्फ एक मिनट, एक मिनट-उसी हालत में रहें। सर, क्या आप सुनेंगे? उन्होंने एक बहुत ही गम्भीर बात कही है। उन्होंने कहा — "मैं सचमुच यह नहीं जानता कि दुःख से कैसे छुटकारा पाया जाए।" ठीक? आप जब कहते हैं कि "मैं नहीं जानता" तो क्या आप जानने का इन्तज़ार कर रहे हैं? आप मेरा सवाल समझ रहे हैं?

प्र० — जी हाँ।

कृ० — मैं नहीं जानता पर हो सकता है कि मैं किसी तरह के जवाब की आशा कर रहा हूँ। अतः यदि मैं आशा कर रहा हूँ तो मैं न जानने की स्थिति में कहाँ रहा?

प्र० — अज्ञान में बना रहना — इसका क्या मतलब है?

कृ० — मैं आपको बताऊँगा कि इसका क्या अर्थ है। मैं आपकी मदद नहीं कर रहा हूँ। आप जब कहते हैं कि मैं आपकी मदद नहीं कर रहा हूँ तो यह बहुत गंभीर बात है। क्योंकि हज़ारों वर्षों से हमारी मदद की जाती रही है। आप जब कहते हैं कि 'मैं नहीं जानता' — तो इसका क्या मतलब है? मैं नहीं जानता कि मंगल ग्रह क्या है? वे एक प्राकृतिक भौतिकविद्, एक खगोलविद् हैं — मैं उनके पास यह पता लगाने जाता हूँ कि मंगल ग्रह क्या है?

प्र० — पर मंगल ग्रह में मेरी कोई रुचि नहीं है।

कृ० — मैं जानता हूँ कि मंगल ग्रह में आपकी रुचि नहीं है, न मेरी ही है। मैं तो उसे एक उदाहरण के रूप में ले रहा हूँ। मैं नहीं जानता कि मंगल ग्रह क्या है और किसी खगोल-भौतिकविद् के पास जाता हूँ और कहता हूँ — सर, मुझे बताएँ कि मंगल ग्रह क्या है? वे बताते हैं कि 'मंगल ग्रह गैस का एक विविध सम्मिश्रण है आदि, आदि।' मैं कहता हूँ कि 'यह तो मंगल ग्रह नहीं है, मंगल ग्रह के बारे में आपका वर्णन मंगल ग्रह से भिन्न है।' इसलिए जब आप कहते हैं — 'मैं नहीं जानता', तो मैं आपसे पूछता हूँ : इससे आपका क्या आशय है? मैं किसी उत्तर का इन्तज़ार नहीं कर रहा हूँ — जो कि बनावटी, झूठा हो सकता है, भ्रामक हो सकता है, इसलिए मैं इन्तज़ार नहीं कर रहा हूँ, ठीक, क्या आप, 'मैं नहीं जानता' कि स्थिति में ही हैं?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्र० — हम जब उस स्थिति में रहते हैं तो स्तब्ध रहते हैं।

कृ० — उस हालत में रहें। मैं नहीं जानता कि गंगा में कैसे तैरा जाए?

प्र० — मैं इस बारे में कुछ नहीं कर सकता।

कृ० — आप कुछ नहीं कर सकते। जब आप यह जानते ही नहीं कि दुःख का क्या कारण है, फिर उसका अन्त कैसे किया जा सकता है? आप नहीं जानते, ठीक? इसलिए आप उसी हालत में रहें और पता लगाएँ। आप जब सवाल करते हैं तो आपको जवाब का इंतज़ार रहता है। क्या ऐसा नहीं है? ईमानदार बनें, सरल बनें। आप किसी पुस्तक से, अन्य व्यक्ति से अथवा किसी दार्शनिक आदि से उत्तर चाहते हैं — कोई आपको उत्तर बताए। क्या आप प्रश्न को सुनते हैं? जो कुछ मैं कह रहा हूँ क्या उसे आप समझते हैं? आप जब प्रश्न करते हैं तो क्या प्रश्न के स्वतः खुलने का इन्तज़ार करते हैं? मैं जानता हूँ कि अगर मैं प्रश्न को भली-भाँति समझ सकता हूँ तो मैं उत्तर पा लूँगा। अतः प्रश्न में उत्तर हो सकता है।

अर्थात् मैं आप से प्रश्न पूछता हूँ, आप उत्तर खोजने की कोशिश न करें बल्कि यह पता लगाएँ कि क्या आपने प्रश्न को समझ लिया है — प्रश्न की गहराई अथवा प्रश्न का छिछलापन, प्रश्न की निरर्थकता। क्या आप प्रश्न को पहले देखेंगे? अतः सर, मैं सुझाव दे रहा हूँ, कि यदि आप वक्ता से कोई प्रश्न पूछें तो वक्ता कहता है कि स्वयं प्रश्न में शक्ति, ऊर्जा है न कि उत्तर में, क्योंकि प्रश्न में उत्तर है। ठीक? पता लगाएँ। प्रश्न के भीतर उत्तर रहता है।

प्र० — एक समझदार मन सही प्रश्न पूछ सकता है। मुझे लगता है कि मैं ज़रा भी बुद्धिमान नहीं हूँ, अतः मैं कैसे सही प्रश्न पूछ सकता हूँ?

कृ० — आप नहीं पूछ सकते लेकिन आप पता लगा सकते हैं कि आप बुद्धिमान क्यों नहीं हैं? वह बुद्धिमान है, मैं नहीं हूँ, क्यों? क्या बुद्धिमानी तुलना पर आधारित है? सर, आप समझते हैं? आपने मेरा प्रश्न सुना?

प्र० — बहुत बार हम अपने प्रश्नों के उत्तर पा जाते हैं, लेकिन उस उत्तर के लिए, हम किसी अन्य का अनुमोदन चाहते हैं।

कृ० — इस तरह उत्तर महत्वपूर्ण नहीं है, बल्कि अन्य की स्वीकृति महत्त्वपूर्ण है।

प्र० — सही उत्तर महत्त्वपूर्ण है और इसीलिए सही उत्तर को स्वीकृति की अपेक्षा होती है।

कृ० — किसके द्वारा? आपके मित्रों द्वारा जो कि समान रूप से नादान हैं। आप किसके द्वारा स्वीकृति चाहते हैं — जनमत, गर्वनर, प्रधानमन्त्री या ऊँचे पुरोहित? सर! आप किसके द्वारा स्वीकृति चाहते हैं? आप बिलकुल सोचते ही नहीं, आप सिर्फ दोहराते हैं, दोहराया करते हैं।

प्र० — सर, मैं हालात के साथ बना रहता हूँ। 'मैं नहीं जानता' की स्थिति में बना रहता हूँ, लेकिन यह थकाने वाला है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृ० — यह थकाने वाला कैसे है?

प्र० — मैं पता लगाने की कोशिश करता हूँ।

कृ० — पता लगाने की कोशिश न करें। यहाँ एक सवाल है। मनुष्य ने, हमने, संसार में ऐसी गड़बड़ी क्यों मचा रखी है — हमारे जीवन की गड़बड़ी, दूसरों के जीवन की गड़बड़ी? सर, आप समझते हैं? यह गड़बड़ी, यह गड़बड़झाला क्यों है? प्रश्न को सुनें, प्रश्न में प्रवेश करें।

क्या कभी आपने अपने हाथों में किसी अद्‌भुत रत्न को धारण किया है? आप उसे देखते हैं, या नहीं? आप उसकी पेचीदगी को देखें, कितनी सफ़ाई से तराशा गया है, कैसी अद्‌भुत कारीगरी है, ठीक? कारीगर के हाथ ज़रूर ही अद्‌भुत रहे होंगे। रत्न बहुत महत्वपूर्ण है, आप उसकी ओर देखते हैं, आप उसे संजोए रखते हैं, आप उसे मंजूषा में रखते हैं और उसे देखते हैं, क्या आप ऐसा नहीं करते?

प्र० — मैं इसे रखना चाहता हूँ।

कृ० — हाँ, सर, आप इसे अपने हाथ में रखें, मैं कह रहा हूँ कि आप इसे देखें। किसी ने आपका अद्‌भुत चित्र बनाया है। आप उसकी ओर देखें। वह आपके कमरे में है। वह आप का है। ऐसा न हो कि आप उसे लटका दें और भूल जाएँ। आप उसकी ओर देखें। प्रश्न को सुनें। पर हम उत्तर में बहुत तेज़ हैं, बहुत अधीर हैं। इसलिए, सर, मैं सुझाव दे रहा हूँ कि उसे देखें, समय लें, उसे तौलें, प्रश्न की सुन्दरता को देखें। यह पूरी तरह से अनावश्यक सवाल हो सकता है। सर, ऐसा करें। तब आप पाएँगे कि खुद सवाल में अद्‌भुत ऊर्जा है।

प्र० — हम बदलते क्यों नहीं?

कृ० — सर, क्यों? आप बदलते क्यों नहीं?

प्र० — मैं नहीं जानता पर हम नहीं बदलते।

कृ० — आप जहाँ हैं क्या वहाँ संतुष्ट हैं?

प्र० — नहीं।

कृ० — तो बदलें।

प्र० — मैं एक सवाल पूछना चाहूँगा। किसी कक्षा में एक शिक्षक पाता है कि एक बच्चा शरारती है। उसे ठीक करने के लिए उसको दण्ड देना है। क्या वह दण्ड का प्रयोग करे, जिसका कि अर्थ हिंसा है?

कृ० — 'हिंसा' शब्द से आप का क्या मतलब है? सर, जल्दी न करें। हिंसा से आप का क्या आशय है? दूसरों को चोट पहुँचाना — क्या इसे हिंसा कहते हैं? मैं आपको चोट पहुचाँता हूँ और जवाब में आप मुझे चोट पहुँचाते हैं — यह एक तरह की हिंसा है। दूसरे की हत्या करना एक और तरह की हिंसा है, दूसरे को सताना भी एक तरह की हिंसा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरे के अनुकरण की कोशिश करना — यह भी एक तरह की हिंसा है, ठीक? क्या आप इससे सहमत होंगे? अनुकरण दूसरे के ढर्रे पर चलना है — यह हिंसा है। क्या नहीं है? इसलिए मैं आप से पूछ रहा हूँ कि आप किस तरह मानसिक हिंसा और शारीरिक हिंसा समाप्त करेंगे? लोग नहीं, बल्कि आप किस तरह इसे समाप्त करेंगे?

प्र० — प्रकृति में विविधता क्यों है?

कृ० — भगवान् का शुक्र है। आप प्रकृति के बारे में क्यों परेशान हैं? आप प्रकृति के बारे में क्यों चिन्तित हैं?

प्र० — मैं विविधता को देख रहा हूँ।

कृ० — क्या आप यहाँ विविधता नहीं देखते?

प्र० — मैं इसे बाहर भी देखता हूँ।

कृ० — आप इसके बारे में क्य। करने जा रहे हैं?

प्र० — मैं जानना चाहता हूँ कि ऐसा क्यों है।

कृ० — सर, मैं आपसे अनुरोध करूँगा कि आप पहले स्वयं का अध्ययन करें। अपने आपका अध्ययन पहले। आप स्वयं से बाहर की प्रत्येक वस्तु के बारे में जानते हैं, लेकिन आप अपने बारे में कुछ नहीं जानते, ठीक? यह एक पुराना सवाल रहा है। यूनानियों ने इसे अपनी तरह से प्रस्तुत किया; मिस्त्र वासियों ने तथा प्राचीन हिन्दुओं ने भी कहा है — पहले स्वयं को जानो। क्या आप इससे आरम्भ करेंगे?

प्र० — मैं हमेशा ही यह सवाल स्वयं से कर रहा हूँ, मैं शारीरिक पीड़ा के बन्धन में क्यों हूँ? मैं यह सवाल पूछता रहा हूँ, पर मैं कोई जवाब नहीं पाता।

कृ० — शायद आप ग़लत डॉक्टर के पास जा रहे हैं। सर, मैं ऐसे लोगों को जानता हूँ जो एक डॉक्टर से दूसरे डॉक्टर के पास जाते रहते हैं। उनके पास काफी धन है, इसलिए वे एक डॉक्टर से दूसरे डॉक्टर के पास भागते हैं। क्या आप भी ऐसा करते हैं? या आपकी कोई मानसिक पीड़ा है?

प्र० — शारीरिक, साथ ही साथ मानसिक।

कृ० — कौन महत्वपूर्ण है? कौन अधिक पीड़ादायी है?

प्र० — जब शारीरिक पीड़ा चरम पर होती है तो निश्चय ही यह शारीरिक पीड़ा है जो कि महत्वपूर्ण है।

कृ० — आपने मेरे सवाल का जवाब नहीं दिया है। आप किसे महत्व देते हैं?

प्र० — जिस समय मैं जिस तरह का दुःख पा रहा हूँ, तब मैं उसे ही महत्व देता हूँ।

कृ० — सर, आपने मेरे प्रश्न का उत्तर नहीं दिया है। क्या दिया है? मैं आपसे पूछ रहा हूँ कि मानसिक पीड़ा या शारीरिक पीड़ा — कौन अधिक महत्वपूर्ण है?

प्र० — मानसिक पीड़ा से आपका क्या मतलब है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृ० — मैं आपको बताऊँगा। भय की पीड़ा, अकेलेपन की पीड़ा, चिन्ता की पीड़ा, दुःख की पीड़ा आदि — यह सब चित्त में है। अब आप किसको महत्व देते हैं — मानसिक या शारीरिक पीड़ा को?

प्र० — मानसिक पीड़ा को।

कृ० — क्या सचमुच?

प्र० — जी हाँ।

कृ० — सर, क्या आप हठ कर रहे हैं? यदि आप मानसिक पीड़ा को महत्व देते हैं तो फिर डॉक्टर कौन बनेगा?

प्र० — मैं।

कृ० — 'मैं' से आपका क्या मतलब है? आप की पीड़ा है। आप 'मैं' से भिन्न नहीं हैं। 'मैं' पीड़ा, चिन्ता, ऊब, अकेलापन, भय, सुख से बना है — यह सब है 'मैं'।

प्र० — यदि मैंने सचमुच समझा है कि हर समय सजग बने रहने की अति आवश्यकता है तो क्या बात है कि मैं दिन भर बहुत कम समय के लिए उस स्थिति में रह पाता हूँ।

कृ० — कारण यह है कि सजग होने का क्या अर्थ है, इसे आप समझते ही नहीं।

सर, यहाँ एक प्रश्न है : यह एक सच्चाई है कि के० एफ० आई० के विभिन्न केन्द्र सदा लगातार ज़ोर देते और प्रसार करते हैं कि वे कृ० की शिक्षाओं के केन्द्र हैं। इसलिए जबकि हमारे पास बुद्ध की शिक्षाएँ, क्राइस्ट की शिक्षाएँ, कृष्णमूर्ति की शिक्षाएँ हैं, तो क्या इन तथाकथित कृष्णमूर्ति की शिक्षाओं की भी वही नियति होगी जो कि बुद्ध और क्राइस्ट की शिक्षाओं की हुई? क्या आपने प्रश्न को समझ लिया है?

सर, कृ० ने शिक्षा शब्द के बारे में बहुत कुछ सोचा है। हमने वर्क (कार्य) शब्द का इस्तेमाल करना चाहा — आइरन वर्क्स, बिग बिल्डिंग वर्क्स, हाइड्रोइलेक्ट्रिक वर्क्स — आप समझते हैं? इस तरह मैंने सोचा कि 'वर्क' बहुत ही अधिक सामान्य है। अतः हमने सोचा कि शिक्षा ('टीचिंग') शब्द का प्रयोग करें, लेकिन शब्द महत्वपूर्ण नहीं होता — ठीक? बुद्ध की शिक्षाओं को कोई नहीं जानता। मैंने बुद्ध की मूल शिक्षाओं के बारे में पूछा, लेकिन किसी को पता नहीं। और क्राइस्ट रहे हों या शायद न रहे हों। यह बहुत बड़ी समस्या है कि वे थे या नहीं। हमने बड़े-बड़े विद्वानों से इस बारे में चर्चा की। पर मैं उस विषय में न जाऊँगा। क्या, कृ० की शिक्षाएँ उन्हीं की तरह लुप्त हो जाएँगी? आप मेरा प्रश्न समझ रहे हैं?

प्र० — मैंने यह नहीं कहा।

कृ० — सचमुच, आपने नहीं कहा। किसी ने यह लिखा है, इसलिए यह विचारणीय है। प्रश्नकर्ता कहता है — और शायद आप लोग भी सोचते हों — कि जब कृ० चले जाएँगे — उन्हें अवश्य जाना है, विदा होना है — तो शिक्षा का क्या होगा? क्या इनका परिणाम बुद्ध की शिक्षाओं की तरह होगा जो कि विकृत हो गई हैं? आप जानते हैं कि क्या हो रहा है। क्या वही कृ० की शिक्षा की नियति होगी? आपने प्रश्न को समझा है? यह आप पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्भर है, न कि दूसरे पर। यह आप पर निर्भर है कि आप कैसे इसे सीमित करते हैं, आप इसके बारे में क्या सोचते हैं, इसकी आपके लिए क्या उपयोगिता है। यदि यह शब्दों के अलावा कुछ भी नहीं है तो इसका भी बाकी की तरह परिणाम होगा। यदि आपके लिए इसमें बहुत अधिक गहराई है तो ये विकृत न हो पाएँगी। आप समझते हैं? इसलिए यह आप पर निर्भर है, न कि केन्द्रों और सूचना-केन्द्रों आदि के कामों पर। यह आप पर निर्भर है कि शिक्षाओं को जिएँ या न जिएँ।

प्र० — क्या सत्य की अपनी शक्ति नहीं होती?

कृ० — होती है, यदि आप उसे उसके हाल पर छोड़ दें।

प्र० — सर, वह प्रश्न मेरे द्वारा रखा गया था, क्या मैं प्रश्न को स्पष्ट कर दूँ कि उससे मेरा क्या मतलब है?

कृ० — जी हाँ। प्रश्न क्या है?

प्र० — मेरा प्रश्न यह है : पिछले ७० वर्षों में अनेक बार आपने कहा कि आप किसी से कुछ स्वीकार नहीं करवा रहे हैं, आप शिक्षक नहीं है। आप किसी को कुछ सिखाते नहीं हैं। अब मैं कहता हूँ कि के० एफ० आई० के केन्द्र, जिसके कि आप अध्यक्ष हैं — वे जनता को आमन्त्रित करते हैं, "यहाँ आइए, यहाँ कृष्णमूर्ति की शिक्षाएँ हैं, आप यहाँ अध्ययन करें कि वे क्या कहना चाहते हैं। उन्होंने कई चीज़ों का पता लगाया है। कृपया यहाँ आएँ और अध्ययन करने की कोशिश करें।" आप कहते हैं कि आप एक दर्पण की तरह काम करते हैं। मैं जब शीशे का इस्तेमाल करता हूँ तो क्या वह मेरी मदद करता है?

कृ० — हाँ।

प्र० — वह मेरी मदद अवश्य करता है। प्रकाश मेरी मदद कर रहा है। क्या ये चीज़ें आपकी शिक्षाएँ नहीं है? इसलिए अगर आप कहते हैं कि आप कुछ सिखा रहे हैं तो उसमें कोई हानि नहीं है। मैं कुछ कर रहा हूँ। आप खुद कहते हैं कि आप एक दर्पण की तरह काम करते हैं। जो कुछ करते हैं। जो कुछ भी दर्पण की तरह काम करता है, वह निश्चय ही मेरी मदद करता है।

कृ० — जी हाँ।

प्र० — यही है, मेरा सवाल।

कृ० — सर, कृ० ने अपनी सभी वार्ताओं में इस तथ्य पर ज़ोर दिया है कि वह सिर्फ एक दर्पण है — ठीक? कि वह सिर्फ़ एक दर्पण है और आपका जीवन जो कुछ है उसे वह प्रतिबिंबित कर रहा है। साथ ही उसने यह भी कहा है कि अगर आपने खुद को साफ-साफ देख लिया है तो आप उस दर्पण को तोड़ डालें। दर्पण महत्वपूर्ण नहीं है। परन्तु दुनिया भर में क्या हुआ है? वे सभी तमाशा बनना चाहते हैं। आप समझते हैं कि इसका क्या मतलब है? सभी सर्कस में शामिल होना चाहते हैं।

इसलिए मैं कहता हूँ कि बेकार परेशान न हों, केवल शिक्षाओं को सुनें। अगर कोई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुजरात में एक छोटा केन्द्र बनाना चाहता है तो उसे यह करने दें, पर उसे यह कहने का हक नहीं है कि वह कृ० का प्रतिनिधित्व करता है, कि वह उसका शिष्य है! वह जो चाहे कह सकता है, वह जो चाहता है वह करने को आज़ाद है। हम किसी पर दबाव नहीं डालते कि वह ऐसा करे या ऐसा न करे। उदाहरण के लिए, कोई वीडियो वगैरह खरीद रहा है और अपने घर में कुछ दोस्तों को जुटाता है। यह उसका मामला है। हम नहीं कह रहे हैं कि 'ऐसा न करे, वैसा करे।' यदि किसी ने ऐसा किया तो मैं कहूँगा — 'क्षमा करें, ऐसा न करें।' पर वे ऐसा करना चाहते हैं और आसान तरीक़े से भाष्यकार और गुरु होना चाहते हैं। जिस खेल को आप खेलते हैं उसे आप जानते हैं। अगर आप वैसा करना चाहते हैं तो वैसा करने के लिए आपको छूट है। लेकिन फ़ाउन्डेशन — दुर्भाग्यवश या सौभाग्यवश जिससे मैं संबंधित हूँ — कहता है कि आप जो पसंद करते हैं उसे करने के लिए स्वतंत्र हैं — सर, आप समझते हैं? 'कृ०' की किताबें खरीदें, किताबें पढ़ें, किताबें जला दें — जो कुछ आप चाहें करें। यह आपके हाथों में है। अगर आप उसे जीना चाहते हैं तो जिएँ, अगर आप उसे नहीं जीना चाहते, तो यह भी ठीक है। यह आपका काम है। अब, क्या यह हमेशा के लिए स्पष्ट हो गया है?

प्र० — जी हाँ।

कृ० — 'फाउंडेशन' का आपके जीवन पर प्रभुत्व नहीं है कि वह आपको बताए कि आप क्या करें या क्या न करें। अथवा कहे कि यही वह केन्द्र है जहाँ से तरंगों का प्रसार होता है — रेडियो स्टेशन या टेलीविज़न स्टेशन की तरह हम वैसा नहीं कह रहे हैं। जो कुछ हम कह रहे हैं वह है : यहाँ कुछ है, मौलिक हो सकता है या मौलिक नहीं हो सकता, यहाँ आपके देखने के लिए कुछ है, इसे पढ़ने में समय दें, इसे समझने में समय दें। यदि आपको पसंद नहीं है तो इसे फेंक दें, कोई बात नहीं है। यदि आप उस तरह जीना चाहते हैं तो जिएँ, यदि आप नहीं चाहते तो बिलकुल छोड़ दें। अपने चारों ओर शोर-गुल न मचाएँ। सर, मैं जो कह रहा हूँ, उसे आप समझते हैं? इसका तमाशा न करें, गाना-नाचना कि मैंने कृ० को समझ लिया है, मैं अब इसके बारे में सब कुछ बताऊँगा, आदि आदि। ठीक, सर?

समाप्त करने का समय हो गया है। अब अगर मैं पूछूँ? मैं सिर्फ पूछ भर रहा हूँ। इस सुबह के बाद आप में क्या खिल उठा है? जैसे कि सबेरे फूल खिलता है, आपमें क्या कुछ खिला है? आप में क्या प्रकट हुआ है?

प्र० — कि हममें साथ-साथ सोचने की आदत होनी चाहिए।

कृ० — क्या सचमुच आपने साथ-साथ सोचा?

प्र० — हाँ, मैंने सोचा।

कृ० — साथ-साथ आप और मैं — अथवा क्या आप अपने बारे में ही बात कर रहे हैं?

प्र० — मैं अपने बारे में भी बात कर रहा हूँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृ० — हाँ, अतः मैं पूछ भर रहा हूँ — आपको वक्ता से कुछ बताना नहीं है। मैं नम्रता के साथ सिर्फ पूछ रहा हूँ — क्या मैं पूछूँ हम यहाँ एक घंटे से अधिक समय तक मिले, साथ-साथ बात की, अपने विचारों के अनुसार बहुत सी बातें कहीं। आज सबेरे की यात्रा के अन्त में आप कहाँ है? हमने कहाँ आरम्भ किया, हमने कहाँ अन्त किया? या यहाँ कुछ नया खिला है? मैं यह कहने नहीं जा रहा हूँ कि आपके पास नहीं है या आपके पास है। ऐसा कहना मेरी गुस्ताखी होगी, ठीक?

यह अनोखा देश है। सर, आप यह महसूस नहीं करते कि यह देश अनोखा है — सुन्दर धरती, सम्पन्न फैले मैदान, रेगिस्तान, नदियाँ, पहाड़ और धरती की शान। परन्तु मनुष्य जीवन भर एक दूसरे की हत्या करने में जुटा है। अगर आप इसी तरह चलते जाएँ तो आप उसी ढर्रे को दोहराते रहेंगे — हत्या, हत्या, हत्या। भले ही आप संस्कृत के अत्यंत अद्भुत श्लोकों का पाठ करते रहें (मैं भी ऐसा करता हूँ) — लेकिन यदि आप उनके अनुसार नहीं जीते तो उसका एक पैसा भी मूल्य नहीं है। सर, इतनी ही बात है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋषि वैली शिक्षकों के साथ परिचर्चा

७ दिसम्बर, १९८५

कृष्णमूर्ति : एक अत्यन्त कठिन प्रश्न रखने की मुझे अनुमति दें। यदि आपका पुत्र अथवा पुत्री यहाँ रहे तो आप उन्हें किस प्रकार शिक्षित करना चाहेंगे ताकि उनमें जीवन की सम्पूर्णता विकसित हो सके?

यहाँ आपके निकट बहुत सारे विद्यार्थी हैं — समर्थ, कुशाग्र। सम्पूर्णता का जीवन वे जी सकें इसके लिए किन तरीक़ों से, किस दृष्टिकोण से, किस प्रकार की मौखिक व्याख्या से आप उन्हें शिक्षित करेंगे? सम्पूर्णता से मेरा आशय है : सम्पूर्ण, अटूट, छितराया हुआ या विखण्डित नहीं जैसा कि हममें से अधिकतर लोगों का जीवन है। यदि अनुमति है इसे आपके समक्ष रखने की तो मेरा प्रश्न है, सम्पूर्णता का जीवन आप किस प्रकार विकसित करेंगे, एक ऐसा दृष्टिकोण जो विशेषताओं में विखण्डित नहीं है?

शिक्षक : सर, सबसे पहले हमें स्वयम् ही सम्पूर्ण होना पड़ेगा।

कृष्णमूर्ति : सर, यह तो निहित है। पर सर्वप्रथम, आप सब यहाँ शिक्षक हैं, मेरे समेत (यदि आप अनुमति देंगे)। ऋषि वैली में मैं प्रसन्न हूँ। इस स्थान को मैं पसन्द करता हूँ, इसके सौन्दर्य को, इसकी पहाड़ियों को, चट्टानों को, फूलों और पहाड़ की परछाइयों को। यहाँ के शिक्षकों में मैं भी हूँ; माता-पिता ने अपने बच्चों में से एक को मेरे पास यहाँ भेज दिया है और मैं अवश्य चाहता हूँ कि वे यहाँ ऐसा जीवन जी सकें जो सम्पूर्ण हो — सम्पूर्ण का अर्थ है अच्छा।

'अच्छा', इस शब्द के साधारण अर्थ में नहीं, परम्परागत 'अच्छा' शब्द नहीं, अच्छा लड़का, अच्छा पति — यह सब तो बड़ा सीमित है। यदि आप अच्छाई को सम्पूर्णता से जोड़ते हैं तो 'अच्छा' शब्द बड़ा भारी महत्व रखता है। तब अच्छा में असाधारण रूप से उदारता की गुणवत्ता है, अच्छा में यह भाव है कि किसी को भी यह चोट न पहुँचाएं; सचेत; अच्छा इस भाव से कि यह सही है — कुछ समय के लिए नहीं वरन सदा के लिए सही। अच्छा इस भाव से कि वह परिस्थितियों पर निर्भर नहीं करता; यदि वह अभी सही है तो सौ साल बाद भी वह सही रहेगा अथवा दस दिन बाद भी। अच्छाईयुक्त सहीपन का संबंध वातावरण, परिस्थिति, दबाव आदि से नहीं है। इससे तो सही कार्य उत्पन्न होता है। इस प्रकार अच्छाई और सम्पूर्णता के जीवन साथ-साथ चलते हैं। मैं किस प्रकार देख पाऊँगा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि बालक अच्छाई और सम्पूर्णता का जीवन जी रहा है? क्या हम एक दूसरे पर यकीन करते हैं? क्या यह व्यक्तिगत समस्या है अथवा समस्या है पूरे स्कूल की, पूरी संस्था की? तो कार्य निश्चय ही व्यापक होना चाहिए — यह नहीं कि अच्छाई के संबंध में उन महाशय का सोच एक तरह का है और मेरा दूसरे तरह का। वह निश्चय ही स्निग्ध, संयोगशील कार्य है। अब बताएं, क्या वह संभव है?

सर, सम्पूर्णता में कट्टरपन, संगठित स्वरूप नहीं वरन धर्म की वह गुणवत्ता होनी चाहिए जिसके संबंध में हम अभी विचार करेंगे। शिक्षक के रूप में यहाँ रहते हुए हम उसे किस प्रकार लाएंगे?

शिक्षक : हमें पहली बात यह करनी है कि बच्चा अपने संबंध में यहाँ सुरक्षित अनुभव करे। मुझे ऐसा लगता है कि जब तक बच्चा यहाँ मेरे साथ और स्थान के साथ अपने संबंध में सुरक्षित अनुभव नहीं करता कुछ भी सकारात्मक नहीं हो पायेगा।

शिक्षक : मैं यह समझना चाहता हूँ कि जो आप कह रहे हैं क्या मैं वही करना चाहता हूँ। अगर मैं अनुभव करता हूँ कि यह वही है जो सचमुच मैं करना चाहता हूँ, तब मुझे निश्चय ही निरीक्षण करना चाहिए कि मेरे लिए उसका अर्थ क्या है, और मेरी भावनाओं की अंतर्वस्तु क्या है। यदि आप और हम इस स्कूल में साथ मिलकर कार्य कर रहे हैं तो क्या यह आवश्यक है कि अलग-अलग अर्थ लिए रहने के बजाय वस्तुतः हम उस तत्व का पता लगाएं जो हम सबों के लिए समान रूप से जीवन्त है? — इसलिए नहीं कि हम एक विचार पर दृढ़ हैं अथवा एक विचार को लेकर साथ मिल रहे हैं, वरन् निरीक्षण द्वारा हम साथ कह सकें, 'यही वह है।'

कृष्णमूर्ति : सर, सम्पूर्णता का जीवन जीना, क्या हम इसे समझते हैं? अथवा यह महज़ सिद्धान्त है?

शिक्षक : सर, शायद विपरीत स्थिति द्वारा ही हममें समझ आती है। स्वयम् में हम विखण्डन देखते हैं।

कृष्णमूर्ति : यदि आप स्वयम् में विखण्डन अथवा टूट देखते हैं तो कैसे इससे मुक्त हुआ जाए, कैसे सम्पूर्ण बना जाए, यह आपकी समस्या है, मैं इसके संबंध में समस्या नहीं चाहता। समस्या बना कर तो मैं उसे विखण्डित कर दूँगा।

शिक्षक : इसके विपरीत तथ्य यह है कि हम सब विखण्डित हैं।

कृष्णमूर्ति : एक मिनट ठहरें। मैं जानता हूँ कि मैं विखण्डित हूँ ; मेरी सम्पूर्ण विचार-प्रक्रिया विखण्डित है। और यह भी मैं समझ रहा हूँ कि इसको लेकर निश्चय ही मुझे समस्या नहीं बनाना चाहिए क्योंकि तब तो वह एक और भी विखण्डन बन जाएगा।

शिक्षक : विखण्डन के संबंध में मेरा भाव स्वयम् ही समस्या है — मैं समस्या नहीं बनाता ; मैं तो समस्या को देखता हूँ।

कृष्णमूर्ति : मैं समझ रहा हूँ। मैं महसूस करता हूँ कि मैं विखण्डित हूँ, पर मैं नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहता कि इसे समस्या बना लूँ।

शिक्षक : लेकिन, सर, जब मैं देखता हूँ कि मैं विखण्डित हूँ तो क्या इसका अर्थ है कि यह एक समस्या है?

कृष्णमूर्ति : यही तो मैं पता लगाना चाहता हूँ, अर्थात् — मैं देखता हूँ मैं विखण्डित हूँ; मैं एक बात कहता हूँ और करता हूँ दूसरी, एक बात सोचता हूँ और जो सोचता हूँ उसे काट देता हूँ, और बड़ी स्पष्टता से यह भी देखता हूँ कि इसको लेकर मुझे समस्या नहीं बना लेना चाहिए।

शिक्षक : शायद मैं उसे स्पष्ट रूप से नहीं देखता।

कृष्णमूर्ति : इसी पर तो मैं चर्चा करना चाहता हूँ। यदि मैं उसे समस्या बना रहा हूँ तो पहले से ही और भी विखण्डित करने में मैं लगा हूँ।

शिक्षक : पर एक बीच की अवस्था भी है।

कृष्णमूर्ति : मैं वह नहीं चाहता। मैं विखण्डित हूँ, टूटा हूँ विभिन्न तरह से। अगर मैं स्वयम् को यह कहता हूँ "मुझे निश्चय ही विखण्डित नहीं होना चाहिए, और इस प्रकार इसे समस्या बना लेता हूँ, तो यह कथन ही विखण्डन की उपज है। विखण्डन से जो उत्पन्न होगा वह विखण्डन का ही एक रूप होगा। पर हमारा मस्तिष्क समस्याएँ बनाने में प्रशिक्षित है। अतः निश्चय ही हम इस पूरी वृत्ताकार प्रक्रिया के प्रति सजग रहें। तो हमें क्या करना है?

शिक्षक : इसपर आपका कहना है, इसे लेकर हमें समस्या नहीं बनानी चाहिए। क्या यह हमारी पसन्द-नापसन्द की बात है अथवा यह स्वचालित प्रक्रिया है? जब हम अपने अन्दर विखण्डन देखते हैं तो हम कहते हैं, "मैं नहीं चाहूँगा कि इसको लेकर मैं समस्या बना लूँ।

कृष्णमूर्ति : सत्यता को देखिए, यह नहीं कि "मैं समस्या नहीं बनाऊँगा।" मैं तथ्य को देखता हूँ कि अगर मैं इसको लेकर समस्या बना लेता हूँ तो यह एक और भी विखण्डन है। इतना काफी है। मैं इसे देख रहा हूँ। "मुझे निश्चय ही इससे छुटकारा पा लेना चाहिए, मैं ऐसा नहीं कहता। तो मुझे क्या करना है?

शिक्षक : ऐसी हालत में क्या कुछ किया जा सकता है?

कृष्णमूर्ति : मैं आपको दिखलाऊँगा। यदि मेरे ऐसा कहने का बुरा न मानें तो इतना अधीर नहीं होइए।

शिक्षक : जैसा कि मैं समझ रहा हूँ, सचमुच में ग़ौर करने, निरीक्षण करने के सिवाय कुछ भी नहीं किया जा सकता।

कृष्णमूर्ति : केवल एक मिनट रुकिए, सर। उस निष्कर्ष पर नहीं आइए। मुझे क्या करना है?

शिक्षक : देखना, ग़ौर से।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृष्णमूर्ति : सर, मुझे न बताइए। ये केवल शब्द हैं। मैं देख रहा हूँ। मैं विखण्डित हूँ, इसका बोध है मुझे कि मैं जो कुछ भी करता हूँ वह एक और विखण्डन है दूसरी तरह का, तो मेरे लिए क्या बचा रह जाता है? आप स्वयम् को उस स्थिति में नहीं रखिए; आप तो पहले ही निष्कर्ष पर पहुँच चुके हैं। इस प्रकार निष्कर्ष भी एक और विखण्डन है। एक प्रश्न है मेरा : क्या सम्पूर्णता से जीने का कोई मार्ग है जिसमें धार्मिक मन एवं गहरी अच्छाई हो, जिसमें कोई गड़बड़ी, कोई द्वैत-द्वन्द्व नहीं रहे? क्या मैं इसे जटिल बना रहा हूँ?

शिक्षक : नहीं, सर।

कृष्णमूर्ति : क्यों नहीं, सर? मेरा सम्पूर्ण व्यक्तित्व द्वैतपूर्ण ढंग से सोचता है। मैं यह करना चाहता हूँ, और फिर भी मुझे निश्चित रूप से ऐसा नहीं करना चाहिए, इस अर्थ में मुझमें सदैव भीतरी अन्तर्विरोध बना हुआ है। मुझे यह करना चाहिए पर मैं ऐसा नहीं करना चाहता, आदि। यह परस्पर विरोधी स्थितियाँ लेता रहता है। तो मेरे लिए क्या बचता है? एकही नज़र में, अथवा विश्लेषण के ज़रिए यह सब मैं देख लेता हूँ। और मैं देखता हूँ इसी तरह का है यह। तब मेरा प्रश्न है : मुझे करना क्या है? मुझे बताएँ नहीं, तुम्हें यह करना चाहिए अथवा नहीं करना चाहिए — मैं आपकी एक बात भी स्वीकार नहीं करता। स्वभावतः मैं सदेहशील हूँ।

शिक्षक : आप प्रश्न पूछ रहे हैं : मुझे क्या करना चाहिए? जहाँ निरीक्षण है वहाँ कोई भी प्रश्न निर्मित नहीं होते।

कृष्णमूर्ति : क्यों आप ऐसा कर रहे हैं?

शिक्षक : हाँ।

कृष्णमूर्ति : क्या आप वैसा कर रहे हैं? अगर आप वैसा नहीं कर रहे और कहते हैं हमें अवश्य ही प्रयास करना चाहिए तो आप अन्तर्विरोध में हैं। अतः द्वैत बना हुआ है, इसीलिए विखण्डन कायम है, और अच्छाई के लिए जगह नहीं है।

शिक्षक : जैसे ही अच्छाई की सम्पूर्ण स्थिति के संबंध में आप कुछ कहते हैं अथवा सोचते हैं, तो उसके पहले ही आपमें अन्तर्विरोध कार्यशील रहता है।

कृष्णमूर्ति : नहीं, आप अन्तर्विरोध की स्थिति में नहीं हैं। आप इसे शब्दों में व्यक्त कर रहे हैं। जब आप अपने विद्यार्थी को इस अच्छाई के साथ शिक्षित करना चाहते हैं तो आपका क्या कार्य होगा?

इस स्कूल की विशिष्ट ख्याति है, उसके संबंध में एक ऊँची भावना है। और इस घाटी का एक खास वातावरण है। और मैंने अपने पुत्र को आपके निकट भेजा है, यह आशा करते हुए कि सम्पूर्णता के जीवन में विकसित होने में आप उसकी सहायता करेंगे। मैं तो संवाद बना रहा हूँ, खण्डन नहीं कर रहा।

शिक्षक : इसी क्रम में मैं प्रश्न उठाता हूँ और विरोध उत्पन्न होता है।

कृष्णमूर्ति : मैं समझ रहा हूँ। प्रश्न के संबंध में हम खोजबीन की कोशिश कर रहे हैं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम नियमों का प्रतिपादन नहीं कर रहे। कम-से-कम मैं वैसा नहीं कर रहा। विद्यार्थी की सहायता मैं किस प्रकार कर सकता हूँ, सचमुच मैं यह पता लगाना चाहता हूँ। हो सकता है मैं सम्पूर्ण नहीं हूँ। यह नहीं कहें, सर्वप्रथम मुझे निश्चय ही सम्पूर्ण बन जाना चाहिए, और मैं तब पढ़ा सकता हूँ। ऐसा कहते हैं तो आप मृत हैं। तब अनन्त समय लगेगा। अगर आप कहते हैं, "पहले मुझे अवश्य ही सम्पूर्ण बन जाना चाहिए", तब आपने स्वयम् को अस्पष्ट बना लिया। सर, मैं कुछ भी नहीं कह रहा। मैं तो सचमुच नहीं जानता कि इन बच्चों के साथ कैसा व्यवहार किया जाए जिनके माता-पिता यह चाहते हैं कि वे इण्डियन इंस्टीच्यूट ऑफ टैकनॉलाजी या कोई और दूसरे कॉलेज में ये दाखिल हो जाएँ। और मुझसे प्रबल विरोध है समाज का — पिता, माता, दादा, सभी चाहते हैं कि लड़का नौकरी आदि हासिल कर ले। मैं यह सब कैसे ला सकता हूँ? आप मुझे उत्तर न दें।

शिक्षक : कृष्णजी, मैं यह कैसे ला सकूँगा इस प्रश्न का उत्तर मैं नहीं दे रहा; मैं तो विखण्डन को देख रहा हूँ।

कृष्णमूर्ति : इसका अर्थ क्या है? इसे समझिए — मैं विखण्डित हूँ, लड़का विखण्डित है। है न, सर?

शिक्षक : जी, है।

कृष्णमूर्ति : तब मेरे और लड़के के बीच क्या संबंध है?

शिक्षक : हम साथ मिलकर सीख रहे हैं।

कृष्णमूर्ति : शब्दों का उपयोग जल्दबाजी में न करें। मेरा संबंध लड़के से क्या है जो स्वयम् मेरे जैसा ही विखण्डित है?

शिक्षक : मैं उससे भिन्न नहीं हूँ।

कृष्णमूर्ति : निःसंदेह आप उससे भिन्न हैं — आप गणित पढ़ाते हैं, वह गणित बिलकुल नहीं जानता। आप उससे भिन्न नहीं हैं, ऐसा न कहें।

शिक्षक : जब मैं विखण्डित हूँ तो कोई ज़रा सा भी संबंध नहीं है।

कृष्णमूर्ति : सर, कृपा कर मेरे प्रश्न का उत्तर दीजिए : मैं विखण्डित हूँ, और मैं आपका विद्यार्थी हूँ। तो हमारा क्या संबंध है? अथवा ज़रा भी कोई संबंध है? अथवा हम सब एक ही तल पर हैं?

शिक्षक : यह तो विखण्डित संबंध होगा।

कृष्णमूर्ति : सचमुच में मेरा संबंध क्या है?

शिक्षक : लगता है कोई संबंध नहीं है।

कृष्णमूर्ति : क्या विखण्डितों के बीच संबंध हो सकता है?

शिक्षक : क्यों नहीं?

कृष्णमूर्ति : क्या आप सचमुच मुझसे वह प्रश्न पूछ रहे हैं?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिक्षक : हाँ।

कृष्णमूर्ति : आप उत्तर दीजिए। आपने मुझसे एक सवाल किया और उत्तर देने को मैं अत्यधिक उत्सुक हूँ! तो यह आपके और मेरे बीच की बात है, मैं उत्तर देता हूँ और तब आप प्रत्युतर देते हैं, फिर उसका जवाब मैं देता हूँ, और ऐसे ही आगे चलता है। वह मुझसे एक प्रश्न पूछता है और आशा करता है कि उत्तर दूंगा, और मैं कहता हूँ, 'मैं उत्तर नहीं दूँगा, क्योंकि स्वयम् प्रश्न में ही उत्तर है।' तो क्या हम प्रश्न पर ग़ौर कर सकते हैं और क्या प्रस्फुटित होने का इन्तज़ार कर सकते हैं? मेरा प्रश्न अत्यन्त गंभीर है। यदि आप प्रस्फुटन होने दें तो प्रश्न में ही उत्तर निहित है, यदि आप उसे एकान्त और शान्त रहने दें, यदि आप उसे तुरन्त ढांक न दें। आपकी प्रतिक्रिया पहले से ही संस्कारित है, पहले से ही व्यक्तिगत है, इसलिए उस प्रश्न को छोड़ दीजिए। यदि प्रश्न में गहराई है, महत्व है, तेजस्विता है, तो प्रश्न स्वयम् सहज बनकर अपना भेद खोल देता है।

अब, सर, सत्य क्या है? क्या सत्य का अस्तित्व है? आप ईमानदार हैं कि नहीं आप नहीं जानते, इसलिए हम उस प्रश्न को छोड़ दें। हम प्रश्न पर ग़ौर करें, और प्रश्न खुद ही अपने रहस्य खोलने लगता है। सत्य क्या है, अथवा यह केवल सक्रिय, प्रबल भ्रम है? मैं इसकी गहराई में नहीं जाऊँगा। अगर प्रश्न में गहराई है, यदि प्रश्न में प्रबल तेजस्विता का भाव है — क्योंकि एक महान आन्तरिक खोज में आप यह प्रश्न रख रहे हैं — स्वयम् प्रश्न को उत्तर देने दें। यदि आप उसे छोड़ दें तो वह निश्चय ही उत्तर देगा। अब मैं अपने मूल प्रश्न पर आ रहा हूँ।

शिक्षक : एक बालक मेरे पास आता है। मैं विखण्डित हूँ, वह विखण्डित है। अतः कोई संबंध नहीं है।

कृष्णमूर्ति : कोई संबंध नहीं है, क्या आप पूरी तरह आश्वस्त हैं, अथवा केवल कह भर रहे हैं?

शिक्षक : मैं समझता हूँ कि मैं पूरी तरह आश्वस्त हूँ। विखण्डित अवस्था में कोई संबंध नहीं हो सकता, और मैं देखता हूँ कि उस विद्यार्थी को जो भी उत्तर मैं दूँगा वह उत्तर स्वयम् ही विखण्डित होगा।

कृष्णमूर्ति : हाँ। आप रुक जाते हैं। तब आप क्या करेंगे? जो भी संबंध मेरा है वह अभी भी विखण्डित है। क्या यह सच्चाई है अथवा मौखिक कथन?

शिक्षक : मुझे तो वह सच्चाई लगती है।

कृष्णमूर्ति : या तो यह सच्चाई है जैसे कि यह माइक्रोफोन, वह भ्रम नहीं है। माइक्रोफोन शब्द माइक्रोफोन नहीं है। मैं नहीं कह सकता, क्या आप इसकी गुणवत्ता को समझ रहे हैं? तो हम अवश्य ही वापस आ जाएँ। सर, मुझे क्या करना होगा? आप मुझे बताएँ।

शिक्षक : क्या मैं स्वयम् को धोखा दूँ कि मैं सम्पूर्णता की शिक्षा दे रहा हूँ?

कृष्णमूर्ति : हम पता लगाने जा रहे हैं, आप और मैं, क्या ऐसा कर पाना संभव है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा नहीं। पहला कथन है : हम विखण्डित हैं। हम इस पर दृढ़ रहें। हम दोनों ही विखण्डित हैं। और क्या करना है मुझे पता नहीं। इसका अर्थ आपके लिए क्या है — मैं नहीं जानता ; मुझे पता नहीं कि मुझे क्या करना है। तब हम निश्चय ही पता लगाएँ। जब मैं कहता हूँ, "मैं नहीं जानता", क्या सचमुच मैं समझता हूँ कि मैं नहीं जानता, अथवा कोई हमें बताएगा, जिसकी हमें प्रतीक्षा होती है, और मैं जान लूँगा, यह क्या है?

शिक्षक : इस समय तो यह है कि हमें कोई बतला दे।

कृष्णमूर्ति : क्या मस्तिष्क की कोई ऐसी अवस्था होती है जब मस्तिष्क कहे, 'मैं सचमुच नहीं जानता? मैं प्रतीक्षा नहीं कर रहा कि वह उत्तर देगा अथवा किसी और से भी अपेक्षा नहीं कि वह मुझे बताएगा। ये सभी अवस्थाएँ हैं जब मैं उत्तर की प्रतीक्षा में होता हूँ। पर कोई भी इसका उत्तर नहीं दे सकता, क्योंकि वे सभी विखण्डित हैं। अतः मैं प्रतीक्षा में हूँ, निहार रहा हूँ, निरीक्षण कर रहा हूँ, प्रश्न को ध्यान से सुन रहा हूँ। मैं नहीं जानता कि मुझे क्या करना चाहिए। तब मैं स्वयम् से पूछता हूँ, मेरे मस्तिष्क की वह कौन सी अवस्था है जब वह कहता है : "मैं नहीं जानता?"

शिक्षक : उस क्षण वह कार्यशील नहीं रहता।

कृष्णमूर्ति : 'मैं नहीं जानता,। अथवा क्या आप जानने की प्रतीक्षा कर रहे हैं?

शिक्षक : जानने की प्रतीक्षा।

कृष्णमूर्ति : चूँकि आप जानने की प्रतीक्षा कर रहे हैं इसलिए आप जान जाएँगे। इसीलिए आपका मस्तिष्क नहीं कह रहा 'मैं नहीं जानता' आप जानते हैं, यह बिल्कुल तर्कसंगत है।

शिक्षक : मस्तिष्क नहीं कह रहा कि यह नहीं जानता।

कृष्णमूर्ति : यही बात है, यह पहली बात है — मैं नहीं जानता कि इस स्थिति को मस्तिष्क कभी संपुष्ट नहीं करता, उस स्थिति में कभी नहीं रहता। आप मुझसे पूछें : 'ईश्वर क्या है'? और मैं तत्परता से अविलम्ब उत्तर देता हूँ। आपने पढ़ा है अथवा आप विश्वास करते हैं अथवा विश्वास नहीं करते। ईश्वर प्रतीक रूप में आपके सामने आता है। पर अगर आप पूछें : किए तत्व ने इसकी रचना की? यह प्रश्न अद्‌भुत रूप से दिलचस्प है, जीवन क्या है? जीवन का उद्‌गम क्या है? जो बीज आप रोपते हैं उसमें जीवन क्या है? मानव का जीवन — जीवन का मूल क्या है, जीवकोश क्या है? अभी मैं इनपर ग़ौर करने नहीं जा रहा — यह भटका कर कहीं और ले जाता है; यह अत्यधिक दुरूह है।

तो मैं नहीं जानता कि उस बच्चे के साथ अथवा स्वयम् अपने साथ क्या व्यवहार किया जाए। कोई भी कार्य जो मैं करता हूँ — विचार की कोई भी गति, तो फिर वह भी विखण्डन से ही उद्‌भूत है, ठीक? अतः इसे एकान्त छोड़ दिया जाये। क्या मैं आगे बढ़ूँ?

शिक्षक : हाँ, सर।

कृष्णमूर्ति : प्रेम क्या है? दया, सहानुभूति आदि से इसका कोई संबंध नहीं है। प्रेम क्या है? आप नहीं जानते। क्या प्रेम कछ नहीं जानने की अवस्था है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं नहीं जानता कि उस लड़के अथवा लड़की से कैसे व्यवहार किया जाए। मैं उसे गणित, भूगोल, इतिहास, जीव-विज्ञान, रसायन, मनोरोग विज्ञान या कुछ भी पढ़ा सकता हूँ — पर वह सब तो कुछ नहीं है। इसके लिए काफ़ी गहरी खोज आवश्यक है, अत्यधिक गहरी। तो मैं पूछता हूँ, वह क्या है जो पूर्णतया परिपूर्णता है? निश्चित रूप से वह विचार नहीं है — विचार तो अनुभव है। निश्चित रूप से सम्पूर्णता सहानुभूति नहीं है, उदारता नहीं है, संवेदना नहीं है, 'आप बहुत अच्छे हैं', यह कथन भी तो प्रेम नहीं है, क्या?

शिक्षक : करुणा।

कृष्णमूर्ति : प्रेम, करुणा — मात्र यही सम्पूर्णता है। मैं स्वयम् से कुछ आविष्कार नहीं कर रहा। मैं कह रहा हूँ, प्रेम विचार नहीं है, प्रेम सुख नहीं है। इसे आप स्वीकार नहीं करें। प्रेम का ज़रा-सा भी कोई संबंध घृणा, डाह, क्रोध आदि से नहीं है। प्रेम तो पूर्णतया अटूट है। यह सम्पूर्ण है और इसकी अपनी प्रज्ञा है।

शिक्षक : अनेक तरह से यह कहते पहले भी मैंने आपको सुना है।

कृष्णमूर्ति : जानना : क्या किसी व्यक्ति के संबंध में आप कभी कह सकते हैं कि मैं जानता हूँ, मैं अपनी पत्नी को जानता हूँ?

शिक्षक : किसी न किसी रूप में आप उससे बिलकुल अलग हो जाते हैं।

कृष्णमूर्ति : हाँ। अगर मैं कहता हूँ कि मैं आपको जानता हूँ तो आपके संबंध में मैं क्या जानता हूँ? तो यह कहना कि मैं जानता हूँ, विखण्डन है।

सर, मैंने एक प्रश्न पूछा, वह है : क्या मैं विद्यार्थी की सहायता कर सकता हूँ अथवा उससे बात कर सकता हूँ कि प्रेम सम्पूर्ण है, प्रेम की एवं करुणा की अपनी प्रज्ञा है। मैं यह देखने जा रहा हूँ, क्या वह प्रज्ञा गतिमान हो सकती है?

शिक्षक : आप कहते हैं कि प्रेम की अपनी प्रज्ञा है, आप कहते हैं प्रेम सम्पूर्णता है, वह कभी विखण्डित नहीं है। क्या यह केवल एक कल्पना नहीं है?

कृष्णमूर्ति : यह कल्पना नहीं है। प्रेम ऐसा नहीं है जिसे मान लिया गया हो। हे ईश्वर!

शिक्षक : हो सकता है वह ऐसा हो, क्योंकि मैं नहीं जानता।

कृष्णमूर्ति : वहीं रहिए। आप नहीं जानते। रुकिए, पता लगाइए; उत्तर न दीजिए। मैं नहीं जानता कि आधुनिक कार के अन्दर क्या है। तथ्य यह है कि मैंने पुरानी कार को अलग कर दिया है, अतः अब नई के बारे में सीखना चाहता हूँ। मैं एक मिस्त्री के पास जाता हूँ और वह मुझे सिखलाता है क्योंकि उसकी कार्यविधि मैं जानना चाहता हूँ। मैं वहाँ जाता हूँ, कष्ट उठाता हूँ; अगर मेरे पास पैसा है तो उसे देता हूँ, अथवा उस कार के प्रत्येक पुर्जे को जान लेने तक मैं उसके साथ कार्य करता हूँ। इसका अर्थ हुआ कि मैं सीखना चाहता हूँ, पर मुझे यकीन नहीं है कि आप सीखना चाहते हैं।

शिक्षक : परन्तु कृष्णजी, सीखने की यही कामना .....

कृष्णमूर्ति : इसे विखण्डन में नहीं ले जाइए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं नहीं जानता कि वह कैमरा किस तरह कार्य करता है, और आप कहते है कि इसके संबंध में सीख लीजिए। मैं जाकर उससे अनुरोध करता हूँ, और मैं उसका अप्रेन्टिस (सीखने वाला) बन जाता हूँ : वह किस प्रकार कार्य करता है, मैं ग़ौर से देखता हूँ; उसके संबंध में सीख लेता हूँ। तब मैं कहता हूँ कि कैमरे से कैसे कार्य लिया जाए यह मैं जानता हूँ। पर मानव समुदाय कैमरा नहीं है, मानव बहुत ही ज्याद़ा दुरुह और जटिल है। वह अस्त-व्यस्त तवाह मशीन की तरह है, और मैं चाहता हूँ कि उसके मस्तिष्क की कार्यविधि जान लूँ। या तो मैं जीवशास्त्री बन जाता हूँ अथवा मस्तिष्क विशेषज्ञ, अथवा मैं स्वयम् का ही अध्ययन करता हूँ जो बहुत ही अधिक विस्मयकारी है। तो मैं अपने मस्तिष्क की कार्यविधि सीख लेता हूँ — मुझे कोई सिखानेवाला नहीं होता।

शिक्षक : हो सकता है। मैं आपको ध्यान से सुन रहा हूँ।

कृष्णमूर्ति : मैं उनपर यकीन नहीं करता। उनका सारा ज्ञान किताबी है अथवा वे जुड़े हैं उनके छोटे तुच्छ स्वत्वों से। इसलिए मैं कहता हूँ कि मैं इस सम्पूर्ण जीवनशैली की जाँच-पड़ताल करने जा रहा हूँ, महज कुछ हिस्सों की नहीं।

तो हम वापस आ जाएँ : मुझे क्या करना चाहिए अथवा क्या नहीं करना चाहिए। केवल लड़के जिन्हें मैं पढ़ा रहा हूँ की अपेक्षा यह प्रश्न बहुत अधिक गहरा है। संभव है मैंने सचमुच यह समझा ही नहीं कि क्या है सम्पूर्णता का जीवन जीने का अर्थ; बौद्धिक रूप से भी नहीं।

शिक्षक : यदि आपका आशय है बौद्धिक रूप से, तो मैं कहूँगा कि मैंने समझा है।

कृष्णमूर्ति : नहीं, नहीं, नहीं। क्या आपको पक्का यक़ीन है ?

शिक्षक : हाँ, मुझे पक्का यक़ीन है — बौद्धिक रूप से।

कृष्णमूर्ति : तो आपने बुद्धि को सम्पूर्णता से पृथक् कर दिया। सर, ध्यान दीजिए; जब आप कहते हैं कि बौद्धिक रूप से आपने समझ लिया तो इसका अर्थ हुआ कि आपने आंशिक रूप से ही समझ लिया।

शिक्षक : मैं केवल मौखिक रूप से कह भर नहीं रहा; मैंने बौद्धिक रूप से समझ लिया है।

कृष्णमूर्ति : मैं कहता हूँ, सर, आप ध्यानपूर्वक नहीं सुन रहे हैं। जब कोई कहता है, मैंने बौद्धिक रूप से समझ लिया है, तो इसका बिलकुल ही कोई अर्थ नहीं; जब आप बौद्धिक कहते हैं तो वह एक दूसरा विखण्डन है।

शिक्षक : हाँ, सर।

कृष्णमूर्ति : तो मैंने बौद्धिक रूप से समझ लिया, इस तरह के शब्दों का इस्तेमाल हम नहीं करें। वह एक अपराध है। मैं क्या हूँ, ऋषिवैली में शिक्षक हूँ, खण्डित रूप से समझता हूँ, मौखिक रूप से कहता हूँ कि सम्पूर्णता का जीवन जीना चाहिए, और जानता हूँ कि मैं तथा विद्यार्थी दोनों ही विखण्डित हैं — यह समझते हुए मैं क्या करने जा रहा हूँ अथवा मैं क्या नहीं करूँ? आप ग़ौर कर रहे हैं न?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं यहाँ हूँ, माता-पिता के प्रति, उस लड़के अथवा लड़की के प्रति जवाबदेह हूँ। उन लोगों ने उन्हें यहाँ भेजा है क्योंकि आपकी ख्याति अच्छी है, आप उनकी अच्छी देखभाल करते हैं, आदि। वह आता है सामने और कहता है, 'यह सब तो ठीक है, पर महत्त्व की बात है सम्पूर्णता की जीवनशैली, बौद्धिक रूप से नहीं वरन सम्पूर्ण चित्त, सम्पूर्ण अस्तित्व जो अभी विखण्डित है, यदि वह सम्पूर्ण बनाया जा सके तब आपकी शिक्षा बहुत ही असाधारण कही जाएगी। वह यही कहकर चला जाता है, और मैं नहीं जानता कि क्या किया जाए। सम्पूर्ण का मौखिक अर्थ मैं समझता हूँ, कि विखण्डित नहीं हो, छिन्न-भिन्न नहीं हो, यह नहीं कि हम कह रहे हैं, सोच रहे कुछ और हैं, परंतु कर रहे हैं बिलकुल उल्टा — यह सब कुछ जीवन का विखण्डन है। और मैं नहीं जानता कि क्या किया जाए; मैं सचमुच नहीं जानता। गहराई में, गंभीर रूप में, पूरी ज़िम्मेवारी के साथ मैं नहीं जानता कि मुझे करना क्या है। क्या मैं इन्तज़ार कर रहा हूँ कि कोई आकर बताएगा अथवा कोई पुस्तक हमें बताएगी, अथवा मेरी यह आशा है कि कुछ अकस्मात घटित हो जाएगा और दुर्भाग्यवश, वह मुझे अन्तर्दृष्टि दे देगा? मैं उसके लिए प्रतीक्षा नहीं कर सकता, क्योंकि लड़का बड़ा हो रहा है और चारों ओर दौड़ लगा रहा है।

तो हमलोग क्या करेंगे? एक बात तो निश्चित रूप से मैं स्पष्टतः सही जानता हूँ : कि मैं नहीं जानता कि मुझे क्या करना है। मेरे सभी आविष्कार, मेरा समस्त चिन्तन धराशायी हो गया। पता नहीं, आप वैसा सोचते हैं अथवा नहीं। मैं नहीं जानता — अतः मस्तिष्क कुछ पाने के लिए खुला है। मस्तिष्क निष्कर्षों द्वारा बन्द कर दिया गया है; सुझाव, निर्णय और मेरी समस्याओं द्वारा वह बन्द है, यह एक बन्द सीमित वस्तु है। जब मैं कहता हूँ कि मैं सचमुच नहीं जानता, तो सच में मैंने कुछ तोड़ दिया है, बोतल मैंने फोड़ दी है — अब मैं शैम्पेन पी सकता हूँ, अनन्त आह्लाद का शैम्पेन।

मैं निरीक्षण शुरू करता हूँ, बोतल के फूट जाने पर। तब मुझे पता चल जाता है कि प्रेम क्या है, करुणा क्या है, और करुणा से उद्भूत वह प्रज्ञा क्या है। बौद्धिकता से इसका कोई लेना-देना नहीं है।

सर, हम कभी भी उस बिन्दु पर नहीं पहुँचते जब हम कहें : मैं नहीं जानता। ठीक? आप मुझसे ईश्वर के बारे में पूछते हैं, मेरे पास तत्काल बना-बनाया उत्तर रहता है। आप मुझसे रसायनशास्त्र के संबंध में पूछते हैं। उत्तर हाज़िर — टैप (नल) खुला है।

आप समझिए, सर, मैं उन मतिमन्दों में से एक हूँ; कोई भी चीज़ मैंने पढ़ी नहीं है, सिवाय ....

शिक्षक : और वह सोचता भी नहीं है।

कृष्णमूर्ति : मस्तिष्क तो एक ढोलक की तरह है; इसमें रस्सियाँ कसी है। जब आप इसे बजाते हैं यह सही ध्वनि देता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिक्षकों के साथ परिचर्चा
१७ दिसम्बर, १९८५

शिक्षक : नया मन और अच्छा मन क्या एक ही है, मन जो अच्छाई में प्रस्फुटित हो रहा है? यदि ऐसा है, तो अच्छाई क्या है? और विशेष रूप से जीवन की सम्पूर्णता के प्रति सजगता से नये मन का क्या संबंध है? सम्पूर्ण जीवन क्या है? क्या हम इसकी छानबीन कुछ गहराई से करेंगे?

कृष्णमूर्ति : मैं नहीं कह सकता कि जीवन को आप कैसे देखते हैं। जीवन के मूल, समस्त अस्तित्व के प्रारम्भ के संबंध में आप क्या सोचते हैं? न केवल मनुष्य के, वरन् सम्पूर्ण संसार, प्रकृति, ब्रह्माण्ड और नक्षत्रों के संबंध में? सृजन क्या है? खोज क्या है हम यह नहीं पूछ रहे। खोज तो ज्ञान पर आधारित है। अधिक से अधिक खोज स्वाभाविक रूप में ज्ञान पर आधारित है। और इस सम्पूर्णता से सम्बद्ध हमारा जीवन क्या है? एक निश्चित रूप से विशेषज्ञता प्राप्त मस्तिष्क से सम्बद्ध नहीं वरन् सम्पूर्ण जगत से सम्बद्ध जो एक सम्पूर्ण गति है, जिसमें हम स्वयम्, समस्त मानवजाति शामिल है?

पहले मैं आपके साथ इसी विषय पर बात करना चाहूँगा और हमारे भौतिक मस्तिष्क — जैविक पदार्थ, खोपड़ी के भीतर का — और मन में क्या अन्तर है? अथवा क्या मस्तिष्क में मन निहित है अथवा मस्तिष्क से मन सर्वथा भिन्न है।

और अंततः अच्छाई आप किसको कहेंगे, अच्छाई के पुष्पित होने को? दृढ़ अच्छाई नहीं वरन् अच्छाई के साथ जीने को?

शिक्षक : जीवन क्या है?

कृष्णमूर्ति : हाँ, जीवन क्या है? एक किसी विशेष स्वरूप में जीवन नहीं जैसे वनमानुष, बाघ, गौरैया, पेड़ आदि में। जीवन का प्रारम्भ क्या है?

और दूसरा प्रश्न है : क्या मस्तिष्क में मन समाविष्ट है, अथवा मस्तिष्क से मन पूर्णतया अलग है? यदि मस्तिष्क में मन समाविष्ट है तब तो मन पदार्थ का ही भाग है — ठीक? स्नायुमण्डल का हिस्सा है। यह एक भौतिक गतिविधि है। और मन है निश्चित रूप से सर्वथा कुछ भिन्न।

तो जब मस्तिष्क में मन समाविष्ट है, तब वह स्नायुतंत्र का हिस्सा है; भय, उदासी,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पीड़ा, खुशी, सम्पूर्ण चेतन की जैविक प्रतिक्रिया है। वह मानवीय सृजन का एक अंश है। अगर मन विकास-प्रक्रिया का हिस्सा है तो वह हिस्सा है समय का।

शिक्षक : मैं एक प्रश्न करना चाहूँगा।

कृष्णमूर्ति : सर, आपको मुझसे अनुमति लेने की आवश्यकता नहीं।

शिक्षक : तर्क से मान लें कि हमने देख लिया कि मस्तिष्क से मन भिन्न है, पर तर्क तो स्वयम् ही मस्तिष्क का अंग है?

कृष्णमूर्ति : निःसंदेह, तर्क मस्तिष्क का अंग है, और चूँकि तर्क मस्तिष्क का हिस्सा है, अतः वह ग़लत निष्कर्ष पर पहुँच सकता है।

तो जीवन क्या है? इस समस्त ऊर्जा का उद्गम क्या है? वह क्या है जो अंकुरित होकर ऊपर आता है, बना रहा है यह सब — जगत, पृथ्वी, पहाड़, नदियाँ, जंगल, पेड़, भालू, हिरण, शेर, वनमानुष, बन्दर और हमें? क्या अच्छाई में समय निहित है? यदि अच्छाई में समय निहित है तो वह अच्छाई है ही नहीं। कृपया मुझे बताइए। आप मेरे प्रश्न को समझ रहे हैं न?

शिक्षक : सर, अभी तो उन दोनों में कोई संबंध है ऐसा नहीं लगता। वैज्ञानिक जब चीज़ों के प्रादुर्भाव के संबंध में बातें करते हैं, तो मैं समझता हूँ कि आमतौर से वही स्वीकृत सिद्धान्त होता है। एक बहुत ही बड़ी घटना हुई — बिग बैंग, एक प्रचण्ड विस्फोट हुआ, जो उत्पन्न हुआ शायद मूलभूत ऊर्जा से, जो शायद किसी अत्यन्त सूक्ष्म अणु से उत्पन्न हुआ। और इसी के बाद समस्त अनन्त चीज़ें उद्भूत हुईं, तारे, ग्रह, पृथ्वी सब कुछ। पहली दृष्टि में तो नहीं लगता कि वैज्ञानिक व्याख्या और अच्छाई के बीच कहीं कुछ संबंध है।

कृष्णमूर्ति : सर, मैं यह पूछ रहा हूँ : क्या अच्छाई में समय निहित है?

शिक्षक : चीज़ों के विकास में तो निश्चय ही समय निहित है। यह बिलकुल स्पष्ट है।

कृष्णमूर्ति : क्या अच्छाई समय का अंग है, समय द्वारा उत्पन्न अथवा लाया गया?

शिक्षक : ऐसा तो नहीं लगता, अगर हम चीज़ों के उद्गम संबंधी वैज्ञानिक विचार को देखें और इसपर विचार करें कि उसमें ज़रा भी अच्छाई निहित है। वह पूरी तरह निरपेक्ष लगता है — अच्छा, बुरा, कुछ भी नहीं।

कृष्णमूर्ति : मैं उसे समझ रहा हूँ, पर आपसे मैं एक प्रश्न पूछ रहा हूँ — वैज्ञानिक प्रश्न नहीं। प्रश्न है : यदि अच्छाई उत्पन्न होने में समय निहित है तो क्या वह थोड़ी भी अच्छाई है?

शिक्षक : यह प्रश्न तो भिन्न कोटि का लगता है।

कृष्णमूर्ति : हाँ, वह भिन्न प्रश्न ही मैं आपसे पूछ रहा हूँ। अच्छाई क्या है? अच्छाई के संबंध में आप सभी क्या सोचते हैं?

शिक्षक : लगता है अच्छाई का एक निश्चित स्वरूप माना जाता है, जो आमतौर से ख़राब अथवा बुराई के विपरीत होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृष्णमूर्ति : हाँ, सम्पूर्ण द्वैत-व्यापार। आगे बढ़िए, सर, यहाँ क्या है अच्छाई? आपकी समझ से अच्छाई क्या है?

शिक्षक : समय लगा कर अभ्यास से गुणवत्ता विकसित की जा सकती है।

कृष्णमूर्ति : मैं गुणवत्ता की बात नहीं कर रहा। मेरे विचार से गुणवत्ता तो विकसित की जाती है।

शिक्षक : सर, जब हम कहते हैं कि वह अच्छा आदमी है, आमतौर से हमारा भाव यह होता है कि वह दूसरों को कोई क्षति नहीं पहुँचाता। वह सदैव स्वार्थ के लिए, लाभ के लिए कार्य नहीं करता, आदि। यह गुण समय लगाकर विकसित किया जाता है।

कृष्णमूर्ति : क्या ऐसा है? क्या अच्छाई बुराई के विपरीत है — यदि इस शब्द का अस्तित्व है? क्या अच्छा बुरे का विपरीत है?

शिक्षक : सर, इस प्रश्न से आपका आशय है : क्या अच्छाई बुरे की प्रतिक्रिया है और समय लगाकर इसे एकत्र किया गया है?

कृष्णमूर्ति : हाँ, यह सभी इस प्रश्न में निहित है। हमारी प्रतिक्रिया, हमारी शिक्षा, हमारी संस्कृति, वातावरण; वह सब कुछ जो परम्परा है, जो कुछ भी आपने पुस्तकों आदि में पढ़ा है। हमेशा अच्छा और बुरा — हम देखते रहे हैं, अच्छा सदैव बुरे से लड़ता रहा है, प्राचीन मिस्र वासियों से लेकर आधुनिक समाज में यही है। अच्छा और बुरा सदा रहे हैं, अच्छे देवता और बुरे देवता, ख़राब लड़का और अच्छा लड़का।

मैं यह कह रहा हूँ कि यदि बुराई से अच्छा उद्‌भूत है तो वह अच्छा है ही नहीं।

शिक्षक : आमतौर से देखा जाता है इसके विपरीत, अच्छाई से पतन बुराई है।

कृष्णमूर्ति : सर, आपसे मैं पूछ रहा हूँ, क्या अच्छा बुरे से संबंधित है? क्या अच्छा बुरे का विपरीत है अथवा प्रतिक्रिया स्वरूप वह अच्छा बन गया है? आप मेरे प्रश्न को समझ रहे हैं न? अथवा अच्छाई का बुराई से कोई भी संबंध नहीं है, पूर्णतया भिन्न है वह?

शिक्षक : सर, मैं पहले प्रश्न का उत्तर दे सकूँगा, दूसरे का उत्तर देने में मैं समर्थ नहीं। पहला प्रश्न, क्या अच्छा बुरे से संबंधित है? मैं कहूँगा नहीं, क्योंकि अगर मैं अच्छा बनने की कोशिश करता हूँ तब स्वतः बुराई क़ायम रहती है।

कृष्णमूर्ति : सर, क्या आपका यह कहना है कि अति प्राचीन समय से ही कायम अच्छाई और बुराई संबंधी विचार पूर्णतया ग़लत है? हमलोग यही कह रहे हैं। आप समझ रहे हैं? आगे कहिए, सर।

शिक्षक : हाँ, आशय तो यही है।

कृष्णमूर्ति : अच्छा बुरे से टकरा नहीं सकता। ठीक? और आदमी के सम्पूर्ण इतिहास के दौर में बुरे से अच्छा लड़ता रहा है। विख्यात महान पेन्टिंग, महान कला, सम्पूर्ण मानव अस्तित्व इसी सिद्धान्त पर आधारित है। फिर आप और हम आते हैं कहते हैं, देखिए, इसमें कुछ भारी भूल है। अच्छा पूर्णतया बुरे से भिन्न है, इनमें कोई भी संबंध नहीं है; अतः वे टकरा नहीं सकते। बुराई को अच्छाई नियंत्रित नहीं कर सकती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिक्षक : प्रगति भी नहीं है।

कृष्णमूर्ति : क्या हमलोग पूर्णतया कुछ क्रांतिकारी बात कह रहे हैं? अथवा यह एक तरह की मनोगत तरंग है अथवा हमारी कल्पना है?

शिक्षक : हमारी कठिनाइयों में एक कठिनाई यह है कि ख़ास शब्दों को ख़ास तरह से इस्तेमाल करते हुए हम बढ़ रहे हैं।

कृष्णमूर्ति : हमारे समस्त धार्मिक संस्कार, हमारा सम्पूर्ण धार्मिक साहित्य, इन्हीं सबसे भरा है। स्वर्ग और नर्क, अच्छाई और बुराई की बातें सदैव कही जाती रही हैं।

अतः हमलोग क्या कुछ पूर्णतया क्रांतिकारी बात कह रहे हैं? और क्या सच है? जो कुछ क्रांतिकारी लगे, हो सकता है वह सच नहीं हो। अगर वह सच है तो उसका मस्तिष्क से कदापि कुछ भी संबंध नहीं।

शिक्षक : इसका निहितार्थ लगता है कि मानव अस्तित्व के पहले से ही अच्छाई रही है। इसका आशय यह लगता है कि ब्रह्माण्ड में अच्छाई स्वभावतः निहित लगती है।

कृष्णमूर्ति : हो सकता है।

शिक्षक : इसका अर्थ तो ऐसा ही प्रतीत होता है।

कृष्णमूर्ति : मस्तिष्क क्या है इसके संबंध में हम प्रश्न पूछ रहे हैं। मन क्या है? क्या मन मस्तिष्क का अन्तरभेदन कर सकता है?

शिक्षक : पुनः इसका अर्थ होगा कि मस्तिष्क के पूर्व से ही मन का अस्तित्व है।

कृष्णमूर्ति : निःसन्देह। अभी हम उसे प्रज्ञा कहें। क्या वह प्रज्ञा मस्तिष्क के माध्यम से संचार बना सकती है? अथवा मस्तिष्क का कोई संबंध उस प्रज्ञा से नहीं हो सकता?

शिक्षक : क्या मस्तिष्क उस प्रज्ञा से उद्भूत है?

कृष्णमूर्ति : मैं अभी उस प्रश्न के लिए तैयार नहीं हुआ हूँ। मैं आपसे प्रश्न पूछ रहा हूँ। सर, मेरी बात न सुनें। मैं आपको कुछ बता नहीं रहा; आप और मैं, हम मिलकर खोजबीन कर रहे हैं।

शिक्षक : मैं उत्तर नहीं चाह रहा।

कृष्णमूर्ति : क्या आप स्वयम् ही पता लगा रहे हैं? अथवा आप इस आदमी को सुन रहे हैं? अथवा वक्ता जो कुछ कह रहा है वह आपके देखने को स्पष्ट बना रहा है?

शिक्षक : लगता है यह प्रश्न हमारे ध्यान को ब्रह्माण्ड की ओर ले जा रहा है अथवा प्रकृति की ओर।

कृष्णमूर्ति : हम तो सच वहीं पहुँचना चाहते हैं। धीरे-धीरे। ब्रह्माण्ड - ब्रह्माण्ड के संबंध में हमारी कल्पना — क्या हमसे भिन्न है? क्या ये सभी एक हैं, एक गति — गति, अन्तरिक्ष, चन्द्रमा, सूर्य; एक अति-प्रचण्ड ऊर्जा? हमारी ऊर्जा तो बहुत सीमित है। क्या वह परिसीमन तोड़ा जा सकता है और क्या हम उस अपरिमेय, विशाल गति से अभिन्न हो सकते हैं?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिक्षक : इस अपरिमेय गति को क्या आप प्रकृति कहेंगे?

कृष्णमूर्ति : नहीं, मैं उसे प्रकृति नहीं कहूँगा। प्रकृति तो हमारा हिस्सा है।

शिक्षक : यह सम्पूर्ण गति।

कृष्णमूर्ति : क्या कोई ऐसी गति है? यह नहीं कि मैं उस गति में शामिल हो रहा हूँ, क्योंकि मैं अत्यन्त छोटा नगण्य टुकड़ा हूँ। मैं सोचता हूँ कि मैं बहुत चालाक बन सकता हूँ, मैं सोचता हूँ मैं यह कर सकता हूँ, वह कर सकता हूँ। क्या यह सब समाप्त करके उस अपरिमेय गति का अभिन्न अंग बन सकता हूँ? और मैं इसे ही अच्छाई कहता हूँ। मैं ग़लत हो सकता हूँ। खिड़की, जो अभी इतनी छोटी सँकरी है अवश्य ही टूट जानी चाहिए, और तब — बिलकुल कोई भी खिड़की नहीं। मैं नहीं कह सकता कि मैं स्वयम् को व्यक्त कर रहा हूँ।

तब जीवन क्या है? क्या वह अपरिमेय प्रज्ञा है जो है ऊर्जा सर्वोच्च, निर्बन्ध, जिसे ढाला, सिखाया नहीं गया — आधुनिक शब्द के अर्थ में — कुछ ऐसा जिसका न आदि है और न अन्त?

शिक्षक : आपका आशय क्या यह है कि समय निहित नहीं?

कृष्णमूर्ति : समय तो खोज में निहित है। अब वे लोग कैन्सर दूर करने का उपाय खोजने की कोशिश कर रहे हैं। सभी किताबें, पत्रिकायें कैन्सर दूर करने के उपाय के संबंध में बहुत कुछ कह रही हैं। आविष्कार में समय और ज्ञान निहित है, पूर्ववर्ती व्यक्ति ने जो आविष्कार किया उसपर अगला आविष्कार आधारित है। मैं आपसे सीखता हूँ, आप उससे सीखते हैं। सृजन में समय निहित हो ही नहीं सकता। मैं नहीं कह सकता, क्या आप इसे देख रहे हैं?

शिक्षक : जब आप समय के संबंध में बातें कर रहे हैं तो आपका आशय है मनोवैज्ञानिक समय से।

कृष्णमूर्ति : निःसंदेह, मनोवैज्ञानिक समय।

तो समय में अच्छाई निहित नहीं है, अतः अच्छाई उस प्रज्ञा का अंग है, और वह है शाश्वत गति। मैं शब्दों का उपयोग कर रहा हूँ, मैं इन्हें वापस ले सकता हूँ बाद में।

यहाँ मैं एक हज़ार विद्यार्थियों के साथ हूँ। शिक्षक के रूप में मैं यह देखना चाहता हूँ कि वे लोग इसे समझें। बौद्धिक रूप में नहीं, सैद्धान्तिक रूप में नहीं, किसी अद्भुत काल्पनिक विचार के रूप में नहीं, वरन इस प्रकार कि वास्तविक बदलाव आ जाए — नहीं, बदलाव नहीं — वरन इस प्रकार कि उनके जीवन में वास्तविक मौलिक परिवर्तन घटित हो जाए।

शिक्षक : जब आप कहते हैं अपरिमेय प्रज्ञा, तो प्रज्ञा शब्द में सजगता का कुछ गुण निहित है।

कृष्णमूर्ति : ऐसा नहीं भी हो सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिक्षक : पर तब उस प्रज्ञा की गुणवत्ता क्या होगी?

कृष्णमूर्ति : संभवतः उसमें कोई भी गुणवत्ता नहीं होती। वह तो केवल प्रज्ञा है। आप क्या कर रहे हैं इसे आप देखते हैं। आप देखते हैं। आप इसे एक गुण, एक महत्व दे रहे हैं ताकि आप इसे समझ सकें। हो सकता है इसे समझने में मैं समर्थ न होऊँ। मैं जानता नहीं। आप देखिए, यह कुछ अविश्वसनीय हो सकता है अथवा नहीं हो सकता है, वह कुछ भी नहीं हो। मैं उसे उस मन से नहीं पा सकता जो कहता है, 'तुम मुझे अपनी योग्यता दिखलाओ, मुझे अपनी डिग्री दिखाओ।'

तो एक शिक्षा सम्मेलन के पश्चात् हमें क्या करना है? आमूल परिवर्तन लाने के लिए, शिक्षक के रूप में, मुझे क्या करना है। बदलाव नहीं, इसमें तो अन्तर है। बदलाव का भाव है एक से दूसरा, इस अवस्था से उस अवस्था में जाना।

शिक्षक : सर, क्या हम वहाँ लौटेंगे जहाँ से थोड़ा पहले हम आगे बढ़ गए थे? हम आबद्ध हैं, उस परिसीमन को समाप्त करने की बात हमने की, उसके समापन और कुछ भिन्न घटित होने की। क्या हम उसपर वापस आएंगे, क्योकि लगता है वहाँ कुछ महत्वपूर्ण था पर हम जल्द ही आगे बढ़ गए?

कृष्णमूर्ति : मेरा मस्तिष्क शिक्षित किया गया है, वह परम्परा में रहा है, चाहे वह प्राचीन परम्परा हो अथवा आधुनिक परम्परा, मेरे मस्तिष्क को ठोक-पीट कर विकृत बना दिया गया है, सदियों से संस्कारों द्वारा इसमें सूचनाएँ भरी गयी हैं। इसे तोड़ा जा सकता है? क्या यही है आपका प्रश्न? आप निश्चिन्त दिखाई दे रहे हैं।

शिक्षक : हाँ। वे सारी चीज़ें जिनके कारण मस्तिष्क अच्छाई से कोई भी संबंध बना लेना असंभव पा रहा है।

कृष्णमूर्ति : हम इसे एक शब्द में ला दें : चेतना। क्या हम वैसा कर सकते हैं?

शिक्षक : हाँ।

कृष्णमूर्ति : अथवा परिसीमन अथवा संस्कारबद्धता, क्या ये सभी समाप्त किये जा सकते हैं? समय लगाकर नहीं — यह मुख्य बात है। अगर मैं समय लगाता हूँ तो मैं आ गया, उसी वृत में। आप इसे देख रहे हैं न?

शिक्षक : हाँ, सर।

कृष्णमूर्ति : तो इसका समापन निश्चय ही आवश्यक है, तत्क्षण। समय की तुलना में अथवा उससे संबंध बनाकर नहीं।

शिक्षक : सर, आपका आशय मनोवैज्ञानिक समय से है।

कृष्णमूर्ति : हाँ, निःसंदेह। सामान्य समय से मनोवैज्ञानिक समय भिन्न है। मैं नहीं कह सकता कि आप इसे देख रहे हैं या नहीं? क्या आप इसे देख रहे हैं? समय जो घड़ी बता रही है, सूरज बता रहा है, समय जो भौतिक दूरी तय करने में लगता है। हम एक दूसरे को नहीं जानते, पर अगर हम प्रायः मिलते रहें, तो हम जान जाएंगे। अथवा हो सकता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है कि हम एक दूसरे को तत्क्षण जान लें। तो भौतिक समय और मनोवैज्ञानिक समय अलग-अलग हैं। हम मनोवैज्ञानिक समय की बात कर रहे हैं। बीज से पौधा बनने में, शिशु को युवा बनने में समय लगता है। हम मनोवैज्ञानिक जगत में भी वही समय लागू करते हैं। मैं यह हूँ, पर मैं वह बनूँगा; मैं बहादुर नहीं हूँ, पर मुझे समय दीजिए मैं बहादुर बन जाऊँगा। चित्त (मन) के क्षेत्र में भी हम समय की बात करते हैं।

शिक्षक : चेतना का परिसीमन क्या समाप्त किया जा सकता है?

कृष्णमूर्ति : यही तो प्रश्न है। क्या हमारा सीमित मस्तिष्क — अर्थात् ज्ञान — चित्त के, मन के सम्पूर्ण आयाम को समाप्त कर सकता है? क्या मस्तिष्क— सीमित मस्तिष्क, इसे समाप्त कर सकता है? चाहे यह कितना भी विकसित हो जाए यह मस्तिष्क सदैव सीमित रहेगा।

शिक्षक : अपने ज्ञान द्वारा।

कृष्णमूर्ति : यह अपनी शारीरिक बनावट द्वारा सीमित है, अपने भौतिक वातावरण द्वारा, अपनी परम्परा, शिक्षा, ज्ञान, कष्ट, भय, चिन्ता द्वारा ही यह परिसीमित है। क्या वह परिसीमन खुद-ब-खुद ही समाप्त हो सकता है?

शिक्षक : अथवा कोई और चीज़ इसे समाप्त कर सकती है?

कृष्णमूर्ति : थोड़ा ठहरिए, सर। एक प्रश्न पर रहिए। क्या सीमित मस्तिष्क अपने परिसीमन को स्वयम् समाप्त कर सकता है?

शिक्षक : सर, आपने कहा कि अच्छे का कोई भी संबंध बुरे से नहीं है।

कृष्णमूर्ति : यह सब आरम्भ न करें। हम केवल एक प्रश्न पर स्थिर हों : क्या मस्तिष्क की लघुता अपने स्वयम् की नगण्यता को, तुच्छता को समाप्त कर सकती है? अथवा कोई दूसरा तत्व है जो इसे समाप्त करेगा? ईश्वर? विष्णु? मस्तिष्क ईश्वर का आविष्कार कर ले सकता है, और प्रतीक्षा कर सकता है कि वह सब कुछ सुलझा देगा। क्या मैं स्वयम् को स्पष्ट कर पा रहा हूँ? आप दोनों ने वह प्रश्न रखा है, प्रश्न रखने के पश्चात् आपके मस्तिष्क की क्या अवस्था है? उस प्रश्न को रखने के पश्चात् आपके मस्तिष्क में क्या घटित हुआ है? प्रश्न महत्वपूर्ण है, उसमें गुरुता और भारी महत्ता है। बताइए मुझे, उस प्रश्न को रखने के पश्चात् आपके मस्तिष्क की क्या स्थिति है? बड़ी ही महत्वपूर्ण है इसकी छानबीन।

शिक्षक : मेरा मन ईश्वर पर निर्भर नहीं है। आश्वस्त भी नहीं है।

कृष्णमूर्ति : क्या आप ग़ौर से सुन रहे हैं, आप एक प्रश्न पूछते रहे हैं। हो सकता है वह बहुत ही महत्वपूर्ण हो, अथवा इसका ज़रा भी कोई महत्व नहीं हो। इसलिए मैं स्वयम् से पूछ रहा हूँ : इस प्रश्न को रखने के पश्चात् आपके मस्तिष्क की क्या स्थिति है?

शिक्षक : यह प्रश्न क्या मस्तिष्क की लघुता, अपने स्वयम् की नगण्यता को, तुच्छता को समाप्त कर सकता है? सुनने के बाद, मेरे मस्तिष्क में पहले आशंका उत्पन्न हुई, मुझे संदेह है कि नगण्य मस्तिष्क स्वयम् की नगण्यता को समाप्त कर सकेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृष्णमूर्ति : आपका मस्तिष्क प्रयास कर रहा है।

शिक्षक : तब उसने कहा, 'मैं नहीं जानता'।

कृष्णमूर्ति : पर फिर भी आप कुछ कह रहे हैं। आपका मस्तिष्क फिर भी प्रयास कर रहा है। कह रहा है, मैं नहीं जानता, मैं प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

शिक्षक : सर, आप प्रतीक्षा कर रहे हैं, इन शब्दों का उपयोग आपने क्यों किया?

कृष्णमूर्ति : परेशान न हों। आपका मस्तिष्क प्रयास में है, तो क्या घटित हो रहा है? केवल ग़ौर से देखिए, सर। मुझसे यह प्रश्न पूछा गया है। इस प्रश्न को मैं किस प्रकार लेता हूँ? मैं इस प्रश्न की क्या व्याख्या करता हूँ? यदि मैं प्रश्न की गहराई में, व्याख्या में जा रहा हूँ तो मैं ग़ौर से सुन नहीं रहा। तो, क्या मैं सचमुच प्रश्न को ध्यानपूर्वक सुन रहा हूँ? अथवा जैसे ही प्रश्न लाया जाता है, तो क्या मैं अविलम्ब कुछ प्रतिक्रिया करता हूँ? वैसी स्थिति में मैं ज़रा भी सुन नहीं रहा होता। यह केवल मौखिक वार्ता होती है और मैं बगल में से गुज़र जाता हूँ।

तो, क्या मैं सुनता हूँ? इसमें निहित है मौन का एक निश्चित गुण, एक विचारशून्य गति, विचारशून्य अवलोकन। जब कोई गंभीर प्रश्न लाया जाता है तो उस समय आपके मस्तिष्क की क्या अवस्था होती है? यदि आपका मस्तिष्क थोड़ा भी सक्रिय है, तब उस प्रश्न का कोई अर्थ नहीं। क्या मैं स्वयम् को स्पष्ट कर रहा हूँ?

किसी ने वह प्रश्न मुझसे किया। महत्व इसका है कि मैं प्रश्न को किस प्रकार लेता हूँ, उत्तर को नहीं। मैं अत्यन्त सावधानीपूर्वक सुनता हूँ। प्रश्न है : 'क्या लघु, संकीर्ण, संस्कारबद्ध मस्तिष्क अपने संस्कारों को समाप्त कर सकता है?' मैं प्रश्न को ग़ौर से सुन रहा हूँ। मैं अभी तक प्रश्न को ध्यान से सुन रहा हूँ। क्या मैं सचमुच ध्यान से सुन रहा हूँ अथवा केवल कह रहा हूँ कि मैं सुन रहा हूँ? यदि मैं सचमुच ग़ौर से सुन रहा हूँ तो मस्तिष्क में कोई भी गति नहीं रहती। निःसंदेह, स्नायु संबंधी प्रतिक्रिया होती रहती है — कान से सुनना आदि। पर मौखिक बातचीत के अलावा और कोई गति नहीं है। मैं अभी भी ध्यान से सुन रहा हूँ — अर्थात् वह समाप्त हो रहा है। मैं नहीं कह सकता, जो कुछ मैं कह रहा हूँ उसके संबंध में आप जानते हैं अथवा नहीं।

शिक्षक : क्योंकि मस्तिष्क प्रयास नहीं कर रहा।

कृष्णमूर्ति : इसे दूसरे रूप में न लाएं। मैं नहीं कह सकता, क्या मैं स्वयम् को स्पष्ट बना रहा हूँ — अर्थात् ग़ौर से सुनने की क्रिया ही उस ख़ास चीज़ के समापन की अवस्था है।

तो क्या वह घटित हो रहा है? यदि वह आपके साथ घटित हो रहा है, तब शिक्षक के रूप में उन विद्यार्थियों में, जिनके प्रति हम जवाबदेह हैं, ग़ौर से सुनने का भाव किस प्रकार जागृत करें? जो कुछ मुझे कहना है, उसे वे ध्यानपूर्वक सुन सकें, इसके लिए मैं उनकी सहायता किस प्रकार करूँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिक्षक : यहाँ पर कठिनाई है। सामने आकर, खुद से यदि आप किसी चीज़ की व्याख्या करते हैं तो लगता है कि बात स्पष्ट हो गई। पर अगले दिन सुबह....

कृष्णमूर्ति : इसका अर्थ हुआ कि आपने ध्यान से सुना ही नहीं। क्या आपने नाग की आवाज़ सुनी है? जब मैं यहाँ अकेले घूमा करता था तो उनकी आवाज़ प्रायः सुनता था। मैं उन्हें देखा करता था। और अभी मैं एक नाग को जानता हूँ। कल भी मैं किसी नाग को देख लूँगा। यह एक वास्तविक तथ्य है। ठीक? इसके लिए एक तरह की संवेदनशीलता, ध्यानशीलता, सजगता आवश्यक है।

यह सब सुन लेने के बाद, इन्हें अपने रक्त में ग्रहण कर लेने के बाद, शिक्षक के रूप में — यह नहीं कि मैंने आपको केवल सुन भर लिया, और इसलिए सीख लिया, केवल यही नहीं — वरन् वह सब सुन लेने के पश्चात्, मैं क्या करूँ कि विद्यार्थी मेरी बातों पर ध्यान दें? गणित में, किताब में, जीव-विज्ञान, इतिहास आदि में वे आपकी बातें सुनते हैं।

मान लें कि मैं क्लास में आता हूँ और कहता हूँ, कृपया बैठिए और ध्यानपूर्वक मेरी बातों को सुनिए। वे लोग खिड़की के बाहर देख रहे हैं, एक दूसरे के बाल खींच रहे हैं। वैसी मनोदशा में क्या वे सुन सकेंगे? अथवा, मैं यह कहूँ, दस मिनट तक बिलकुल शांत रहें? पर ये दस मिनट द्वन्द्व में गुज़र जाते हैं, मस्तिष्क कहता है कि मुझे निश्चय ही सुनना चाहिए, यह कौन वाहियात आदमी है जो मुझे ध्यान से सुनने का निर्देश दे रहा है? और ऐसी ही अन्य बातें। तो मैं किस प्रकार उन्हें मनाऊँ ताकि वे मेरी बात ध्यान से सुनें?

सर, कैसे आप अपने विद्यार्थियों को ध्यान की ओर लाएंगे? कोई डॉक्टर अथवा मनोचिकित्सक क्या करता है कि उसका रोगी उसकी बात सुनने लगता है? रोगी को पूरे समय यह बात घेरे रहती है कि वह रोग मुक्त हो जाए। उसका रोग विचित्र है, झक की उत्तेजना (मैनिया) है, इत्यादि । वह उससे मुक्त हो जाना चाहता है। आप उससे जो कहेंगे वह करेगा। लेकिन यहाँ वैसी बात नहीं है। यहाँ हम सभी समान हैं, कोई चिकित्सक नहीं, कोई आपको बतलाने वाला नहीं। हम सभी ध्यान से सुनने की अवस्था में, खोजबीन की स्थिति में है। हम किसी व्यक्ति को कैसे प्रभावित करें कि वह दूसरे की बात सुन लें? इस प्रश्न का उत्तर दीजिए।

शिक्षक : दो तरीक़ों में से कोई भी एक, सर। या तो हम उसका मन बहलाव करें, अथवा उसपर दबाव डालें।

कृष्णमूर्ति : हाँ। दबाव, संघर्ष, अथवा उसे पीटना — मैं इसमें से कोई भी नहीं चाहता।

शिक्षक : अथवा मन बहलाव?

कृष्णमूर्ति : वह भी एक ही बात है। मैं चाहता हूँ कि वे सुनें ताकि यह उनके रक्त का हिस्सा बन जाए। तो, सर, कैसे आगे बढ़ा जाए।

शिक्षक : क्या निश्चय ही हमें उनकी बात नहीं सुननी चाहिए? जो उन्हें कहना है उसे?

कृष्णमूर्ति : सर, उनके पास कहने के लिए अधिक कुछ नहीं। वे लोग झगड़ रहे हैं, बातें कर रहे हैं, कह रहे हैं, मुझे यह दो, वह दो आदि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप शिक्षक हैं, तो मैं आपसे पूछ रहा हूँ, सचमुच वे मेरी बातें ध्यानपूर्वक सुनें, इसके लिए मैं क्या करूँ? विचारिए, हम एक-दूसरे को सुनने लगे, बहुत समय लगा इसमें। आपमें ध्यान से सुनने की चाह है, छानबीन की इच्छा है। आप सोचते हैं कि कृष्णमूर्ति को कुछ कहना है, हमने उन्हें यहाँ आमन्त्रित किया है। अतः, पहले ही संवाद बनता रहा है। पर उन विद्यार्थियों के साथ बात भिन्न है। यहाँ आने के लिए उनपर दबाव डाला गया है। उनके माता-पिता ऋषि वैली की प्रशंसा करते हैं। वे यहाँ आते हैं। और यही क्रम चल रहा है। यहाँ, आपके साथ, बात भिन्न है। उन्हें प्रभावित करने के लिए आप कुछ करना नहीं चाहते। यह बात अद्‌भुत है। आप स्वयम् से वह प्रश्न करें और देखिए कि आप क्या कर सकते हैं।

शिक्षक : सर, मैं सोचता हूँ, यह बहुत साफ है कि हम इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे सकते; और फिर भी यह लगता है, यहाँ हमारे होने का, करने का जो अर्थ है उसकी यह केन्द्रीय, मूल बात है। इस सम्मेलन का सचमुच यह एक बहुत ही अच्छा सारांश है।

कृष्णमूर्ति : आप जो कह रहे हैं वह मैं समझ रहा हूँ।

शिक्षक : शायद हम यहाँ प्रारम्भ पर लौट आए हैं — और इसके लिए ऐसे कार्य की आवश्यकता है जो सृजनात्मक हो।

कृष्णमूर्ति : जब आपने यह कह दिया है, इसे यहीं छोड़ दें। इसपर कार्य करें। वह सृजनात्मक ज्ञान से अथवा पूर्व अनुभव से उत्पन्न नहीं है। इसे स्मरण रखें। यदि वह ज्ञान का उपयोग करता है तो वह खोज हो गई उसी बात को करने का केवल एक नया तरीक़ा।

हम बहुत ही गंभीर प्रश्न रख रहे हैं। मैं सोचता हूँ, हो सकता है हर चीज़ के संबंध में प्रबल रूप से ढेर सारी सूचनाएँ हम रखते हैं। हो सकता है हम इतने अधिक शिक्षित हैं कि कुछ भी नया घटित होने के लिए जगह ही नहीं है; स्मृतियों से, संस्मरणों से हम पूर्ण हैं। संभव है ये सारी बातें अवरोधक हों। अब, यह नहीं पूछिए, हम इससे किस प्रकार मुक्ति पाएंगे? तब तो हम उसी बात पर वापस आ गए।

मान लें आप मुझे कहते हैं कि मैं झूठ बोलता हूँ और मैं झूठ बोलने का कारण बताता हूँ, वह एक और झूठ हुआ। झूठ शब्द सुनते ही मैं प्रतिक्रिया दिखलाता हूँ। मैं सोचता हूँ मैं ईमानदार हूँ। हो सकता है वैसा नहीं हूँ मैं, पर मैं सोचता हूँ मैं ईमानदार हूँ। वे दो भिन्न बातें हैं। अथवा मैं सोचता हूँ कि मैं तो सत्यवादी हूँ पर घटना इस प्रकार की घटती है कि मैं झूठ पर चलने वाला बन जाता हूँ। खोज का यह क्षण — यह देख लेना कि मैं झूठा हूँ — हर चीज़ को परिवर्तित कर देता है, मैं यही कहना चाहता हूँ। वह मुझे परिवर्तित कर देता है इतना कि मैं बेईमान नहीं रह जाता। मैंने इस पर प्रयोग किया है। अतः यह संभव है। नहीं, मैं ऐसा कह भी नहीं सकता।

यदि आप मुझे कहते हैं कि मैं झूठा हूँ और इसके कारण भी नहीं बताते, तो क्या मैं आपको सुन सकता हूँ? ऐसे में सुनने की क्रिया में रुकावट आ जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिक्षक : अवश्य ही। यदि वक्तव्य सही है तो रुकावट आ जाती है। पर यदि मैं झूठा नहीं, तो रुकावट नहीं आती।

कृष्णमूर्ति : नहीं सर। 'झूठ' शब्द ही मेरे लिए काफी है। आप समझ रहे हैं न? मैं जानता हूँ मैंने झूठ क्यों बोला है : कायरता की वजह से, इसलिए भी क्योंकि मैं नहीं चाहता कि मेरे बारे में कोई ऐसी-वैसी बात उजागर हो जाए। और जब आप मुझे झूठा कहते हैं तो मैं वास्तविक तथ्य को देखता हूँ कि ऐसा ही तो है। मैं उन सब कारणों की छानबीन नहीं करता कि मैंने क्यों झूठ बोला है आप मुझसे कहते हैं 'आप झूठे हैं'। और मैं आपको सुनता हूँ यह कहे बगैर कि आप सही हैं या गलत। मैं कोई बाधा निर्मित नहीं करता। आप अपनी बात कहते हैं। कुछ घटित होता है। यही एकमात्र ऐसी क्रिया है जो अ-क्रिया है।

शिक्षक : लेकिन वह वक्तव्य अपने आपमें गलत हो सकता है।

कृष्णमूर्ति : गलत हो सकता है। लेकिन मेरे लिए काफी है यह देखने के लिए कि इसमें सत्यता है या नहीं।

अब, चार दिन की समाप्ति पर हम कहाँ है? क्या हम साथ-साथ हैं? आपने क्या समझा है? क्या हम सबके लिए यह समझ एक समान है? या हम अलग-अलग होते हुए यह कोशिश कर रहे हैं कि सभी स्कूलों को एकीकृत किया जाए? इसका अर्थ यह है कि वे हमेशा अलग-अलग रहेंगे। या क्या हममें ऐसी भावना है कि हम सभी एक हैं, ताकि हमारी शिक्षा अमरीकी, भारतीय या अंग्रेजी स्थितियों पर आधारित न हों?

क्या हम माँगों की आपूर्ति करने वाला एक संगठन मात्र हैं? या हमें एक भिन्न मानवीय गुणवत्ता, मस्तिष्क की एक भिन्न मानवीय गतिविधि को जन्म देना है? क्या हम इस कार्य में साथ-साथ हैं? क्या इस कार्य के लिए हममें एकता है? क्या हम साथ-साथ हैं, इतने कि कोई हमें अलग नहीं कर सकता? उसी स्थिति में एक ऐसे कार्य का जन्म हो सकता है जो कि पूरी तरह भिन्न हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मद्रास वार्ता

१ जनवरी, १९८६

काम करने के दिन यहाँ पर इतने लोगों को देखना, कुछ अद्‌भुत सा लगता है। नहीं? पिछली बार जब हम यहाँ मिले थे — शनिवार था — हमने चर्चा की थी कि प्रेम क्या है। यदि आप यहाँ थे तो शायद आपको याद होगा। हमलोग सब मिलकर — मेरा अभिप्राय है साथ — इस पूरे मसले के संबंध में खोज-बीन कर रहे हैं; यह अत्यंत जटिल है। यदि आप बुरा न मानें, तो आपको विचार करना है — केवल सहमत नहीं हो जाना है। इस विचारने में आपको अपने मस्तिष्क का इस्तेमाल ज़ोर से करना होगा। तो हमलोग एक साथ इस प्रश्न की छानबीन करने जा रहे हैं कि प्रेम क्या है — साथ-साथ आप और हम एक ही मार्ग पर साथ चल रहे हैं; आप वक्ता का केवल अनुमोदन नहीं कर रहे और यह नहीं कह रहे हैं, 'हाँ, सुनने में अच्छा लग रहा है' — उपनिषद् का, गीता का भी यही कहना है, इत्यादि सब बकवास है।

सर्वप्रथम, अपने अनुभवों, निष्कर्षों, विचारों के संबंध में किसी बात को स्वीकार न करें — मेरी भी नहीं। मैं तो एक पथिक हूँ, मेरा महत्व नहीं है। हम — आप और मैं— मिलकर पता लगाने जा रहे हैं कि क्या स्पष्ट है, क्या स्पष्ट नहीं है। हमलोग मिलकर जाँच कर रहे हैं, संदेह कर रहे हैं, वक्ता का क्या कहना है उसे हम कत्तई भी स्वीकार नहीं कर रहे हैं। यह मार्गदर्शन, निर्देश या सहायता की ख़ातिर कोई भाषण नहीं है; यह तो अत्यधिक नादानी की बात होगी। उस तरह की सहायता तो हमें पीढ़ी-दर-पीढ़ी मिलती रही है और तिसपर भी हम जहाँ थे वहीं हैं। हम जैसे अभी हैं वहीं से आरम्भ करना है, अतीत में हम कहाँ थे अथवा भविष्य में हम क्या होंगे उससे नहीं। अभी हम जैसे हैं भविष्य में भी वैसे ही होंगे। हमारा लोभ, हमारा द्वेष, हमारी ईर्ष्या, हमारे प्रबल अन्धविश्वास, किसी को पूजने की हमारी कामना — अभी तो हम यही हैं।

इस प्रकार हम मिलकर एक बहुत लम्बे पथ पर चल रहे हैं। ऊर्जा चाहिए इसके लिए। और हम इस मसले पर ग़ौर करने जा रहे हैं कि प्रेम क्या है। बहुत गहरी और सूक्ष्म छानबीन हम इसपर भी करें कि — ऊर्जा क्या है। आपकी प्रत्येक चेष्टा ऊर्जा पर आधारित है। अभी जब आप वक्ता को सुन रहे हैं, ऊर्जा लगा रहे हैं आप। घर के निर्माण में, वृक्ष लगाने में कोई भी चेष्टा या अंग सचालन में, बात करने में, इन सबके लिए ऊर्जा की आवश्यकता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। कौवे की काँव-काँव, सूर्योदय और सूर्यास्त ; यह सबकुछ ऊर्जा है। जन्म लेते ही बच्चे का क्रन्दन ऊर्जा का ही अंग है। वायलिन बजाना, बोलना, विवाह करना, यौन क्रिया – धरती की हर बात में ऊर्जा आवश्यक है।

अतः हम पूछते हैं : ऊर्जा क्या है? यह है वैज्ञानिकों के प्रश्नों में से एक। और वे कहते हैं, "ऊर्जा पदार्थ है।" हो सकता है कि वह पदार्थ हो, पर उसके पहले, मूलभूत ऊर्जा क्या है? उसका उद्‌गम स्रोत क्या है? किसने इस ऊर्जा का सृजन किया? सावधान, यह नहीं कह दें – ईश्वर, और ऐसा कहकर चल दीजिए। ईश्वर को मैं नहीं मानता ; वक्ता का कोई ईश्वर नहीं है। इतना स्पष्ट है न?

तो, ऊर्जा क्या है? हम पता लगा रहे हैं, वैज्ञानिकों के कथन को हम स्वीकार नहीं कर रहे। और, यदि आप कर सकें, तो जो कुछ भी प्राचीन लोगों ने कहा है, हम सब को त्याग दें – छोड़ दें उन्हें, राह के किनारे छोड़ कर हम साथ-साथ आगे बढ़ेगें।

आपका मस्तिष्क, जो एक पदार्थ है, दस लाख वर्षों के एकत्रित अनुभवों का भण्डार है, और उस तमाम विकास का अर्थ है ऊर्जा। और मैं स्वयम् से पूछ रहा हूँ – आप स्वयम् से पूछ रहे हैं – क्या कोई ऊर्जा है जो ज्ञान के क्षेत्र में अर्थात् विचार के क्षेत्र में चालित और आबद्ध नहीं हैं? क्या कोई ऐसी ऊर्जा है जो विचार की गतिविधि से परे है?

विचार आपको प्रबल ऊर्जा देता है – प्रत्येक सुबह नौ बजे आफ़िस जाने के लिए, पैसा अर्जित करने के लिए, ताकि आप बेहतर घर बना लें। अतीत के संबंध में विचार, भविष्य का विचार, वर्तमान की योजना बनाना, इस तरह विचार प्रचण्ड ऊर्जा देता है। धनी बन जाने के लिए आप प्रबल अग्निशिखा के वेग सदृश कार्य करते हैं। विचार ऊर्जा उत्पन्न करता है। अतः अब हमें विचार के स्वरूप का ही गहराई से पता लगाना है।

विचार ने इस समाज को योजनाबद्ध किया है, इसने इस संसार को विभाजित कर दिया है – साम्यवादी, समाजवादी, जनतंत्रवादी, गणतंत्रवादी ; स्थलसेना, जलसेना, वायुसेना – न केवल देश से निकाल बाहर करना वरन् वध करना भी उनका कार्य है। इसप्रकार हमारे जीवन में विचार बड़ा ही महत्वपूर्ण है, क्योंकि विचार के विना हम कुछ भी नहीं कर सकतेः हरचीज़ विचार की प्रक्रिया में निहित है। तो विचारणा क्या है? आप पता लगाइए, मेरी बात ही नहीं सुनिए। वक्ता ने तो इस पर बहुत चर्चा की है, इसलिए उसकी किताबें नहीं देखिए। यह नहीं कहिए, यह सब मैं पहले सुन चुका हूँ। यहाँ आप समस्त किताबों को, अब तक आपने जितनी सारी चीज़ें पढ़ी हैं सबको भुला दीजिए। यह इसलिए कि इस पर प्रत्येक बार बिल्कुल नये ढंग से हम ग़ौर करें।

विचारणा ज्ञान पर आधारित है। और हमने असीम ज्ञान एकत्र कर लिया है : कैसे हम एक दूसरे को बेच डालें, एक दूसरे का शोषण किस प्रकार करें, ईश्वरों का और मंदिरों का निर्माण कैसे करें, आदि हम जानते हैं।

बिना अनुभव के ज्ञान नहीं हो सकता। अनुभव – स्मृति के रूप में मस्तिष्क में संग्रहित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञान — यही विचार का प्रारम्भ है। अनुभव सदैव सीमित है, क्योंकि आप इसमें और, और जोड़ रहे हैं। इसप्रकार अनुभव सीमित है, ज्ञान सीमित है, स्मृति सीमित है। अतः विचार सीमित है। ईश्वर, जिन्हें विचारों ने निर्मित किया है — आपके ईश्वर, आपकी विचारणा सदैव सीमित रहेंगे। और सीमितता से हम उद्‌गम की, ऊर्जा की खोज करने का प्रयास करते हैं — आप समझ रहे हैं न? हम उद्‌गम, सृष्टि का प्रारम्भ खोजने की कोशिश करते हैं।

विचार ने भय का निर्माण किया है। ठीक? आगे चलकर क्या होगा, क्या आप इससे भयभीत नहीं हैं? — नौकरी कहीं खो न दें? परीक्षा में असफल न हो जाएँ, सफलता की सीढ़ी पर शायद ऊपर न चढ़ पाएं? और आप भयभीत हैं कि आप अपनी कामनाओं की पूर्ति नहीं कर पाए, अकेले खड़े रह पाने में असमर्थ हैं, आप स्वयम् में एक ताक़त नहीं बन पाए। आप हमेशा किसी न किसी पर निर्भर रहते हैं, और यह बात प्रचण्ड भय उत्पन्न करती है।

हमारे नित्य जीवन का यह तथ्य है कि हम भयभीत लोग हैं। और हम सुरक्षा चाहते हैं इसी से भय उत्पन्न होता है। भय प्रेम को विनष्ट कर देता है, जहाँ भय है। वहाँ प्रेम का अस्तित्व हो ही नहीं सकता। भय स्वयम् में ही एक प्रबल ऊर्जा है। और प्रेम का भय से कोई संबंध नहीं; वे एक-दूसरे से पूर्णतया अलग हैं।

तो भय का उद्‌गम क्या है? उनसब पर संदेह करना ही जीवन्तता है। विचारणा ने भय उत्पन्न किया है। भविष्य, अतीत के संबंध में विचार, वातावरण से शीघ्रतापूर्वक समायोजित नहीं हो पाना, शायद कहीं कुछ न हो जाए, मेरी पत्नी कहीं मेरा परित्याग न कर दे अथवा कहीं उसकी मृत्यु न हो जाए — तब मैं बिलकुल अकेला रह जाऊँगा — मैं तब क्या करूँगा? मेरे अनेक बच्चे हैं; इसलिए पुनर्विवाह किसी से कर लेना बेहतर होता; कम से कम वह मेरे बच्चों की देखभाल तो करेगी — ऐसे ही और विचार। यह है अतीत पर आधारित भविष्य के संबंध में विचारणा। इस प्रकार विचार और समय इसमें निहित हैं — भविष्य के संबंध में विचार, भविष्य अर्थात् आनेवाला कल। और वह विचारणा ही भय का कारण है। इसप्रकार समय और विचार भय के केन्द्रीय तत्त्व हैं।

तो जीवन के प्रधान तत्त्व हैं, समय और विचार। समय दोनों ही, भीतरी — मैं यह हूँ, मैं वह बनूँगा — और बाहरी। और समय है विचार; ये दोनों ही गतियाँ हैं।

तब मृत्यु, पीड़ा, चिन्ता, विपत्ति, एकाकीपन, हताशा — इन तमाम भयावह स्थितियों से मैं गुज़रा हूँ — क्या स्थान है इनका मेरे जीवन में? तमाम तीव्र पीड़ाओं से अपने जीवन में आदमी गुज़रता है — बस यही है हमारी ज़िन्दगी? मैं पूछ रहा हूँ : क्या आपकी ज़िन्दगी बस इतनी ही है?

यही है आपका जीवन। आपकी चेतना जिन अंतर्वस्तुओं से निर्मित है, वे हैं आपका सोच, आपकी परम्परा, आपकी शिक्षा, आपकी जानकारी, आपका भय, आपका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकेलापन। आप सावधानी से ग़ौर करके देख लीजिए। आपकी व्यथा, आपका दर्द, आपकी चिन्ता, आपका अकेलापन, आपका ज्ञान — प्रत्येक मनुष्य की साझा अवस्था है। यह है यथार्थ। पृथ्वी का हर आदमी पीड़ा, कष्ट, चिन्ता, झगड़े, प्रलोभन, इसकी कामना, इसकी उपेक्षा आदि से गुज़रता है। अतः आप एक व्यक्ति नहीं हैं; आप एक पृथक् प्राण, एक पृथक् आत्मा नहीं हैं। आपकी चेतना वही है — शारीरिक रूप में ही नहीं, वरन् मनोवैज्ञानिक रूप में, उसी रूप में जो सम्पूर्ण मानवजाति की चेतना है।

हम पता लगाने की, छानबीन करने की कोशिश कर रहे हैं कि जीवन क्या है। हम कह रहे हैं कि जबतक किसी भी प्रकार का भय है, कोई भी दूसरी उदात्त चीज़ अस्तित्व में नहीं आयेगी। अगर किसी भी प्रकार की आसक्ति है, दूसरा अस्तित्व में आयेगा ही नहीं — और वह दूसरा है प्रेम।

अतः हम ग़ौर करने जा रहे हैं कि संसार क्या है, और मृत्यु क्या है। हम इनका पता लगा रहे हैं। हम सभी मृत्यु से इस कदर भयभीत क्यों हैं। क्या कभी आपने गहराई से पता लगाया है? यह प्रश्न बड़ा ही महत्वपूर्ण है हमलोगों ने कहा कि जीवन है यही सब व्यर्थ की बातें — जानकारी, प्रतिदिन नौ बजे आफ़िस जाना आदि, विवाद, संघर्ष, इसको नहीं चाहना, उसकी कामना रखना। जीवन क्या है हम जानते हैं, पर गंभीरता सें हमने कभी भी यह पता नहीं लगाया कि मरण क्या है।

क्या है मरण? निश्चय ही मृत्यु एक असाधारण चीज़ होनी चाहिए! प्रत्येक चीज़ आपसे ले ली जाती है : आपकी आसक्ति, आपका पैसा, आपकी पत्नी, आपके बच्चे, आपका देश, आपके अन्धविश्वास, आपके तमाम गुरु, आपके समस्त भगवान। आपकी यह कामना हो सकती है कि आप इन सबों को दूसरी दुनिया में लेते जाएं, पर आप ऐसा कर ही नहीं सकते। अतः मृत्यु कहती है : पूर्णतया अनासक्त हो जाएं। मृत्यु जब आती है तो ठीक यही होता — किसी भी व्यक्ति पर आप निर्भर नहीं रहते — कुछ भी नहीं रह जाता। फिर भी आप शरीर धारण करेंगे, ऐसा आप सोच सकते हैं। यह कल्पना बहुत ही आराम पहुँचाने वाली है, पर यह यथार्थ नहीं।

हमलोग पता लगाने की कोशिश कर रहे हैं, जीवित रहते हुए मरने का क्या अर्थ है — आत्महत्या कर लेना नहीं; उस तरह की मूर्खता के संबंध में मैं बात नहीं कर रहा। मृत्यु का अर्थ क्या है, मैं खुद ही पता लगाने की कोशिश कर रहा हूँ। जिसका अर्थ है, क्या खुद अपने समेत आदमी ने जो कुछ भी निर्मित किया है — सबों से आदमी पूरी तरह मुक्त हो सकता है?

मरने का अर्थ क्या है? प्रत्येक चीज़ का परित्याग। मृत्यु आपको अत्यधिक तेज़ छूरे से काटकर तमाम आसक्तियों से, आपके ईश्वर से, देवताओं से, अंधविश्वासों से, आराम की कामना से, अगले जीवन आदि से बिलकुल अलग कर देती है। मैं पता लगाने जा रहा हूँ कि मरण का अर्थ क्या है, क्योंकि यह उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि जीवन। तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम किस प्रकार पता लगाएंगे, सचमुच में, सैद्धान्तिक रूप में नहीं, क्या अर्थ है मरण का? मैं सचमुच पता लगाना चाहता हूँ, वैसे ही जैसे आप पता लगाना चाहते हैं। मैं आपके लिए बातें कर रहा हूँ, अतः सो मत जाइए। मरण का क्या अर्थ है? यह प्रश्न कीजिए आप स्वयम् अपने से। हम युवा हैं या अधिक वृद्ध हैं, यह प्रश्न सदैव कायम है। इसका अर्थ है पूरी तरह मुक्त हो जाना, आदमी ने जो भी गढ़ा है उन सबों से पूरी तरह अनासक्त हो जाना, अथवा आपने जो भी निर्मित किया है उससे पूर्णतया मुक्त हो जाना। कोई आसक्ति नहीं, कोई भविष्य नहीं, कोई अतीत नहीं। जीवित रहते हुए मृत हो जाना — इसके सौन्दर्य को, इसकी श्रेष्ठता को, इसकी असाधारण शक्ति को आप नहीं देख रहे। इसका अर्थ क्या है, आप समझ रहे हैं? आप जीवित हैं, लेकिन प्रत्येक क्षण आपका मरण हो रहा है, और इसप्रकार पूरे जीवन में आप किसी भी चीज़ से आसक्त नहीं। यही है अर्थ मरण का।

इस प्रकार मरण है जीवन। आप समझ रहे हैं? जीवित होने का अर्थ है प्रत्येक दिन अपनी आसक्ति की प्रत्येक चीज़ का आप परित्याग करते जा रहे हैं। क्या आप यह कर सकते हैं? बड़ा ही स्पष्ट, सरल यथार्थ है, पर विस्मयकारी हैं इसके गूढ़ार्थ। इसप्रकार प्रत्येक दिन नया दिन है। प्रत्येक दिन आपकी मृत्यु हो रही है और आप पुनर्जीवित हो रहे हैं। इसमें विस्मयकारी ओजस्विता है, ऊर्जा है, क्योंकि आप अब किसी भी चीज़ से भयभीत नहीं हैं। ऐसी कोई भी चीज़ नहीं जो आपको आहत कर सके। आहत होने का अस्तित्व ही नहीं।

आदमी ने जो कुछ भी गढ़ा है उन सबों का पूर्णतया परित्याग करना होगा। यही है मरण का अर्थ। क्या आप ऐसा कर सकते हैं? क्या आप ऐसा प्रयास करेंगे? क्या आप इसका प्रयोग करेंगे? महज़ एक दिन नहीं; वरन् प्रत्येक दिन। नहीं, श्रीमान्, आप ऐसा नहीं कर पाएंगे, इसके लिए आपका मस्तिष्क प्रशिक्षित नहीं है, क्योंकि आपकी शिक्षा, आपकी परम्परायें, आपकी पुस्तकें और आपके प्रोफेसरों द्वारा आपका मस्तिष्क गहराई से प्रशिक्षित है, गंभीर रूप से संस्कारित है। इसके लिए आवश्यक है यह पता लगाना कि प्रेम क्या है। प्रेम और मरण बिलकुल साथ-साथ कार्यशील हैं। मृत्यु कहती है, मुक्त हो जाओ, मुक्त हो जाओ आसक्ति से, आप अपने साथ कुछ भी नहीं ले जा सकते। और प्रेम कहता है, प्रेम कहता है — इसके लिए कोई शब्द नहीं। प्रेम का अस्तित्व मुक्त अवस्था में ही है। आपकी पत्नी से, नयी लड़की से, अथवा नये पति से मुक्ति नहीं वरन् विपुल शक्ति, ओजस्विता, पूर्ण मुक्ति की ऊर्जा की अनुभूति।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वार्ता

४ जनवरी, १९८६

मैं जो कुछ कह रहा हूँ क्या आप उसमें भाग लेंगे? आप उसे केवल मान ही न लें बल्कि क्या उसमें साथ-साथ भाग लेंगे? उस बारे में केवल सोचें या हल्के तौर पर ध्यान भर न दें। शुरू में ही एक-दो बातें साफ़ हो जानी चाहिए। यहाँ कोई व्यक्ति-पूजा नहीं है। वक्ता को इन सबसे वितृष्णा है। यदि आप व्यक्तिगत रूप से किसी व्यक्ति की उपासना करते हैं अथवा उसे ईश्वर मानते हैं तो वक्ता जो कुछ कह रहा है उस सबका खंडन हो जाता है। महत्वपूर्ण यह है कि वह जो कुछ कह रहा है, आप उसे सुनें, उसमें हिस्सा बटाएँ। केवल सुनें ही नहीं बल्कि वह जो कुछ कह रहा है उसमें वस्तुतः सहभागी हों।

हमने जीवन, जीवन की जटिलता, और जीवन के आरम्भ के विषय में चर्चा की है। जीवन क्या है? इस अद्भुत धरती, मनोरम संध्या और प्रातः कालीन सूर्य, नदियाँ, घाटियाँ, पर्वत और भूमि की गरिमा जो कि नष्ट की जा रही है इन सबका स्रोत क्या है? यदि आप कहते हैं कि इन सबका मूल ईश्वर है, तब तो बात ही ख़त्म हो जाती है, फिर तो आप प्रसन्नतापूर्वक सहज भाव से आगे बढ़ते जाएँ क्योंकि आपने समस्या का समाधान खोज लिया है। पर, यदि आप प्रश्न उठाना शुरु करते हैं, संशय करते हैं — जैसा कि किया जाना चाहिए — तो सभी ईश्वर, सभी गुरु — मैं इस कबीले का नहीं हूँ — और मानव ने अपने लम्बे विकास के इतिहास में जो कुछ जुटाया है, उसके बारे में प्रश्न करें। तो यह प्रश्न बनता है : आरम्भ कहाँ है? मूल क्या है? यह सब कैसे हुआ? मैं आशा करता हूँ कि आप ऐसा पूछ रहे हैं। आप वक्ता को मात्र सुनें ही नहीं बल्कि वार्ता में भागीदार हों, तोड़ कर देखें, उसे खंड-खंड में तोड़ें। वह जो कुछ कह रहा है कृपया, उसे स्वीकार न कर लें। वह आपका गुरु नहीं है, न वह आपका नेता है न आपका सहायक। यह आधार और यह है आज की चर्चा का आरम्भ।

यह अत्यंत गम्भीर वार्ता है। जब तक आपका दिमाग वस्तुतः सक्रिय नहीं है, तब तक इस बात का आशंका है कि आप इसे समझ न पाएँगे। ऐसे में आपका और वक्ता का असंख्य शब्दों को सुनना व्यर्थ रहेगा। परन्तु यदि हम साथ-साथ लम्बी यात्रा पर निकलें — काल की दृष्टि से नहीं, विश्वास या निष्कर्ष या सिद्धान्त की दृष्टि से भी नहीं — बल्कि अपने-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने जीवन के तौर-तरीके की, भय-अनिश्चितता, असुरक्षा की व मनुष्य ने असामान्य कम्प्यूटरों सहित जो सब आविष्कार किये हैं, उनका अत्यन्त सावधानी से परीक्षण करें कि बीस लाख वर्षों के बाद हम कहाँ है। हम सब किस ओर जा रहे हैं, — किसी सिद्धान्त रूप में नहीं, और न ही जैसा कि किसी पुस्तक में लिखा हो, भले ही वह पुस्तक कितनी ही पवित्र क्यों न हों? हमारा आरम्भ कहाँ से है? आरम्भ और अन्त दोनों एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। आप सहमत न हो जाएँ, पता लगाएँ। हो सकता है कि न आरम्भ हो और न अन्त ही। हम साथ-साथ इसकी खोज करेंगे।

काल के आदि से लेकर अब तक मानव ने धर्म की सीमा में ही सोचा है। धर्म क्या है? मानव ने सदा ही इस संसार से कुछ अधिक की कामना की है। तारे, सूर्य, चन्द्र और अपनी ही रचनाओं की उपासना की है। इसके निमित्त प्राचीन मन्दिरों, मस्जिदों, गिरजाघरों में बहुत प्रयास, चेष्टा, ऊर्जा लगाई गई। उन लोगों ने इन पर विशाल ऊर्जा खर्च की। मानव की वह क्या भावना थी जिसने इस संसार एवं इसकी दैनिक पीड़ा, काम, फैक्टरी जाना, दफ्तर जाना, सफलता की सीढ़ी पर चढ़ना, धन कमाना, लोगों को प्रभावित करना, प्रभुत्व प्राप्त करने का प्रयास — इन सबसे कुछ परे की कामना की? क्या आप इससे सहमत हो रहे हैं? यह एक तथ्य है, चाहे आप सहमत हों या न हों। वे सभी किसी न किसी रूप में शक्ति चाहते हैं, वे सब बातों के केन्द्र में — दिल्ली में या यहाँ या अन्य स्थान पर — होना चाहते हैं।

हम पूछते हैं — धर्म क्या है? आदमी ने किस कारण से मन्दिर को इतना सारा धन दे डाला? किस कारण उसने यह सब किया? वह कौन सी ऊर्जा थी जो इन सबमें लगाई गई? क्या यह भय था? क्या यह स्वर्ग से, चाहे स्वर्ग से आपका जो भी अर्थ हो, कुछ पाने के लिए था। क्या पुरस्कार पाना मूल में है? आप पुरस्कार चाहते हैं, आप विनिमय में कुछ चाहते हैं। आप दिन में तीन या पाँच बार प्रार्थना करते हैं और आशा करते हैं कि बदले में कोई सत्ता आपको रेफ्रिजरेटर से मोटर कार तक, या एक अच्छी पत्नी या अच्छा पति देगी, अथवा आप अनुग्रह की प्रतीक्षा करते हैं या ऐसा कुछ जो आपको उम्मीद बँधाए या जिसका आप सहारा ले सकें। सभी धर्मों का यही इतिहास रहा है। ईश्वर और धन सदा साथ-साथ रहे हैं। कैथॉलिक गिरजावरों के पास विशाल कोष है। यह आपके यहाँ भी है। विभिन्न मंदिरों में है पूजा और उपासना और वह सब तुच्छता है, वस्तुतः यह सब निरर्थक है। हम गहराई के साथ पूछताछ करके यह पता लगाने का प्रयास कर रहे हैं कि धर्म क्या है। ज़ाहिर है यह सब पैसा ऐंठने की कला नहीं है। हम पूछ रहे हैं : वह क्या है जो अनाम है, जो सर्वोच्च प्रज्ञा है; जिसका कि हमारी सारी प्रार्थनाओं से कोई सम्बन्ध नहीं है, हमारे सभी ईश्वरों, मन्दिरों, मस्जिदों, गिरजाघरों से भी नहीं? यह सब बनावटी है। कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति इन्हें किनारे कर देगा, किन्तु सनकी न बनेगा, केवल संशयी न बनेगा बल्कि वह एक सचमुच सक्रिय दिमाग वाला होगा, ऐसा दिमाग जो केवल वाह्य जगत् में ही नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपितु प्रत्येक वस्तु की जाँच करता है, क्या हममें ऐसा दिमाग है, जो अपने ही विचारों की, चेतना की, अपनी पीड़ा व दुःख आदि की परीक्षा करता है? क्या हमारा ऐसा मस्तिष्क है?

अब हम मस्तिष्क ('ब्रेन') को मन ('माइंड') से अलग कर लें। मस्तिष्क हमारे समस्त स्नायुओं का केन्द्र है। कॉलेज, विश्वविद्यालय से प्राप्त समस्त ज्ञान, सिद्धान्त, मत, पूर्वाग्रह यह सब ज्ञान इसी खोपड़ी में है। सभी विचार, सभी भय यहाँ है। क्या मस्तिष्क मन से भिन्न है? अगर वक्ता जो कुछ पूछ रहा है उस पर आप गंभीरता से ध्यान दे रहे हैं तो प्रश्न है, क्या मस्तिष्क और मन भिन्न हैं? आपका मस्तिष्क जो कि आपके संचित ज्ञान के साथ कपाल के भीतर है, केवल आपका ही नहीं बल्कि आपके पूर्वजों आदि का भी है और बीस लाख वर्षों से जो कुछ उसमें बन्द है — क्या उस मस्तिष्क में और मन में कोई भेद है? मस्तिष्क हमेशा सीमित रहेगा। आप तुरन्त न सहमत हो जाइए। यह अत्यन्त गम्भीर बात है। क्या मन इससे भिन्न है, मेरी चेतना से, मेरे दैनिक कार्य-कलापों से, मेरे भय से, चिन्ताओं, अनिश्चितताओं, दुःख, पीड़ा और सभी सिद्धान्तों से जो आदमी ने सब चीज़ों के बारे में बना कर इकट्ठा किये हैं? मन का मस्तिष्क से सम्बन्ध नहीं है। मन मस्तिष्क को संदेश भेज सकता है, मस्तिष्क मन को नहीं। कृपया आप इसे मान न लें, ऐसा न करें। वक्ता कह रहा है कि मस्तिष्क हमारी समस्त चेतना का ठौर है, हमारे विचारों का, हमारे भय आदि का। साथ ही साथ ईश्वर, ईश्वर विषयक सभी सिद्धान्त और अविश्वास ये सब कुछ वहाँ हैं। यह निर्विवाद सत्य है। मस्तिष्क जो कि ज्ञान के द्वारा, अनुभव के द्वारा, परम्परा द्वारा जकड़ा हुआ है, मन के साथ किसी प्रकार का संवाद नहीं कर सकता, क्योंकि मन तो मस्तिष्क के क्रिया कलापों से पूर्णतः बाहर है। मन तो मस्तिष्क से सम्प्रेषण कर सकता है पर मस्तिष्क मन के साथ संप्रेषण नहीं कर सकता क्योंकि मस्तिष्क अनन्त कल्पना कर सकता है, मस्तिष्क अनाम की कल्पना कर सकता है, मस्तिष्क कुछ भी कर सकता है। मन विराट है, क्योंकि यह आप का नहीं है, यह आपका मन नहीं है।

हम साथ-साथ खोज करने जा रहे हैं, कृपया साथ-साथ को ध्यान में रखें, धर्म के स्वरूप की ही खोज नहीं बल्कि कम्प्यूटर की भी। आप जानते हैं, कम्प्यूटर क्या है? यह एक यन्त्र है, यह स्वयं को पूर्वयोजित कर सकता है, यह अपना स्वयं का कम्प्यूटर उत्पन्न कर सकता है, पिता कम्प्यूटर पुत्र कम्प्यूटर को पैदा कर सकता है और पुत्र पिता से बढ़ कर हो सकता है। आप मानें न मानें, ऐसा है — यह सर्वविदित है। इसमें कुछ गुह्य नहीं है। अतः आप इसे सावधानी से देखें यह कम्प्यूटर एक प्रकार से वह सब कर सकता है जो मानव कर सकता है। यह आपके सभी ईश्वरों, सभी सिद्धान्त, कर्मकाण्ड को बना सकता है। यह इन मामलों में आपसे बढ़-चढ़ कर है। तो कम्प्यूटर दुनिया में आ गया है, यह आपके मस्तिष्क को बदलने जा रहा है। आपने आनुवंशिक इंजीनियरी के सम्बन्ध में सुना होगा। वे आपके समस्त व्यवहार को परिवर्तत करने की चेष्टा कर रहे हैं, भले ही आपको अच्छा लगे या न लगे। ऐसी है आनुवंशिक इंजीनियरी। वे आपकी विचारधारा को परिवर्तित करने का प्रयास कर रहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब आनुवंशिक इंजीनियरी और कम्प्यूटर मिल जाते हैं, तो आप क्या हैं? मानव के रूप में आप क्या हैं? आपका मस्तिष्क परिवर्तित किया जाने वाला है। आपके व्यवहार की दिशा बदली जाने वाली है। वे भय को पूर्णतः हटा सकते हैं, दुःख को हटा सकते हैं, आपके सभी देवताओं को हटा सकते हैं। वे ऐसा करने जा रहे हैं। आप भय में न रहें। इस सब की परिणति युद्ध में अथवा मृत्यु में होगी। वस्तुतः ऐसा ही दुनिया में हो रहा है। एक ओर आनुवंशिक इंजीनियरी, दूसरी ओर कम्प्यूटर, और वे जब मिलते हैं, जैसा कि अनिवार्य है, तो मानव के रूप में आप क्या हैं? वस्तुतः आपका मस्तिष्क अभी एक यंत्र है। आप भारत में उत्पन्न हुए हैं और कहते हैं : मैं भारतीय हूँ। आप उसमें बद्ध हैं। आप एक यंत्र हैं। कृपया अपमानित न महसूस करें, मैं आपका अपमान नहीं कर रहा हूँ। आप यंत्र हैं, जो कम्प्यूटर के समान आवृत्ति करता है। ऐसी कल्पना न करें कि आपमें कुछ दिव्य है, पवित्र है, शाश्वत है। ऐसा होता तो क्या बात थी? कम्प्यूटर इसे भी आपसे कहेगा। तो आदमी का क्या होगा? आपका क्या होगा?

हमें यह भी पता लगाना है — यह अत्यन्त गंभीर विषय है, आप सहमत या असहमत न हों, मात्र सुनें — कि सर्जन क्या है? शिशु का सर्जन नहीं, यह बहुत सरल है, न ही कुछ ऐसे-वैसे नया गढ़ना। आविष्कार सर्जन से पूर्णतः भिन्न है। आविष्कार ज्ञान पर आधारित है। इंजीनियर जेट को विकसित कर सकते हैं। गति ज्ञान पर आधारित हैं, और आविष्कार भी ज्ञान पर आधारित है। अतः हम आविष्कार को सर्जन से अलग देखें। इसके लिए आप में समग्र ऊर्जा उपेक्षित है, तल तक पहुँचने की आपकी क्षमता। आविष्कार अनिवार्यतः ज्ञान पर आधारित है। मैं घड़ी में सुधार कर सकता हूँ, मेरे पास एक नया यंत्र हो सकता है। सभी आविष्कार ज्ञान पर, अनुभव पर आधारित है। आविष्कार निश्चय ही सीमित है, क्योंकि वह ज्ञान पर आधारित है। ज्ञान सदा ही सीमित है, अतः आविष्कार सदा सीमित होंगे। भविष्य में जेट हवाई जहाज़ नहीं होंगे, बल्कि कुछ और होगा, जो दो घंटे में दिल्ली से लास एंजिलिस पहुँचेगा। अर्थात् आविष्कार पूर्व ज्ञान पर आधारित है, जो कि क्रमशः विकसित किया गया है। किन्तु यह सर्जन नहीं है।

तो सर्जन क्या है? जीवन क्या है? वृक्ष में जीवन, छोटी सी घास में जीवन, वह नहीं जिसका वैज्ञानिक लोग आविष्कार करते हैं बल्कि जीवन का आरंभ, वह वस्तु जो जिया करती है? आप उसे मार सकते हैं, तब भी वह अन्य में है। आप सहमत या असहमत न हों बल्कि आप यह देखें कि हम जीवन के आरंभ के विषय में पता लगा रहे हैं। हम परम तत्व के सम्बन्ध में पता लगाने जा रहे हैं — ऐसा कुछ जो सचमुच अद्‌भुत है। यह कोई इनाम नहीं है कि जिसे घर ले जाकर आप इसका इस्तेमाल करें।

आप ध्यान ('मेडिटेशन') से क्या समझते हैं? ध्यान क्या है? इस शब्द का सामान्य भाषा शब्दकोश में अर्थ है — चिंतन करना, विचार करना, एकाग्रचित्त होना, एकाग्रचिता सीखना, अपनी बुद्धि को यहाँ-वहाँ भटकने न देना। क्या यही है जिसे आप ध्यान कहते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं? सहज बनिए, सच्चे बनिए? सो ध्यान क्या है? प्रतिदिन निश्चित समय पर कमरे में जा कर और शान्त बैठ कर दस मिनट या आधा घंटा ध्यान करना? क्या ध्यान एकाग्रचित्तता या किसी अच्छी चीज़ के बारे में सोचना है? ध्यान के लिए कोई भी सचेतन प्रयास आपके कार्यालय के अनुशासन सरीखा है क्योंकि आप कहते हैं कि यदि मैं ध्यान करूँगा तो मेरा मन शान्त होगा या मैं किसी दूसरी स्थिति में पहुँच जाऊँगा। ध्यान शब्द का अर्थ मापना भी है, जिसका आशय है तुलना करना। इस प्रकार आपका ध्यान यांत्रिक हो जाता है क्योंकि आप किसी चित्र, किसी प्रतिमा अथवा विचार पर एकाग्र होने के लिए ऊर्जा लगा रहे हैं और इस प्रकार का ध्यान विभाजन पैदा करता है। ध्यान सर्वदा ही विभाजक है, आप किसी विशेष वस्तु पर एकाग्र होना चाहते हैं पर विचार दूर भटकते रहते हैं। तब आप कहते हैं कि आपको दूर-दूर नहीं भटकना चाहिए और आप वापस लौट आते हैं। ऐसा आप दिन भर या आधा घंटा दुहराते हैं। तब आप बाहर निकलते हैं और कहते हैं कि आपने ध्यान किया है। ध्यान का सभी गुरुओं द्वारा, सभी शिष्यों द्वारा समर्थन किया गया है। यह ईसाई विचार है — "मैं प्रभु में विश्वास करता हूँ, मैं प्रभु के लिए स्वयं का उत्सर्ग कर रहा हूँ, अपनी आत्मा की रक्षा के लिए प्रार्थना करता हूँ।" क्या यही सब ध्यान है? मैं इस प्रकार के ध्यान के बारे में कुछ नहीं जानता। यह एक प्रकार की उपलब्धि जैसा है कि यदि मैं आधा घंटा ध्यान करता हूँ तो मैं बेहतर महसूस करता हूँ। या क्या कोई पूर्णतः भिन्न प्रकार का ध्यान भी है? वक्ता जो कुछ कहता है उसे आप स्वीकार न करें, किसी कीमत पर भी नहीं। वक्ता कहता है कि यह ध्यान है ही नहीं। यह तो केवल प्राप्ति की प्रक्रिया भर है। एक दिन में आप एकाग्र नहीं हो पाते, आप को एक मास भी लग सकता है और तब आप कहते हैं "हाँ, मुझे मिल गया" — यह तो क्लर्क का मैनेजर बनने के समान है। तो क्या कोई भिन्न प्रकार का ध्यान है जो कि चेष्टा नहीं है, जिसमें मापना नहीं है, जो नित्यचर्या नहीं है, जो यांत्रिक नहीं है? क्या ऐसा कोई ध्यान है जिसमें तुलना का भाव न हो अथवा जिसमें दंड और पुरस्कार न हो? क्या ऐसा ध्यान है जो विचार पर आधारित न हो, विचार जो कि माप, काल आदि है?

कोई कैसे उस ध्यान को स्पष्ट कर सकता है, जिसमें मापना नहीं है, जिसमें कोई प्राप्ति नहीं है, जो नहीं कहता — " मैं यह हूँ, लेकिन मैं वैसा हो जाऊँगा?" 'वह' चाहे ईश्वर अथवा फ़रिश्ता ही क्यों न हो। क्या ऐसा ध्यान है जिसे संकल्प शक्ति से कुछ लेना-देना नहीं है — ऐसा संकल्प जो कहता है — मैं ध्यान करूँ? क्या ऐसा ध्यान है जो प्रयास नहीं है? वक्ता कहता है कि ऐसा है। आपको इसे स्वीकार नहीं करना। हो सकता है कि वह बकवास कर रहा हो, लेकिन वह तार्किक दृष्टि से देखता है कि प्रचलित ध्यान आत्म-सम्मोहन है, स्वयं से छल है। और जब आप छल करना बन्द करते हैं, सभी यांत्रिक प्रक्रिया समाप्त करते हैं, तो क्या कोई भिन्न प्रकार का ध्यान है? और दुर्भाग्यवश वक्ता कहता है — हाँ, है। यह कुछ ऐसा है जो पूर्णतः शान्त है। पहले अत्यन्त नम्रता से, बहुत नम्रता से आरंभ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करें, अत्यन्त सौम्यता से, इस प्रकार कि उसमें प्रयास न हो कि "मै यह अवश्य करूँ।" इसके लिए न केवल ज़बर्दस्त एकाकीपन ज़रूरी है, बल्कि कुछ और भी। मैं उसे आपको न बताऊँगा। यदि मैं आपसे इसका वर्णन करूँगा तब तो आप वर्णन पर ही चले जाएँगें। यदि मैं इसका वर्णन करूँ, तो वह असली चीज़ नहीं है। चन्द्रमा का वर्णन चन्द्रमा नहीं है, हिमालय का चित्र हिमालय नहीं है, अतः मैं वर्णन न करूँगा। यह तो आप पर निर्भर है कि आप वैसा करें या न करें या अपने ही तरीके से अपनी ख़ास उपलब्धियों के लिए दंड और पुरस्कार वग़ैरह के लिए ध्यान करें। इस प्रकार ध्यान किसी प्रकार का प्रयास, प्राप्ति या विचारणा नहीं है, इसमें मस्तिष्क शान्त है। इच्छा शक्ति से, किसी इरादे से, किसी निष्कर्ष से, अनर्गल तरीकों से उसे शान्त बनाया गया है, ऐसा नहीं, बस वह शान्त है। और शान्त होने के कारण उसमें अनन्त अवकाश, आकाश है। क्या आप इन्तजार कर रहे हैं कि मैं और अन्वेषण करूँ और जो बताऊँ उस पर आप चलें? आप कैसे लोग हैं?

क्या आपका मस्तिष्क कभी शान्त हुआ है? मैं आप से पूछ रहा हूँ। आपका मस्तिष्क सोच रहा है, डर रहा है, ऑफिस के काम के बारे में सोच रहा है, परिवार के बारे में, आपके लड़के-लड़कियाँ क्या करेंगे? आप सोच में हैं, सोच जो कि काल और विचार है। क्या आपका मस्तिष्क कभी शान्त होता है? ड्रग्स, व्हिस्की या नाना प्रकार के उपचारों से शान्त नहीं। जब आप किसी चीज़ को मानते हैं तो वह भी नशे जैसा ही है — और आप कहते हैं: 'हाँ, यह बिलकुल ठीक है, कुछ ने ऐसा कहा है इसलिए यह बिलकुल ठीक है।' इस प्रकार आप हमेशा अपने को बेहोश करते रहते हैं। इसलिए आप में इस प्रकार की ऊर्जा नहीं है जो असीम में प्रवेश के लिए अपेक्षित है।

तो सर्जन क्या है? इसका आविष्कार से कोई भी सम्बन्ध नहीं है। अतः सर्जन, मूल, आरम्भ क्या है? जीवन क्या है? बताएँ कि आप इस बारे में क्या सोचते हैं। जीवन क्या है? ऑफिस जाना, सेक्स और संतान, या संतान हो न हो फिर भी सेक्स, वगैरह, वगैरह। जिन्दगी क्या है? वह क्या चीज़ है जो सीमेन्ट के बीच से निकले घास के तिनके को ज़िन्दगी देती है? हममें ज़िन्दगी क्या है? वे वस्तुएँ नहीं जिनसे हम गुज़रा करते हैं — सत्ता, पद, प्रतिष्ठा, यश या अपयश। यह सब जीवन नहीं है, यह तो जीवन का नाश है। तो जीवन क्या है।

आप मुझे क्यों सुन रहे हैं? अगर आप सचमुच सुन रहे हैं, तो मुझमें ऐसा क्या है कि आप मुझे सुनते हैं? आपके सुनने के पीछे प्रयोजन क्या है? आप चाहते क्या हैं? आप की इच्छा क्या है? इच्छा के पीछे कोई प्रयोजन होता है। इच्छा क्या है? संवेदन इच्छा का एक हिस्सा है — क्या ऐसा नहीं है? मैं इस सुन्दर अथवा बुरी घड़ी को देखता हूँ — यह एक संवेदन है। देखने से संवेदन होता है। उस संवेदन से विचार आता है और उसकी प्रतिकृति निर्मित करता है। यानी मैं उस घड़ी को देखता हूँ जो सुन्दर लगती है, मैं उसे पाना चाहता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हूँ। देखने का संवेदन, फिर विचार का आना और उस संवेदन की प्रतिक्रिया रचना, बस उसी क्षण इच्छा उत्पन्न होती है। यह बिलकुल सहज है।

क्या कोई मस्तिष्क है — आपका मस्तिष्क जो कि कलुषित नहीं है, वातावरण, दूषित परम्परा, समाज और अन्य सब इसी तरह की चीज़ों से? जीवन का मूल क्या है? क्या आप मुझसे उत्तर पाने की प्रतीक्षा में हैं? यह अत्यन्त गम्भीर विषय है, कोई मज़ाक नहीं, क्योंकि हम उसका पता लगाने का प्रयास कर रहे हैं जिसका कोई नाम नहीं है, अन्त नहीं है। मैं उस चिड़िया को मार सकता हूँ पर वहाँ दूसरी चिड़िया भी है। मैं सभी चिड़ियों को नहीं मार सकता क्योंकि दुनिया में वे बहुतेरी हैं। तो हम जानना चाहते हैं कि पक्षी कैसे बनता है। इन सब की पृष्ठभूमि में सर्जन क्या है? क्या आप इस आशा में हैं कि मैं इसका वर्णन करूँ, इसकी गहराई में जाऊँ? क्या आप चाहते हैं कि मैं इसकी छानबीन करूँ? क्यों?

(एक श्रोता) : सर्जन क्या है समझ पाने के लिए?

आप ऐसा क्यों पूछ रहे हैं? क्या इसलिए कि मैंने पूछा? कोई भी वर्णन कभी भी मूल का वर्णन नहीं कर सकता। मूल अनाम है, मूल पूर्णतः शान्त है, यह भनभनाता हुआ शोर नहीं है। सर्जन अत्यन्त पवित्र है, जीवन की यह अत्यन्त पावन वस्तु है। यदि आपने जीवन को अस्त-व्यस्त कर रखा है, तो परिवर्तन करें, आज ही परिवर्तित करें, न कि कल। यदि आप अनिश्चित हैं, तो पता लगाएँ कि क्यों आप अनिश्चित हैं और निश्चित हों। यदि आपकी विचारणा सीधी-साफ नहीं है तो उसे वैसा बनाइए। सीधे, साफ़ सोचें, तर्कपूर्ण ढंग से सोचें। जब तक यह तैयारी नहीं है, यह ठीक-ठाक नहीं है, तब तक आप सर्जन के संसार में प्रवेश नहीं कर सकते।

103180

अब यहीं अन्त होता है : "इट एंड्स" (ये दो शब्द ठीक-ठीक सुनाई नहीं पड़ते, जैसे कि बोले न गए हों, सिर्फ साँसों में हों।)

यह अन्तिम वार्ता है। क्या आप कुछ देर साथ-साथ शांत होकर बैठना चाहते हैं? ठीक है, शान्ति से कुछ देर बैठें।

पुस्तकालय
पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

GURUKUL KANGRI LIBRARY		
	Signature	Date
Acces on		
		16-6-99
	RE	19.6.99
	RE	19.6.99
Filing		24.6.99
E A.R		13/7/99
Any other		18.6.99
Checked		19.6.99

ARCHIVES DATA BASE
2011 - 12

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar